एमएएचआई – 501

मास्टर ऑफ आर्ट्स (हिस्ट्री)

प्रथम सेमेस्टर

विश्व का इतिहास: 16वीं सदी के प्रारंभ से 1776 ईस्वी तक

अध्ययन मण्डल

अध्यक्ष,

कुलपति,

उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,हल्द्वानी

अध्ययन मण्डल के सदस्यों के नाम

1. प्रोफेसर गिरिजा प्रसाद पाण्डे, निदेशक समाज विज्ञान विद्याशाखा, उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी
2. प्रोफेसर रामेश्वर प्रसाद बहुगुणा, इतिहास विभाग एवं संस्कृति विभाग, जामिया मिल्लिआ इस्लामिय विश्वविद्यालय , दिल्ली
3. प्रोफेसर शन्तन सिंह नेगी , इतिहास एवं पुरातत्व विभाग, एच.एन.बी. गढ़वाल केन्द्रीय विश्वविद्यालय,गढ़वाल
4. प्रोफेसर वी.डी.एस. नेगी , इतिहास विभाग, कुमाऊँ विश्वविद्यालय, एस.एस.जे. परिसर, अल्मोड़ा
5. डॉ. मदन मोहन जोशी, समन्वयक इतिहास विभाग, उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी

पाठ्यक्रम समन्वयक

डॉ. मदन मोहन जोशी

इकाई लेखन

इकाई एक-यूरोप में सामन्तवाद का पतन और पूंजीवाद का आरंभःनरोत्तम विनीत,दयाल सिंह कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय,नई दिल्ली

इकाई दो-यूरोपीय पुनर्जागरणः नरोत्तम विनीत,दयाल सिंह कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय,नई दिल्ली

इकाई तीन-भौगोलिक खोजें, औपनिवेशीकरण और दास-व्यापारः डॉ.रमा जैसवाल,डी-170,गामा 1ए, ग्रेटर नौएडा,उत्तर प्रदेश

इकाई चार -यूरोप में वाणिज्यवाद और व्यापारिक क्रांतिः डॉ.रमा जैसवाल,डी-170,गामा 1ए, ग्रेटर नौएडा,उत्तर प्रदेश

इकाई पांच -धर्म सुधार आन्दोलनःतबस्सुम निगार,इतिहास एवं संस्कृति विभाग, जामिया मिल्लिया विश्वविद्यालय,दिल्ली

इकाई छह -वैज्ञानिक क्रांतिःशिखा पंवार,सेण्टर फॉर हिस्टोरिकल स्टडीज,जवाहर लाल नेहरू विश्वविद्यालय,दिल्ली

इकाई सात -यूरोपीय निरंकुश राष्ट्रीय राज्यःडॉ.एस.बी.सिंह, एस.वी.पी.जी.कॉलेज,सलोन,रायबरेली,उत्तर प्रदेश

इकाई आठ -इग्लैण्ड में संसदीय संस्थाओं का विकास: डॉ.रमा जैसवाल,डी-170,गामा 1ए, ग्रेटर नौएडा,उत्तर प्रदेश

इकाई नौ -प्रबोधनः डॉ. मदन मोहन जोशी, इतिहास विभाग, उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी

इकाई दस -अमेरिकी क्रान्ति एवं उसका महत्वः डॉ.सिराज मुहम्मद, इतिहास विभाग एम.बी. स्नातकोत्तर महाविद्यालय,हल्द्वानी

संपादन

अनुवाद

आई.एस.बी.एन.	:
कॉपीराइट	: उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय
प्रकाशन वर्ष	:
Published by	: उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी, नैनीताल-263139
Printed at	:

सर्वाधिकार सुरक्षित। इस प्रकाशन का कोई भी अंश उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय की लिखित अनुमति लिए बिना मिमियोग्राफ अथवा किसी अन्य साधन से पुन: प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

इकाई एकः सांमतवाद का पतन और पूंजीवाद का प्रारंभ

1.1 प्रस्तावना

1.2 उद्देश्यः

1.3 सांमतवाद का पतन

1.4 सामंतवाद के पतन के कारण

1.4.1 सांमतों के मध्य अविराम युद्धों की श्रृंखला

1.4.2 नये हथियारों का अविष्कार

1.4.3 किसान विद्रोह

1.4.4 व्यापार की भूमिका

1.4.5 मुद्रा–व्यवस्था का उदय

1.4.6. प्रौद्योगिकी और भूमि तथा श्रम की उत्पादकता

1.4.7. जनसंख्या में वृद्धि

1.4.8. पुनर्जागरण और धर्मसुधार

1.5 सारांश

1.6 शब्दावली

1.7 संदर्भ ग्रंथ सूची

1.8 निबंधात्मक प्रश्न

1.1 प्रस्तावना

'फ्युडल' (सामंती) शब्द की उत्पत्ति लैटिन शब्द फियाडेलिस (Feodalis) से हुई है परंतु मध्ययुगीन यूरोप में इस शब्द का प्रयोग कानूनी अर्थ में किया जाता था। 'सामंतवाद' शब्द का प्रचार मुख्यतया 18वीं शताब्दी के फ्रांसीसी दार्शनिक बूलैंवीयै (Boulaiuvilliers) और मौन्टेसक्यू (Montesquieu) के द्वारा किया गया। इस शब्द का प्रयोग मध्ययुग के दौरान छोटे–छोटे राजकुमारों और अधिपतियों की संप्रभुता में साझेदारी को व्याख्यायित करने के लिए कर रहे थे। कुल मिलाकर सामंतवाद एक राजनीतिक ढॉचा या सामाजिक स्वरूप है जो 9वीं शताब्दी और 13वीं शताब्दी के बीच पश्चिमी और मध्य यूरोप में एक महत्त्वपूर्ण प्रणाली के रूप में मौजूद थी।

जिस प्रकार से सामंतवाद के विकास का एक लंबा एवं जटिल इतिहास रहा है उसी प्रकार इसका पतन भी एक लंबी प्रक्रिया के तहत हुआ। सांमतवाद का पतन इतिहासकारों के बीच एक विवाद का प्रश्न रहा है। विद्वानों का मानना है कि 14वीं शताब्दी में सामंतवाद का धीरे–धीरे पतन होने लगा और कुछ समय बाद यूरोप से यह व्यवस्था समाप्त हो गई। कुछ विद्वानों का मानना है कि व्यापार के फिर से उभरने और विकसित होने तथा फलस्वरूप नगरों का विकास सामंतवाद के पतन का मुख्य कारण था। अन्य विद्वानों का प्रौधोगिकी का स्तर, कृषि में उत्पादकता, जनसंख्या संबधी बदलाव और ग्रामीण परिदृश्य में परिवर्तन जैसे अन्य मुद्दे सामंतवाद के पतन के लिए जिम्मेदार थे।

1.2 उद्देश्य

प्रस्तुत अध्याय को पढ़ने के बाद आप

- यूरोप में सांमतवाद के पतन की प्रक्रिया को जान सकेंगे।
- इसमें व्यापार की भूमिका को समझ सकेगें।
- पुनर्जागरण एवं पूँजीवाद का उत्थान कैसे सांमती ढॉचा को नष्ट किया।

1.3 सांमतवाद का पतन

13वीं शताब्दी यूरोप में मध्यकाल का चरमोरकर्ष माना जाता है, किंतु इसी शताब्दी के अंतिम वर्षो में कुछ ऐसी नवीन प्रगतिशील शक्तियों का उदय हो रहा था जो मध्यकालीन व्यवस्था के पतन और नये युग के आगमन का संकेत दे रही थी। 14वीं एवं 15वीं शताब्दी में प्रायः उन सारी शक्तियों का विघटन हुआ जो मध्यकालीन व्यवस्था की मुख्य विशेषताएँ थी। ये विशेषताएँ थी – राजनीतिक सत्ता का विखंडीकरण, निजी लोगों के हाथों में सार्वजनिक शक्ति एवं एक ऐसी सैन्य व्यवस्था जिसमें सैन्य शक्ति निजी हाथों में ठेके पर दे दी गई है, इत्यादि। मध्यकालीन संस्थाओं के विघटन के साथ–साथ नए आदर्शो और संस्थाओं का उदय हो रहा था। ये दो सदियॉ अंशतः मध्यकालीन और अशंतः आधुनिक साबित हुई। इन दोनों शताब्दियों में कुछ विशिष्ट मध्यकालीन संस्थाओ जैसे बड़े–बड़े साम्राज्य, विश्वव्यापी धर्म, गिल्डों के अधिकार, मैनोरियल व्यवस्था और रूढ़िवाद के पतन के गर्त में गिरते देखते हैं। लगभग हर स्थिति में मध्यकालीन संस्थाएँ नवजागृत प्रगतिशील शक्तियों को नियंत्रित करने या रोकने में सक्षम रही। मध्यकालीन व्यवस्था के केन्द्र में सामंतवादी व्यवस्था थी और इसका पतन संपूर्ण मध्यकालीन व्यवस्था के पतन की व्याख्या करता है।

1.4 सामंतवाद के पतन के कारण

1.4.1 सांमतों के मध्य अविराम युद्धों की श्रृंख्ला

सामंत प्रथा की एक बड़ी कमजोरी यह थी कि सांमत बराबर आपस में लड़ते रहते थे। इनके कारण धन–जन की काफी क्षति होते गया। 200 वर्षों के धर्मयुद्ध में बहुत सारे सामंत मारे गये। इस युद्ध का अंत होते–होते इंग्लैड़ और फ्रांस के सामंतों के बीच लड़ाई छिड़ गई जो लगभग 100 वर्षो तक चली। इसमें अनेक सांमत मारे गए। फिर 15वीं सदी में इंग्लैड के गुलाबों के युद्ध से भी वहॉ के सामंतवर्ग को बड़ी क्षति पहुँची। यह बड़ा भीषण युद्ध था, क्योंकि इसके द्वारा प्रतिद्वन्द्वी सांमतों के दल इंग्लैंड के शासनतंत्र को अपनी–अपनी मुट्ठी में लाना चाहते थे। एक ओर इन्होंने आपस में लड़कर अपनी शक्ति बर्बाद की तो दूसरी ओर इन्होंने राजाओ को सामंती मामलो में हस्तक्षेप करने का मौका दिया। इन सामंती युद्धों के कारण यूरोप में हिंसा, अव्यवस्था और उपद्रव का वातावरण पैदा हुआ। फलतः सामान्य लोगों में सांमतों के प्रति घृणा और उब की भावना पैदा हुई। इसी परिवेश में कानून–व्यवस्था के स्थानापन्न के रूप में शक्तिशाली केन्द्रीय सरकार की आवश्यकता महसूस की जाने लगी। फलतः राष्ट्रीय–राज्यों के उदय का मार्ग प्रशस्त होने लगा। अगर इंग्लैंड में यार्क और लंकाशायर वंश के सांमत आपस में नही लड़ते तो वहॉ ट्यूडर निरकुंशतंत्र का उदय नहीं होता।

1.4.2 नये हथियारों का अविष्कार

एक ओर तो लगातार हो रहे युद्धों के कारण सामंतों की संख्या घटती जा रही थी और दूसरी ओर नए हथिआरों के आविष्कार के कारण उनका सामाजिक एवं सामरिक महत्त्व भी घट रहा था। घुड़सवार सामंत अपने भाले, बर्छे और तलवारों से लड़ते थे और इस कारण वे युद्ध में कुशल समझे जाते थे। अब लंबे धनुष का प्रचलन आरंभ हुआ। इससे तीरंदाज किसान भी घुड़सवार सामंत का मुकाबला करने लगा और सामाजिक दृष्टि से अब नाइट की पुरानी प्रधानता जाती रही।

इन सामंतों की सामरिक प्रधानता का दूसरा कारण था कि वे अपने दुर्भेध किलों में रहकर अपनी सुरक्षा आसानी से करते थे, किंतु मंगोल यूरोप में सबसे पहले बारूद लाये और अरब युद्ध में बारूद के गोलों का व्यवहार होने लगा। गोला–बारूद द्वारा सामंती किलों पर दखल जमाना आसान हो गया, इसलिए अब सामंती किले की दुर्भेधता जाती रही।

मध्य युग के अंत में बंदुकों का व्यवहार होने लगा। पहले इसका व्यवहार जर्मनी में हुआ और गुलाबों की लड़ाई में इंग्लैंड में एडवर्ड चतुर्थ (IV) के भाड़े के सिपाहियों ने इसका प्रयोग किया। बंदुकों के कारण पैदल सेना प्रमुख सेना बन गई और पुराने ढंग की घुड़सवार सेना का महत्त्व जाता रहा। सामंतो को दबाने के लिए राजा पैदल सेना का संगठन करने लगा और उनके लिए बंदुक और बारूद जुटाने लगा। इसके लिए पैसे की आवश्यकता थी और पैसे शहरी व्यापारियों के पास थे। सामंतो के विरोधी व्यापारी ने पैसे से राजा का हाथ मजबूत किया जिससे सामंती व्यवस्था को धक्का लगा।

1.4.3 किसान विद्रोह

सामंतों के पतन का एक प्रमुख कारण था किसानों का विद्रोह। कृषि अधिशेष का सामंतो के द्वारा अधिक दोहन का बुरा असर किसानों पर पड़ा। छोटे एवं मध्यम किसान भी इससे प्रभावित हुए क्योंकि अधिशेष दोहन के दर में वृद्धि से उनके पास मुश्किल से कुछ बचता था। एम.एम. पोस्टन के अनुसार सामंती कुलीन वर्ग के द्वारा आश्रित किसानों से कुल उपज का आधा भाग ले लिया जाता था। इसके साथ–साथ लगातार कृषि के कारण भूमि की उर्वरकता भी कम होती जा रही थी क्योंकि उर्वरकता हासिल करने के लिए किसान जमीनों को बहुत दिनों तक परती नहीं छोड़ सकते थे। साथ ही किसानो की सीमित आय के कारण उन्नत बीज, उर्वरक और तकनीक पर खर्च नहीं करते सकते थे। परिणामस्वरूप कृषि उत्पादन में गिरावट दर्ज हुआ और खाद्य पदार्थो के असमान वितरण और आबादी में लगातार वृद्धि के कारण संकट को जन्म दिया। साथ ही साथ सामंती वर्ग के द्वारा कृषि के क्षेत्र में कोई रूचि का न लेना तथा भोग विलास में ज्यादा खर्च करना भी महत्तवपूर्ण भूमिका निभा रहा था। रोडनी हिल्टन ने अनुमान लगाया कि सामंतो के द्वारा कुल आय का मात्र पॉच प्रतिशत उत्पादन में निवेश किया जाता था बाकि गैर उत्पादक मदों में।

उपरोक्त वर्णित परिस्थितियों के कारण 14वीं सदी के शुरू में पूरे यूरोप में कृषि मूल्यों में काफी बढ़ोती हुई। इससे ग्रामीण तथा शहरी वर्ग दोनों प्रभावित हुआ। खाद्य पदार्थो में हो रहे लगातार वृद्धि के कारण 14वीं सदी के पूर्वार्द्ध में अकाल पड़ने लगे थे। 1315–16 का अकाल काफी भयंकर था। अकालों के कारण आबादी में गिरावट हुआ। इसके अलावा, 1347 में पूर्वी यूरोप में प्लेग की महामारी फैल गई और 1348 तक पश्चिमी यूरोप में फैल गया। महामारी का यह श्रृंखला 1350–51 तक चला। इसे यूरोप में 'काली मौत' के नाम से जाना जाता है। इसमें यूरोप की एक चौथाई आबादी नष्ट हो गई। 14वीं सदी के अंत तक यूरोप की आबादी में 40% तक गिरावट दर्ज हुआ।

पश्चिम में आश्रित किसानों ने 14वीं सदी के इस संकट का मुकाबला सामंती करों के बढ़ते बोझ के खिलाफ प्रतिरोध करके किया। अधिकांश किसानों के विद्रोह स्वतःस्फूर्त और व्यक्तिगत थे। किसान शुल्क अदा करने से मना करके दूसरी जगह भाग जाते। आगे चलकर बड़ी संख्या में यह विद्रोह संगठित किसान विद्रह हुए जिससे सामंतो का अधिकार भूदासों पर कमजोर हुआ। 1320 के दशक में फ्रांस, बल्जियम, इंग्लैंड आदि क्षेत्रों में अनेक किसान विद्रोह हुए। सर्वाधिक महत्वपूर्ण विद्रोह 1358 में फ्रांस में हुआ जिसे ग्रैंड जैकरी के नाम से जाना जाता है।

1.4.4 व्यापार की भूमिका

बेल्जियम इतिहासकार हेनरी पिरेन ने सामंतवाद के पतन के लिए व्यापार के प्रसार एवं शहरी केन्द्रों के उदय को जिम्मेदार माना है। इन्होने अपनी पुस्तक, 'मेडिवल सिटीजः देयर ऑरिजिन ऐंड रिवाइवल ऑफ ट्रेड' में सामंतवाद के पतन में व्यापार की भूमिका को सर्वाधिक महत्वपूर्ण माना हैं। पिरेन के अनुसार लंबी दूरी का व्यापार जिसे वे ''ग्रैंड ट्रेड'' कहते थे, की फिर से पुनरूत्थान हुआ और शहरी केन्द्र उभर आए। इससे लोगों के निजी जिंदगी में परिवर्तन हुआ और व्यक्ति स्वतंत्रता का जीवन को मूल मानने लगा। जर्मनी में यह कहावत प्रचलित हुई कि 'शहर की हवा लोगों का आजाद बनाती है।' वास्तव में व्यापार का वातावरण स्वतंत्रता का वातावरण था और सामंती प्रथा का वातावरण असंतोष और संकीर्णता का। इसलिए दोनों में संघर्ष हाने लगा। शहर के लोगों को भी सामंती सेवाएँ करनी पड़ती थी जिससे वे मुक्त होना चाहते थे। उदाहरण के लिए उन्हें अपनी जमीन बेचने की स्वतंत्रता नहीं थी, जिससे वे अपनी पूँजी को करोबार में लगा सकें। उनके व्यापार संबधी मुकदमों का फैसला भी मैनर की सामंती कचहरियों में होता था। इसके अतिरिक्त इन्हें अपने उद्योग एवं धन्धें और व्यापार में मजदूरों की आवश्यकता थी, किंतु सामंती व्यवस्था दासता के कारण मजदूर जमीन से बँधे हुए थे। इन कारणों से भी व्यापारियों और सामंतो के बीच संघर्ष हुआ और व्यापारियों के द्वारा किसान विद्रोही को समर्थन भी मिला।

13वीं–15वीं शताब्दी तक सौदागरों के द्वारा अपना संगठन बनाया गया और राजा की सहायता से अपनी माँगों को मनवाया भी गया। इससे समंतवाद को बड़ा धक्का लगा। व्यापार में तेजी के पीछे धर्मयुद्ध का भी बड़ा योगदान माना जाता है। इससे भूमध्यसागर का रास्ता मुस्लिमों से निकलकर यूरोपीयों के हाथों में चला गया। परिणामस्वरूप उत्तरी यूरोप और पुरब के बीच व्यापार में तेजी आया। पुराने शहर पुनः उन्नति करने लगे और साथ ही नए शहरों का उदय होने लगा। 15वीं शताब्दी में पेरिस की आबादी तीन लाख, वेनिस की एक लाख, नब्बे हजार, प्राग एवं ब्रुसेल्स की एक लाख और लंदन की आबादी 35000 थी।

पिरेन की सामंतवाद और व्यापार के बीच आधारभूत द्विभाजन संबंध को सबसे गंभीर चुनौति मार्क्सवादी इतिहासकार मॉरिस डॉब ने दी। 1946 में उन्होने अपनी पुस्तक 'स्टडीज इन द डेवेलवपेंट ऑफ कैपिटलिज्म' में सामंतवाद के पतन में व्यापार की भूमिका को उठाया। उनके अनुसार अपने आप में व्यापार किसी भी आर्थिक व्यवस्था को नहीं बदल सकता है क्योंकि व्यापार के साथ–साथ दास प्रथा, सामंतवाद, पूँजीवाद इत्यादि कायम रह सकता है। उन्होने यह भी तर्क दिया कि 17वीं–18वीं शताबदी में पूर्वी यूरोप में व्यापार के पुनरूत्थान से सामंतवादी व्यवस्था का अंत होने के बजाए वहाँ 'दूसरी कृषि दास' व्यवस्था का जन्म हुआ। इनके अनुसार कृषि दास प्रथा सामंतवाद का प्रमुख लक्षण है।

मार्क्सवादी विश्लेषण के तहत डॉब ने कहा कि पश्चिमी यूरोप में सामंतवाद के पतन का कारण 'अंदरूनी संकट' था। इस अंदरूनी संकट को डॉब ने सामंती वर्गा एवं किसान वर्ग के बीच के संघर्ष के रूप में व्याख्यायित करते है। डॉब शहरों के उदय को भी सामंतवाद के पतन के लिए एक प्रमुख कारण मानते है। परंतु जहाँ एक ओर पिरेन इस परिघटना को व्यापार के साथ जोड़कर देखते हैं वहीं दूसरी ओर डॉब व्यापार से इसका कोई संबंध नहीं मानते है।

अमेरिकी विद्वान पॉल स्वीजी ने भी पिरेन की अवधारणा और व्यापार/सामंतवाद के बीच असंगति का समर्थन किया। उनका तर्क है कि सामंतवाद का पतन वाणिज्यिक अर्थव्यवस्था के विस्तार के कारण हुआ। जापान के इतिहासकार कोचरू ताकाहाशी ने यह कहकर बहस को एक नया मोड़ दे दिया कि पूँजीवाद का जन्म केवल बुर्जुआ वर्ग के उदय के जरिए सामंतवाद के खंडहरों के ऊपर नहीं हुआ बल्कि यह राज्य समर्थित पूँजीवादी अर्थव्यवस्था का परिणाम था। जापान के संदर्भ में तेजी पुनर्स्थापना के बाद पूँजीपति वर्ग ने नहीं बल्कि राज्य ने वहाँ पूँजीवादी अर्थव्यवस्था के उदय में निर्णायक भूमिका अदा की।

यदि डॉब ने व्यापार और सामंतवाद की संगति के संबंध में विचार रखे तो दूसरे फ्रांसीसी इतिहासकार गी बुआ आगे बढ़कर दोनों का सीधा संबंध को स्थापित किया। डॉब के अनुसार सामंतवाद का पतन उत्पादन

की सांमतवादी पद्धति के भीतर के अन्तर्विरोधों का परिणाम था। गि बुआ ने अपने लेख में फ्रांस के एक गॉव लूर्नांद (Lournand) का परीक्षण संक्रमण के काल में किया और यह बताया कि व्यापार के विकास से अधिपतियों और किसानों का सांमती गठजोड़ कमजोर होने के बजाए और मजबूत हो गया। पिरेन का यह मानना था कि मध्यकालीन यूरोप में प्रौद्योगिकी का स्थान निम्न था और भूमि तथा श्रम की उत्पादकता काफी कम थी, से डॉब, रोडनी हिल्टन आदि सहमति दर्ज करते हैं।

1.4.5 मुद्रा–व्यवस्था का उदय

जैसे–जैसे व्यापार की वृद्धि हुई मुद्रा–व्यवस्था का प्रचलन हुआ। सामंती व्यवस्था के आर्थिक आधार में मुद्रा की प्रघानता नहीं थी। किसान वर्ग काम करके एवं सामंतशाह उनसे सेवाएँ लेकर अपनी जरूरतों को पूरा करते थे। परंतु सिक्कों के प्रचलन से परिस्थितियॉ बदल गयी। मुद्रा अर्थव्यवस्था में सामंतो ने भूमि को व्यावस्था के रूप में देखना शुरू किया। वे अब अपनी जागीर से अधिक से अधिक मुनाफा चाहने लगे। अतः उन्होने अपनी जमीन की घेराबंदी शुरू की और उस घिरे हुए प्लाट में खेती के नये तरीके अपनाये। उन्होंने महसूस किया किया कि अब खेती में उतने लोगों की आवश्यकता नहीं है, जितने लोग पहले लगाए जाते थे। अतः उन्होने अपनी जागीर (Manor) में संलग्न किसानों को बाहर करना शुरू किया। इस प्रकार से एक ओर मैनोरियल व्यवस्था का अंत हुआ और दूसरी ओर कृषि के व्यावसायीकरण से सामंती मूल्य एवं दृष्टिकोण विखड़ने लगा। मैनर व्यवस्था से मुक्त किसान नए व्यवस्था की खोज में शहर की ओर पलायन करने लगे। इस कारण से मुद्रा–प्रधान अर्थव्यवस्था के कारण ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्रों में एक नई लहर पैदा हुई जो सामंतवाद के विरूद्ध थे। अब गतिहीन, कृषि प्रधान और सामूहिक सामंती व्यवस्था के स्थान पर एक गतिशील, शहरी, प्रतियोगी और मुनाफा व्यावस्था अर्थव्यवस्था अर्थात् पूँजीवाद का उदय हुआ। ऐसी स्थिति में सामंतवाद जीर्ण–शीर्ण और अनुपयोगी साबित होने लगा। धीरे–धीरे यह स्पष्ट होने लगा कि उदयीमान आर्थिक एवं सामाजिक शक्तियों का विकास शक्तिशाली केन्द्रीय सरकार के द्वारा ही हो सकता है। किसान व्यापारी, उद्योगपति, मजदूर, सभी राजा को ही अपना हितचिंतक मानने लगे और उन्होंने व्यापार, उद्योग, खेती तथा सामाजिक संरचना पर केन्द्रीय सरकार के अधिकाधिक नियंत्रण की मॉग की। इंग्लैंड एवं फ्रांस जैसे देश के राजाओं ने इस चुनौति का स्वीकारा और उन्होंने राष्ट्रीय स्तर पर सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति को नियंत्रित किया। सामाजिक स्तरीकरण (Social Stratification), आर्थिक स्थानीयवाद (economic localization) और निहित स्वार्थो के विभिन्न घटकों पर आधारित सामंतवाद के पतन का संकेत राष्ट्रीय–राज्यों के उदय से मिल रहा था।

परिणाम यह हुआ कि पश्चिमी यूरोप के देशों में राजा और व्यापारिक वर्ग (थर्ड स्टेट) के बीच अन्योन्याश्रित संबंध कायम हुआ। पारस्परिक समझौते के द्वारा दोनों सामंतों की रही–सही शक्ति को तोड़ने लगे। अपने देश में एक मजबूत केन्द्रीय (राष्ट्रीय) शक्ति की स्थापना की चेष्टा करने लगे। उदाहरण के लिए, 1389 ई0 में इंग्लैड की सरकार ने यह कानून पास किया कि समूचे इंग्लैंड में एक समान माप–तौल चलेगी और जो इसका उल्लंघन करेगा उसे छः महीने की सजा मिलेगी । उसी प्रकार 1439 ई0 में फ्रांस के राजा ने एक कानून पास किया कि व्यापारियों को सामंतो के द्वारा ज्यादा लुटने से बचाया जाए। उसी साल फ्रांस में राष्ट्रीय कर जिसे टैली कहते है पहले पहल लगाया गया जो नियमित रूप से सबको पैसे के रूप में देना पड़ता था। अब राजा नियमित रूप से वेतनधारी सेना रखने लगा और राजकर्मचारियों को भी बहाल करने लगा। वह मध्यमवर्ग से जज, मंत्री और नागरिक अधिकारिक को भी भर्ती करने लगा। 15 वीं शताब्दी में फ्रांस के जाकी कोर नामक लियोन शहर का बैंकर अपने समय का बहुत धनी व्यक्ति राजा का मंत्री बना। इस तरह 15वीं शताब्दी का अंत होते–होते इंग्लैड, फ्रांस, बैल्जियम और स्पेन में पूरे के पूरे राज्य एक आर्थिक इकाई बन गए और राजा की प्रधानता कायम हो गयी। स्थानीयता पर आधारित सामंतवाद धाराशायी होने लगा।

1.4.6. प्रौद्योगिकी और भूमि तथा श्रम की उत्पादकता

मध्ययुगीन यूरोप में प्रौद्योगिकी के निम्न स्तर की बात को हेनरी पिरेन तथा मॉरिस डॉब दोनों ने ही समर्थन किया परन्तु इस बात पर उन्होंने कुछ नहीं कहा कि इस लंबे अंतराल में प्रौद्योगिकी में काफी परिवर्तन दर्ज हुआ। पॉचवीं से आठवीं या नवीं शताब्दी के मध्य दक्षिणी यूरोप और भूमध्यसागर के आसपास मे क्षेत्रों में बीजःउपज का अनुपात लगभग 1:1.6 या अधिक से अधिक 1:2.5 था। अर्थ है 10 किलो बीज बोने पर अधिकतम सिर्फ 25 किलो अन्न का उत्पादन। इस समय उपलब्ध प्रौद्योगिकी अतिसाधारण थी। इस समय हल के रूप में खुरचने वाला हल का इस्तेमाल होता था जिससे जमीन की गहरी खुदाई नहीं हो पाती थी। इससे जमीन की उर्वरकता का अधिकतम दोहन नहीं हो पाता था। फलस्वरूप बड़े–बड़े खेतों में फसल लगाना पड़ता था और श्रम भी ज्यादा लगता था। श्रमिकों के अधिक मॉग के कारण सामाजिक स्तर पर भी तनाव बना रहता था।

परंतु मध्य काल में कृषि प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में विकास हुआ। कृषि के क्षेत्र में भारी हल का प्रयोग, दो–खेत व्यवस्था के स्थान पर तीन–खेती व्यवस्था, बारी–बारी से फसल उगाना (crop rotation) नई फसलें जैसे मटर, बीन्स आदि का उपजाने की शुरूआत हुई। भारी हल खींचने के लिए बैल तथा बाद में घोड़े का प्रयोग किया गया। इससे 12वीं शताब्दी में श्रम और भूमि की उत्पादकता में वृद्धि हुई। अब बीजःफसल का अनुपात 1:4 हो गया यानि अधिशेष की मात्रा तिगुनी हो गई थी। इसके अलावा पनचक्की एवं पवनचक्की के प्रयोग के कारण मानव श्रम की आवश्यकता भी कम हो गई। परिणामस्वरूप कृषि के लिए अतिरिक्त मानव संसाधन उपलब्ध थे। परंतु इस तरह की प्रौद्योगिकी के इस्तेमाल हेतु अधिक पूँजी की जरूरत होती थी जिसके कारण किसानों के बीच पहले से मौजूद मतभेद को और अधिक विस्तरित कर दिया। अब छोटे किसान भी कृषि में अधिक पूँजी निवेश करने लगा और बाजार में उत्पाद को बेचने लगा। परंतु कृषि के वाणिज्यिकरण के कारण और असमय फसल के नष्ट होने के चलते उसे भूमिहीन मजदूर बनने को बाध्य होना पड़ता था। इस प्रकार मजदूर, भूमि और उपज तीनों बाजार के द्वारा निर्धारित होने लगे इस प्रक्रिया के परिणामस्वरूप किसानों के बीच भेद और तीव्र हो गया जो सामंतवाद के पतन के लिए जिम्मेदार साबित हुआ।

1.4.7. जनसंख्या में वृद्धि

1960–70 के दशक में नव–माल्थसवादियों ने भी सामंतवाद के पतन की व्याख्या अपने तरीके से की। इनका मानना है कि जनसंख्या के पैटर्न में आए बदलाव के कारण सामंती अर्थव्यवस्था का पतन हुआ। ये आगे कहते हैं कि आर्थिक ढॉचे में दीर्घकालीक परिवर्तन में जनसंख्या की बड़ी भूमिका थी। इमैनुएल लि रॉय लादूरी (Emmanuel Le Roy Ladurie) ने यह तर्क दिया कि मध्ययुगीन यूरोप में बढ़ी हुई आबादी का बोझ सहन करने में कृषि अपने को असमर्थ पा रही थी। जनसंख्या में वृद्धि के साथ–साथ उत्पादकता में गिरावट, जोतों का विखंडन, मजदूरी मे गिरावट और लगान में वृद्धि के कारण कृषि संकट पैदा हो गया। इसलिए 1314–15 ई0 में अकाल और 1348–51 में प्लेग ने ऐसा कहर बरपाया कि यूरोप की एक चौथाई जनसख्या समाप्त हो गई। इससे मध्ययुगीन यूरोप का संपूर्ण संतुलन बिगड़ गया और पूँजीवाद की और संक्रमण हुआ।

1.4.8. पुनर्जागरण और धर्मसुधार

पुनर्जागरण एवं धर्मसुधार आंदोलन भी सामंतवाद के पतन में अपना योगदान दिया। पुनर्जागरण ने मानवतावाद और राष्ट्रीय–राज्यों के उदय का मार्गा प्रशस्त किया। इसके साथ ही साथ तर्क और विवेक पर आधारित एक ऐसी विचारधारा का जन्म हुआ जो सामंती विचारधारा से मेल नहीं खाती थी। धर्मसुधार आंदोलन में उस चर्च की महत्ता पर कुठाराघात किया जो सामंती व्यावस्था का एक मुख्य आधार था। मठो की जमीन जब्त कर ली गयीः पादरियों के विशेषाधिकार छिन लिये गये और रूढ़िवादी विचारधारा पर प्रहार हुए। दूसरे शब्दों में सामंतवाद के आधार स्तंभों को हिला दिया गया।

1.4.9 पूंजीवाद का विकास

यूरोप में पूंजीवाद के विकास को तीन चरणों– प्रारंभिक पूंजीवाद(1200 ई.–1750 ई.), पूर्ण पूंजीवाद(1750 ई. –1914 ई.) और आधुनिक पूंजीवाद(1914 ई.–वर्तमान) में देखा जा सकता है। पूंजीवाद का विकास सबसे पहले उन देशों में प्रारंभ हुआ जिनका शासन अपेक्षाकृत अधिक उदार था। पूंजीवाद के उदय के कारणों पर यदि दृष्टि डाली जाये तो यह स्पष्ट होता है कि लोहे के अधिकाधिक दोहन ने उत्पादन की प्रक्रिया में तेजी ला दी। अब कृषि एवं उद्योगों का त्वरित विकास होने लगा एवं खनन की तकनीकों में भी महत्वपूर्ण सुधार हुए, बहुमूल्य धातुओं का उत्पादन भी बढ़ने लगा। अमेरिका से भी भारी मात्रा में सोना, चांदी लायी गयी। मौद्रिक अर्थव्यवस्था में तेजी से वस्तु विनिमय की प्रणाली समाप्त होने लगी।

सामुद्रिक–परिवहन में भी कुतुबनुमा और नयी प्रकार के पालों से क्रांतिकारी परिवर्तन हुए एवं अनेक देशों की खोज की गयी और उपनिवेश स्थापना का दौर प्रारंभ हुआ, इसने व्यापार के विस्तार को बढ़ावा दिया जिससे पूंजी में आशातीत वृद्धि हुई। इन सबके परिणामस्वरूप मध्ययुगीन श्रेणियां(शिल्पी संघ)कमजोर होते गये और व्यावसायिक वर्ग शक्तिशाली होता गया। उन्नत किस्म के उपकरणों के निर्माण एवं उनके प्रयोग ने पूंजीवाद को प्रारंभ में बहुत योगदान दिया था, इससे जहां समय की बचत हुई, निर्माण में तेजी आयी वहीं निर्मित वस्तुओं की गुणवत्ता में भी सुधार हुआ।

जैसे ही व्यवसाय की मात्रा बड़ी वैसे ही बैंकिंग व्यवस्था भी शुरू हो गयी और सर्वप्रथम फ्लोरेंस के मेडिसी परिवार ने पहली बैंकिंग प्रणाली की आधारशिला रखी, और शीघ्र ही यूरोप के प्रायः सभी प्रमुख नगरों में इस बैंक की शाखाऐं स्थापित हो गयीं। बैंकिंग व्यवस्था की साख प्रणाली से व्यापार को अत्यधिक प्रोत्साहन मिला। शीघ्र ही व्यापार एवं वाणिज्य को वैश्विक स्तर में चलाने के लिए संयुक्त पूंजी कम्पनियों की स्थापना होने लगी। इंग्लैण्ड ने सर्वप्रथम 1550 ई. के दसक में रूस और गुयाना में व्यापारिक गतिविधियों के लिए एक संयुक्त कंपनी बनायी थी, शीघ्र ही और संयुक्त कंपनियां बनने लगीं और 1600 ई. में इंग्लैंण्ड में लगभग 12 संयुक्त पूंजी कंपनियां कार्यरत थीं, जिनमें से एक ईस्ट इण्डिया कम्पनी भी थी। आधुनिक पूंजीवादी चरण में हम बीमा कंपनियों का विकास भी देखेते हैं जो व्यापार में जोखिम को कम करने के उद्देश्य से निर्मित हुईं थीं।

1.4.10 पूंजीवाद एवं सामन्ती व्यवस्था में अंतर

पूंजीवादी व्यवस्था में एक पूंजीपति अपने धन को जमा करके नहीं रखता है वरन् इसके विपरीत वह लाभ कमाने के उद्देश्य से उसका निवेश करता है। वस्तुओं का उत्पादन भी बाजार में बेचकर मुनाफा कमाने के लिए किया जाता है, इस व्यवस्था में बाजार प्रणाली सक्रिय रहती है। इसके विपरीत सामंती व्यवस्था में लाभ कमाने के लिए धन का निवेश नहीं किया जाता है और वस्तुओं का उत्पादन भी स्थानीय उपभोग के लिए ही होता है एवं बाजार प्रायः जड़वत् बना रहता है।

1.4.11 पूंजीवाद के प्रमुख लक्षण

पूंजीवादी व्यवस्था में निजी सम्पत्ति का अत्यधिक महत्व है और सामान्यतः इस व्यवस्था में सरकार ऐसे प्रावधान करती है जिससे निजी सम्पत्ति सुरक्षित रह सके, व्यक्ति अपनी सम्पत्ति की वसीयत कर उसे अपनी मृत्यु के बाद अपने उत्तराधिकारियों को देने का अधिकार रखता है। इस व्यवस्था में व्यक्ति को व्यवसाय चुनने की पूर्ण स्वतंत्रता होती है और पूरी अर्थव्यवस्था लाभ कमाने के उद्देश्य से ही काम करती है।प्रतिस्पर्धा इस व्यवस्था का एक अन्य आवश्यक अंग है।सभी खरीददार एवं सभी विक्रेता मिलकर ही साधनों एवं वस्तुओं के दाम निर्धारित करते है, अकेले खरीददार या अकेले विक्रेता के कार्यों से कीमतें प्रभावित नहीं की जा सकती हैं। यदि प्रतिस्पर्धा स्वस्थ है तो उत्पादन में कार्यकुशलता की वृद्धि होती है।

1.5 सारांश

कुल मिलाकर इतिहासकार जनसंख्या में परिवर्तन और व्यापार की भूमिका को सामंती अर्थव्यवस्था के रूपान्तरण के लिए जिम्मेदार मानते है। आर्थिक इतिहासकार एम.एम. पोस्टन एवं ई.ले. राय लादूरी जनसंख्या के विस्तार एंव संकुचन के संदर्भ में सामंती व्यवस्था के पतन हेतु व्याख्यायित करते है। दूसरी तरफ हेनरी

पिरेन और ई0 वैलरस्टीन जैसे इतिहासकार व्यापार की भूमिका पर बल देते है। एक अन्य इतिहासकार राबर्ट ब्रेनर ने 1976 में अपने लेख 'एग्रेरियन क्लास स्ट्रक्चर एंड इकानोमिक डेवलपमेंट इन प्री–इंडस्ट्रियल यूरोप' में यह दलील दी है कि 'जनसंख्या मॉडल' एवं 'व्यापार मॉडल' एवं व्यापार मॉडल सामंती व्यवस्था के भीतर के परिवर्तन को स्पष्ट करने में असमर्थ है। इन्होने इन परिवर्तनों के पीछे मध्यकाल में हो रहे वर्ग–संघर्ष को वास्तविक कारण मानते है। इस वर्ग संघर्ष के दो मुख्य समूह थे किसान और सामंती समुदाय। ब्रेनर की भॉति पेरी एंडरसन भी सामंतवाद से पूँजीवाद की संक्रांति में राजनीतिक कारकों की भूमिका मानते है। वह शहरों और अंतर्राष्ट्रीय व्यापार के महत्व को आंशिक रूप से मानते है।

इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि सामंतवाद का पतन उन सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक एवं सांस्कृतिक व धार्मिक तथा बौद्धिक वातावरण में हुआ, जिनका उदय एंव विकास बड़ी तेजी से 13वीं शताब्दी में होने लगा। धर्मयुद्ध, वाणिज्यिक क्रांति, पूँजीवाद की ओर संक्रमण, राष्ट्रीय–राज्यों का उदय, जनसंख्या में परिवर्तन, कृषि अर्थव्यवस्थां में बदलाव, अकाल, महामारी आदि ऐतिहासिक घटनाक्रमों ने एक साथ मिलकर सामंतवाद के पतन में अपना योगदान दिया। सामंतवाद का पतन उन देशों में पहले हुआ जहॉ उपयुक्त आधुनिक शक्तियों का झौंका पहले आया। पश्चिमी यूरोपीय देशों सामंतवाद का पतन पहले हुआ और मध्य एवं पूर्वी यूरोपीय देशों में बाद में।

सत्य/असत्य बताएँ:

- सामंतवाद की मुख्य विशेषताएँ थी– राजनीतिक सत्ता का विखंडीकरण एवं निजी लोगों के हाथों में सैन्य शक्ति का संकेन्द्रण।
- सामंतवाद के पतन हेतु सामंतों के बीच अनवरत युद्ध ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।
- इंग्लैंड में गुलाबों की लड़ाई के दौरान राजा एडवर्ड पंचम था।

रिक्त स्थानों की पूर्ति करे:

- 1358 में ग्रैंड जैकारी नामक विद्रोह ..... में हुआ था।
- मेडिवल सिटीजः देअर ओरिजन एण्ड रिवाइवल ऑफ ट्रेड के लेखक ..... है।
- किसानों के बीच विभेदीकरण किस प्रकार सामंतवाद के पतन को आगे बढ़ाया ?
- सामंतवाद के पतन के लिए आंतरिक संघट किस प्रकार अपनी भूमिका निभाई ?

1.6 शब्दावली

सामंतवाद – 9वीं शताब्दी से 14वीं शताब्दी के मध्य पश्चिमी और मध्य यूरोप में एक राजनीतिक, सामाजिक एवं आर्थिक प्रणाली थी जिसमें अधिपतियों की संप्रभुता के साथ–साथ राजनीतिक विखंडीकरण प्रमुख विशेषता थी।

बूलैंवीयै (Boulainvillers) : अठारहवीं शताब्दी का एक फ्रांसीसी दार्शनिक

मौन्टेसक्यू : फ्रांसिसी दार्शनिक (1689–1755)। 'द स्पिरिट ऑफ लॉस' इनकी प्रसिद्ध कृति है।

मैनोर : सामंती व्यवस्था में आर्थिक उत्पादन एवं सामाजिक जीवन का एक आधारभूत इकाई। इसमें कई छोटे–छोटे आश्रित खेत होते थे जिस पर अधिपति का सीधा अधिकार होता था और कृषि दासों और इससे बंधे किसानो से खेती कराई जाती थी।

गुलाबों की लड़ाई (1455–85) : 15वीं शताब्दी में इंग्लैंड में सामंतो के लड़ाई में एडवर्ड चतुर्थ के द्वारा बंदूक का प्रयोग किया गया था जिसमें सामंतो कां बहुत क्षति पहुॅची।

जैकरी विद्रोह : 14 वीं सदी के पूर्वार्ध में पश्चिमी यूरोप में सामंती आहरण के बढ़ते बोझ के खिलाफ किसानों के द्वारा प्रतिरोध खड़ा किया गया था। इसी विद्रोह के क्रम में 1358 में फ्रांस में जो किसान विद्रोह हुआ था, ग्रैंड जैकरी के नाम से जाना जाता है।

कैरोलिंजी (Carolingian) : सातवीं शताब्दी में यह फ्रैंकिश शासकीय वंश सत्ता में आया। शार्लमान्य के नेतृत्व में उसने पश्चिम में रोपन साम्राज्य के पहले के अधिकांश क्षेत्रों को अपने अधीन कर लिया। नवीं शताब्दी के अंत में इस साम्राज्य का पतन हो गया।

शार्लमान्य : फ्रैंक्स का महान राजा चार्ल्स (771–814) जिसने पश्चिम में रोमन क्षेत्रों को समेटकर एक विशाल साम्राज्य स्थापित किया।

धर्मयुद्धः 11वीं और 13वीं शताब्दी के बीच ईसाइयों की प्रतिरक्षा में मुसलमानों के विरूद्ध लड़ा जाने वाला युद्ध।

काली मौत (Black death) : यूरोप में 14वीं शताब्दी के मध्य में प्लेग महामारी के रूप में फैली थी और अनुमानतः इसमें यूरोप की आबादी का एक तिहाई से एक चौथाई के बीच लोगों की मृत्यु हो गई थी।

मैनर : सामंती व्यावस्था में आर्थिक उत्पादन के साथ–साथ सामाजिक जीवन का भी एक आधारभूत इकाई थी जिस पर कई छोटे–छोटे आश्रित खेत शामिल होते थे। इस पर अधिपति का कृषि दासों पर सीधा अधिकार होता था।

1.7 संदर्भ ग्रंथ सूची

- हेनरी पिरेन, मेडिवल सिटिज : देयर आरिजिन ऐंड द रिवाइवल ऑफ ट्रेड, प्रिंसटन, 1926
- मॉरिश डॉब, स्टडीज इन द डेवलमेंट ऑफ कैपिटलिज्म, लंदन, राउटलेज, 1963
- रोडनी हिल्टन, (संपा) दि ट्रांजिशन फ्राम फयूडलिज्म टू कैपिटलिज्म, लंदन, वर्सो 1984
- मार्क ब्लाक, फ्यूडल सोसाइटी, 2 खंड, शिकागो, 1961
- हरबंस मुखिया, ''मॉरिस डॉबस एक्सप्लेनेशन ऑफ दि डिकलाइन ऑफ फयूडलिज्म इन वेस्टर्न यूरोप ए क्रिटीक,'' आई.एच.आर. खंड 6, नं. 1–2, जुलाई 1979– जनवरी 1980 पृ0 154–184.
- अरविंद सिन्हा,: संक्रातिकालीन यूरोप, दिल्ली, मनोहर 2010.

1.8 निबंधात्मक प्रश्न

1. हेनरी पिरेन ने सामंतवाद के पतन हेतु व्यापार के उत्थान एवं शहरी केन्द्रों के उदय का किस प्रकार जिम्मेदार माना है ?

इकाई दोः पुनर्जागरण

2.1 प्रस्तावना

2.2 उद्देश्य

2.3 पुनर्जागरण

2.3.1 पुनर्जागरण के तत्व

2.3.2 पुनर्जागरण के कारणः

2.3.3 पुनर्जागरण और धर्मयुद्ध

2.3.4 अरब संपर्क

2.3.5 कुबलाई खॉ का दरबार

2.4. पुनर्जागरण की विशेषताऍं

2.4.1 तर्क पर बल

2.4.2 प्रयोग पर बल

2.4.3 मानवतावाद का समर्थन

2.5 पुनर्जागरण का स्वरूप

2.6 पुनर्जागरण की अभिव्यक्ति

2.6.1 साहित्य के क्षेत्र में

2.6.2 कला के क्षेत्र में

2.6.3 स्थापत्य एवं मूर्तिकला

2.6.4 दर्शन

2.6.5 विज्ञान

2.6.6 भौगोलिक खोंजें

2.6.7 अर्थजगत पर प्रभाव

2.6.8 सामाजिक जीवन पर

2.7 पुनर्जागरण का महत्व एवं परिणाम

2.7.1 भौतिकवादी दृष्टिकोण का विकास

2.7.2 बुद्धिजीवी दृष्टिकोण का विकास

2.7.3 पुरातन के प्रति मोह जगाना

2.7.4 अभिव्यक्ति की प्रतिष्ठा

2.7.5 राज्य एवं धर्म का पृथ्क्करण एवं राष्ट्रीयता का विकास

2.8 निष्कर्ष

2.9 शब्दावली

2.10 ग्रंथ सूची

2.11 निबंधात्मक प्रश्न

2.1 प्रस्तावना

युरोपः आधुनिकता की ओर खण्ड के अन्तर्गत यह दूसरी इकाई है जिसमें हम पुनर्जागरण से संबंधित विभिन्न पहलुओं को समझने की कोशिश करेंगे। पुनर्जागरण का शब्दिक अर्थ होता हैः पुनर्जिवित होना, पुनर्जागृत होना इत्यादि। इस रूप में पुनर्जागरण शब्द का अर्थ, महत्तव और प्रयोग मध्यकाल से आधुनिक काल के बीच संक्रमण के दौरान व्यक्त होने वाला बौद्धिक, कलात्मक, सांस्कृतिक आदि क्षेत्रों से जुड़ा हुआ है। इसने यूरोप के इतिहास में महत्वपूर्ण और खासकर मानव–जीवन से संबंधित समस्याओं के संबंध में लोगों के दृष्टिकोण में व्यापक परिवर्तन लाया । इसके साथ–साथ इसकी अभिव्यक्ति केवल कला, साहित्य, दर्शन, विज्ञान के क्षेत्र में ही नहीं हुई परंतु राजनीतिक, अर्थिक, सामाजिक आदि क्षेत्रों में भी हुई। इसे वृहत तौर पर मध्ययुग की विराधी विचारधारा माना गया है और विशेषतः इटली के संदर्भ में पुनर्जागरण चेतना को मानववाद से जोड़ दिया गया है। सही अर्थो में पुनर्जागरण विश्व और मानव की खोज था। इसने आधुनिक सभ्यता का आधार निर्मित किया जिसकी अभिव्यक्ति गणतंत्रवादी स्वतंत्रता के रूप में हुई। यह अध्ययन की एक प्रणली ही नहीं वरन् एक विशेष प्रकार की मनोवृत्ति भी था।

2.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई को पढ़ने के बाद आप

- बता सकेंगे कि पुनर्जागरण का अर्थ क्या होता है।
- समझा सकेंगे कि मध्यकाल से आधुनिक काल के संक्रमण में पुनर्जागरण का क्या महत्तव रहा।
- समझ सकेंगे कि पुनर्जागरण के उदय होने के क्या कारण थे ?
- बता पायेंगे कि पुनर्जागरण की विशेषताओं, स्वरुप और महत्व क्या थे।

2.3 पुनर्जागरण

'रिनांसा' (पुनर्जागरण) शब्द की उत्पत्ति एक इतावली कला सिद्धांतकार जोर्जिया वसारी (1511–1574) के लेखनों से हुई। उन्होंने पिछली दो सदियों का वर्णन करने के लिए रिनस्सिटा शब्द का प्रयोग किया। उसी

समय फ्रांसीसी विद्वान पीयर बेकोन (1518–1564) ने 'रिनांसा' शब्द का प्रयोग किया, जिसका अभिप्राय नए भाव में पुराशास्त्रीय प्राचीनता से था। इस आंदोलन की शुरूआत चौदहवीं सदी के आरंभ में हुई।

पुनर्जागरण एक आंदोलन नहीं बल्कि एक मनोदशा, जिसमें वर्तमान की मनोदशा, अतीत की मनोदशा, बुद्धिजीवी की मनोदशा सम्मिलित था। पुनर्जागरण ने अपनी बुद्धि, तर्क के आधार पर अपने युग के सारे परंपरागत व्यवस्थाओं पर प्रश्न खड़ा किया तथा एक वैकल्पिक एवं आधुनिक व्यवस्था के कार्यक्रम की शुरुआत की। इसके परिणामस्वरुप मध्यकाल की आस्थावादी मनोदशा, तर्कवादी आधुनिक काल की मनोदशा में रुपान्तरित हो गया। इसके साथ ही साथ सांस्कृतिक एवं वैचारिक भावनाओं को मूर्त्त रुप देने में पुनर्जागरण एक सर्वाधिक सशक्त आधार बना। पुनर्जागरण मनुष्य की बौद्धिक और कलात्मक ऊर्जाओं की एक ऐसी अभिव्यक्ति थी जिसके द्वारा यूरोप ने मध्यकाल से निकल कर आधुनिक काल में प्रवेश किया इसने जीवन के राजनैतिक, आर्थिक, सामाजिक और धार्मिक पक्षों में भी व्यापक परिवर्तन लाया।

पुनर्जागरणकालीन साहित्य मनुष्य और मनुष्य से संबंध सभी अवयवों से जुडा था और इसकी रचना जनसामान्य की भाषाओं मे हुई थी। इस दृष्टि से पुनर्जागरण कालीन साहित्य मध्ययुगीय साहित्य से भिन्न था जिसमें धर्म की बहुलता थी और जिसकी रचना लैटिन भाषा में हुई थी। इसके अलावा, कला भी धार्मिक बंधनों से मुक्त होकर अधिक यथार्थवादी हो गयी। कला अब जीवन्त एवं आकर्षक हो गयी। लियोनार्दो द विंची (विंचि), माइकल ऐंजलों एवं राफेल आदि इस युग के प्रसिद्व कलाकार थे। इस युग में मूर्तिकला स्थापत्य कला की अधीनता से मुक्त होकर एक स्वतंत्र कला के रुप में स्थापित हुई और साथ ही एक धर्मनिरपेक्ष उद्वेश्य से भी प्रेरित होने लगी। पुनर्जागरण चेतना के प्रभाव में गोथिक स्थापत्य का अवसान हो गया।

पुनर्जागरण शब्दावली से उन सभी बौद्धिक परिवर्तन का बोध होता है जो मध्ययुग के अन्त में दृष्टिगोचर हो रहे थे। परिवर्तन से तात्पर्य सामान्तवाद की अवनति, प्राचीन साहित्य का अध्ययन, राष्ट्रीय राज्यों का उत्थान, आधुनिक विज्ञान का प्रारंभ, नये व्यापारिक मार्गो की खोज, प्रारंभिक पूँजीवाद की शुरुआत इत्यादि। इतिहासकार डेविस के शब्दों में पुनर्जागरण शब्द "मानव स्वातन्त्रय प्रिय साहसी विचारों को जो मध्ययुग में धर्माधिकारियों द्वारा जकड़े एवं बंदी बना लिए गये थे, व्यक्त करता है।" फ्रांस के प्रसिद्ध इतिहासकार मूल्स मिशिलेट ने पुनर्जागरण की व्याख्या करते हुए दो ऐसे व्यापक आयामों की ओर संकेत दिया है जिनमें पुनर्जागरण सुधारवादी समग्र प्रयत्न आ जाते है। ये दो आयाम है – "दुनिया की खोज" और "मनुष्य की खोज।" दुनिया की खोज से तात्पर्य था – 15वीं–16वीं शताब्दी की उन भौगोलिक उपलब्धियों से है जिसने अटलांटिक, प्रशांत और हिंद महासागर को व्यापार के लिए खोल। और पुरानी दुनिया के लोगों को अमेरिका की नई दुनिया, दक्षिणी अफ्रीका और आस्ट्रेलिया का परिचय कराया। "मनुष्य के खोज" के अन्तर्गत मानव शक्ति के उस पक्ष को लिया गया, जिसके द्वारा उसने मध्यकालीन पोपशाही को अस्वीकार किया तथा विकसीत एवं स्वतंत्र दृष्टि से अवलंवन किया।

2.3.1 पुनर्जागरण के तत्व

- उत्सुकता एवं जिज्ञासा और खोजी दृष्टि का उदय। (Curiosity and spirit of enquity)
- साहसिक मनोभावों का उदय। (Spirit of adventure)
- व्यक्तिवाद (Individualism)– आत्मतुष्टि और अपनी उपलब्धियों से गौरव की अनुभूति व्यक्तिवाद का सार है।
- धर्मनिरपेक्षता– इसका अभिप्राय है (क) सांसारिक कार्यो में अधिक अभिरुचि लेना तथा (ख) वैसे पादरियों की आलोचना जो आत्मत्याग की बात करते है परंतु उनका पालन नहीं करते।
- मनवतावाद– इसका अर्थ हैं मनुष्य की विशिष्ट गरिमा को पहचानना। इस समय मनुष्य को सभी प्राणियों से सर्वश्रेष्ठ माना गया तथा उसकी प्रतिभा का सम्मान किया जाने लगा।

- ऐतिहासिक आत्मचेतना (Historical Self consciousness)– यह इतिहास के प्रति बदलती हुई दृष्टि का परिचायक था।

बोध प्रश्नः

1 पुनर्जागरण का क्या अर्थ है ?

2 पुनर्जागरणकालीन कला एवं सहित्य की क्या विशेषताएँ थी ?

3 व्यक्तिवाद और मानववाद के विकास में पुनर्जागरण क्या भूमिका निभायी ?

2.3.2 पुनर्जागरण के कारण

पीटरबर्क के अनुसार, प्रबुद्धवादी लेखकों ने इस घटना के दो कारण बताए–स्वतंत्रता और इटलीवासियों की संपन्नता। शाफ्रट्सबरी मानते थे कि चित्रकला का पुनर्जीवन वेनिस, जेनोआ और फ्रलोरेंस जैसे स्वतंत्र राज्यों में नागरिक स्वतंत्रता के कारण हुआ। सिसमोंडी पुनर्जागरण के विकास में इतावली शहरों की आर्थिक सम्पन्नता तथा स्वतंत्रता का होना के महत्त्व पर बल देते थे। प्रबुद्धवादियों का मानना था कि स्वतंत्रता वाणिज्य को प्रोत्साहित करती है।

पुनर्जागरण का एक प्रमुख कारण आर्थिक तथा व्यापारिक समृद्धि थी। धर्मयुद्धों के क्रम में यूरोप के पूर्वी देशों के साथ व्यापारिक संबंध स्थापित हुए। व्यापारियों का जमघट जेरूसलम तथा एशिया माइनर के तटों पर होने लगा था। परिणामस्वरूप व्यापार में वृद्धि हुई। व्यापारिक समृद्धि के कारण यूरोपीय व्यापारियों का विभिन्न देशों से संपर्क हुआ जहॉ वे नये विचारों और प्रगतिशील तत्वों से अवगत हुए। व्यापारिक वृद्धि के कारण नये नगरों का जन्म हुआ। उदाहरण हेतु वेनिस, मिलान, फलोरेंस, न्यूरेमबर्ग आदि का संपर्क विभिन्न क्षेत्रों से स्थापित हुआ। इसके कारण विचारों का भी आदान प्रदान संभव हुआ तथा ज्ञान के विकास में सहायता मिली। व्यापारिक विकास से व्यापारिंयों के पास धन का संकेद्रण बढा। नवोदित व्यापारी वर्ग अब विधार्जन का लाभ उठाया। मध्ययुग में केवल पादरियों को यह अवसर प्राप्त था। अब जनसाधारण भी सहजता से ज्ञान अर्जित कर सकता था।

13वीं –14वीं शताब्दियों में व्यापारिक नगर शक्तिशाली नगर–राज्य बन गए और वे आस–पास के ग्रमीण इलाकों के राजनीतिक और आर्थिक जीवन पर अपना प्रभुत्व जमाने लगे। इस प्रकार शहरी केद्रों में रहने से इटली का अभिजातवर्ग सार्वजनिक मामलों में हिस्सा लेने लगा। नये धनाढय समुदायों ने अभिजातवर्ग का दर्जा हासिल करने की कोशिश की। इसके अलावा इटली में कुलीन वर्ग की स्थिति भी यूरोप के लोगों के कुलीन वर्ग से अलग थी। इटली के व्यवसायिक वर्ग के द्वारा नये विचारों, साहित्य कला को प्रोत्साहन दिया गया। इस प्रकार इटली में नयी विचारधारा के उद्भव के लिए उपयुक्त पृष्ठभूमि तैयार हुई।

इसके अतिरिक्त इटली का भौगोलिक अवस्थिति इसे पूर्व और पश्चिम के बीच का प्रकृतिक द्वारा बना दिया था। वेनिस, फलोरेंस, जेनोआ अदि नगरों का एशियाई देशों के साथ निर्बाध रूप के व्यापार चलता था।

2.3.3 पुनर्जागरण और धर्मयुद्ध

पुनर्जागरण की स्थापना में धर्मयुद्ध का बहुत ही महत्वपूर्ण योगदान रहा है। इन धर्मयुद्धों के परिणामस्वरूप यूरापवासियों का पूरब के लोगों के साथ संपर्क हुआ, जो ज्ञान के प्रकाश से आलोकित थे। धर्मयुद्धों ने भौगोलिक खोजों को प्रोत्साहन दिया। परिणामस्वरूप यूरोपीय लोगों द्वारा लंबी यात्राएँ किया जाने लगा और बौद्धिक विकास को बढ़ावा मिला। अरस्तु के वैचारिक ग्रंथ, अरबी अंकगणित, बीजगणित, दिशासूचक यंत्र, कागज आदि का यूरोपीय लोगों से संपर्क हुआ।

1453 में पूर्वी रोमन साम्राज्य के पतन के बाद बाइजेंटाइन साम्राज्य की राजधानी कुस्तुनतुनिया पर उस्मानी तुर्की ने अपना आधिपत्य कायम किया। कुस्तुनतुनिया यूनानी, ज्ञान, दर्शन, विज्ञान, स्थापत्य कला एवं संस्कृति का मुख्य केन्द्र थी। परंतु तुर्को के उपेक्षापूर्ण नीति के कारण विद्वानों, कलाकारों, दर्शनिको और स्थापत्यकारों

को कुस्तुनतुनिया छोड़ने के लिए मजबूर किया। यहॉ के बुद्धिजीवी, कलाकार, कारीगर इटली, फ्रॉस, इग्लैण्ड आदि पश्चिमी यूरोप के देशों में जाकर बस गए। पुनः इनके द्वारा क्लासिकल साहित्य एवं कला के विकास को बढ़ावा दिया गया। कुछ लोग 1453 की इस घटना को इतना महत्वपूर्ण मानते हैं कि पुनर्जागरण का प्रारंभ इसी समय से मानने लगे।

2.3.4 अरब संपर्क

मध्यकाल में अरबों के संपर्क से यूरोपीयों ने कागज बनाने की कला सीख ली। फिर जर्मनी के जॉन गुटेनबर्ग ने 15वीं शताब्दी के मध्यकाल में टाईप मशीन का अविष्कार किया। प्रारंभिक मुद्रण यंत्र के विकास ने बौद्धिक विकास का मार्ग प्रशस्त किया। धीरे–धीरे छापाखाना का प्रसार इंग्लैंड, जर्मनी, स्पेन, फ्रांस आदि देशों में भी हो गया। कागज और मुद्रण यंत्र के अविष्कार ने प्रकाशन तंत्र को विकसित किया। पुस्तक–मुद्रण के आविष्कार के बाद अधिकाधिक लोगों के लिए यह जानना सम्भव हो गया कि दुनिया में क्या हो रहा है। ज्ञान अब मठों और विश्वविद्यालयों के दीवारों के पीछे ही सीमित न रह कर पढ़े–लिखे लोगों के कहीं अधिक व्यापक दायरे में फैलने लगा। अब राजनीतिक और दार्शनिक विचार ज्यादा से ज्यादा लोगों के पास पहुॅचने लगा परिणामस्वरूप रुढ़िवादिता और अंधविशवास को ठेस पहुॅचा।

2.3.5 कुबलाई खॉ का दरबार

नवीन चेतना के प्रचार एवं प्रसार में मंगोल शासक कुबलाई खॉ के दरबार का भी महत्वपूर्ण योगदान माना जाता है। इनका दरबार विद्वानों, धर्म प्रचारकों, व्यापारियों का केन्द्र बन गया था। मंगोल राज्यसभा पोप के दूतों, भारत के बौद्ध भिक्षुओं, पेरिस, इटली के विद्वानो तथा चीन के दस्तकारों, भारत के गणितज्ञों एवं ज्यातिषचार्यो आदि सभी से सुशोभित था। अतः इस युग में पूर्व एवं पश्चिम का वास्तिवक संपर्क हुआ जिसका यूरोप के लोगों पर काफी प्रभाव पड़ा।

बोध प्रश्नः

दीर्घउत्तरीय प्रश्न

1 पुनर्जागरण के उदय के प्रमुख कारण क्या थे ?

लघुउत्तरीय प्रश्न

2 धर्मयुद्ध से आप क्या समझते है ?

3 कुस्तुनितिनिया के पतन के क्या कारण थे ?

रिक्त स्थान भरिए

क टाइपमशीन के आविष्कारक ..... है।

ख पूर्वी रोमन साम्राज्य का पतन ..... ई0 में हुआ था।

2.4 पुनर्जागरण की विशेषताएॅ

2.4.1 तर्क पर बल

पुनर्जागरण ने मध्ययुगीन धर्म और परंपराओं से नियंत्रित चिंतन को मुक्त कर तर्क को बढ़ावा दिया। इस युग के प्रारंभ में अरस्तु के तर्क का गहरा प्रभाव पड़ा। पेरिस, आक्सफोर्ड, कैम्ब्रिज आदि विश्वविद्यालय ने तर्क के सर्वोच्चता को स्थापित किया।

2.4.2 प्रयोग पर बल

रोजर बेकन प्रयोगात्मक खोज प्रणाली का अगदूत था। प्रयोग के आधार पर ही गैलिलियों ने कॉपरनिकस के सिद्धांत को अकाट्य साबित किया।

2.4.3 मानवतावाद का समर्थन

मानवतावाद का अर्थ है– मानव जीवन में रुचि लेना, मानव की समस्याओं का अध्ययन करना, मानव का आदर करना। 15वीं शताब्दी के मानवतावादी आंदोलन के महत्व में तीन बातें उल्लेखनीय हैं– क. इटली के मानवतावादियों ने मानव के बौद्धिक विकास और सतत् चिंतन मे सहयोग किया। ख. मानवतावादियों द्वारा की गई ग्रीक साहित्य की पुनः स्थापना ने चर्च के लेखों और साहित्य का स्थान ले लिया। ग. आलोचनावाद का शुरूआत हुआ।

2.5 पुनर्जागरण का स्वरूप

इस आंदोलन की प्रकृति तथा महत्ता बदलते दृष्टिकोणों एवं व्याख्या के साथ बदलती रही है। इसे एक सर्वमान्य तथा सर्वग्राही अर्थ देना काफी कठिन है। पुनर्जागरण के लौकिक दृष्टिकोण का सबसे महत्वपूर्ण आधार था मानवतावाद। मानवतावाद ने न सिर्फ मानव का बल्कि एक व्यक्ति के महत्व को भी स्थापित किया। अतः व्याक्तिवाद पुनर्जागरण की सांसारिक भावना का दूसरा महत्वपूर्ण स्वरूप है। सांसारिक पुनर्जागरणकालीन सभ्यता शहरी थी। यह मध्यकालीन देहाती सभ्यता से भिन्न प्राचीन यूनानी और रोमन साम्राज्य से मिलती जुलती थी। पुनर्जागरण आंदोलन का मुख्य स्वरूप मध्यवर्गीय था। यह जनसाधारण का आंदोलन नहीं बल्कि मध्यमवर्गीय धनी लोगों के संरक्षण में चलने वाला आंदोलन था। धनी मध्यवर्ग ने समाज में अपने प्रभुत्व की स्थापना हेतु चर्च, पोप और सांमतों की तरह साहित्य और सत्ता को संरक्षण प्रदान किया। इसके अतिरिक्त पुनर्जागरण का स्वरुप तर्कप्रधान इसाईविरोधी तथा सामंतविरोधी था।

यूरोप के देशों में पुनर्जागरण आंदोलन का स्वरूप थोड़ा भिन्न था। इटली की तुलना में यूरोप के उत्तरी देशों में चित्रकारी, मूर्तिकला और स्थापत्य में कम महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। इसके विपरीत मानवतावादी दर्शन और साहित्य ने अधिक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। बरगंडी के दरबार में कला और पुनर्जागरण संस्कृति का एक महत्त्वपूर्ण केन्द्र विकसित हुआ। फ्रांस में पुनर्जागरण की अपनी एक अलग विशेषता थी। पुनर्जागरण काल के दौरान बागवानी पर ध्यान दिया गया था। संगीत के विकास में भी उत्तरी यूरोप ने एक नया मानक स्थापित किया।

कार्ल मार्क्स और एंगेल्स ने पुनर्जागरण को कला और अर्थव्यवस्था के बीच संबंध के परिप्रेक्ष्य में रखा अर्थात् सांस्कृतिक एवं भौतिक उत्पादन के बीच संबंध के संदर्भ में। इन्होंने आधार संरचना (base sturcture) के रूप में आर्थिक आधार तथा (super structure) सांस्कृतिक अधिसंरचना (super structure) का निर्माण करता है। अल्फ्रेड वॉन मार्टिन ने भी पुनर्जागरण को व्यक्तिवाद और आधुनिकता की उत्पत्ति का श्रेय देते हुए पुनर्जागरण को 'बुर्जुआ क्रांति' कहकर इसके आर्थिक आधार पर बल दिया।

कुछ अन्य विद्वानों जैसे गारिन अंताल, माइकेल बेक्सेंडल, हांस नैरोन आदि के द्वारा पुनर्जागरण की सामाजिक व्याख्या प्रस्तुत की गयी। अंताल ने तर्क दिया कि फ्रलोरेंस जैसे शहर को उद्योग तथा व्यापार के कारण बुर्जुआ वर्ग मिला जो कला को संरक्षण प्रदान करता था। बेक्सेंडल ने चित्रकला को संरक्षक तथा कलाकार के बीच सामाजिक संबंध का द्योतक माना है।

बोध प्रश्न–

1 पुनर्जागरण के स्वरुप पर चर्चा करें।

2 क्या पुनर्जागरण एक मानवतावादी आंदोलन था ?

सत्य/असत्य बताइए–

क. रोजर बेकन प्रयोगात्मक खोज प्रणाली का अग्रदूत था।

ख. पुनर्जागरण मानववाद को स्थापित किया।

2.6 पुनर्जागरण की अभिव्यक्ति

पुनर्जागरण काल में पुराने से सामंजस्य का नवीन के निर्माण की शुरूआत हुई। इसने न केवल साहित्य, कला, दर्शन एवं विज्ञान को अपितु मानव जीवन के प्रत्येक क्षेत्र को प्रभावित किया।

2.6.1 साहित्य के क्षेत्र में

पुनर्जागरण काल में निज साहित्य की रचना हुई। उसका विशिष्ट महत्व है। इससे पूर्व सहित्य का सृजन केवल लैटिन भाषाओं में होता आ रहा था किंतु पुनर्जागरण काल में इनका अध्ययन अध्ययापन यूरोपीय भाषाओं में किया जाने लगा। विभिन्न देशों के लोग अपनी–अपनी मातृभाषाओं में सहित्य का सृजन करने लगे जिससे इटालियन, फ्रेंच, स्पेनिश, पुर्तगाली, जर्मन, अंग्रेजी, डच, स्वीडीश, आदि भाषाओं का विकास हुआ। पेट्रार्क को इतावली पुनर्जागरण साहित्य का पिता कहा जाता है। पेट्रार्क की कविताओं में नवीनता दृष्टिगोचर होती है। पेट्रार्क ने समूचे यूरोप में मानवतावादी विचारधारा को प्रोत्साहित किया। बोकाचियो गद्य साहित्य के विकास में महत्वपूर्ण योगदान दिया। दॉते को इतावली कविता का पिता कहा जाता है। दॉते की प्रसिद्ध कृति डिवाइन कामेड़ी है जिसमें एक काल्पनिक जगत की यात्रा का वर्णन है। दॉते की अन्य प्रसिद्ध रचना है द मोनालिसा। लेखकों की दिलचस्पी अब जीते–जागते लोगों में, उनकी खुशियों और गमों में थी। उन्होंने अपने समय की तूफानी जिंदगी के बारे में लिखा, अपनी कविताओं लोगों की सशक्त भावनाओं को व्यक्त किया।

पुनर्जागरण काल के साहित्य की दूसरी प्रमुख विशेषता विषय वस्तु की थी। मध्यकालीन साहित्य का मुख्य विषय धर्म था परंतु इस युग के साहित्य में धार्मिक विषय के स्थान पर मनुष्य के जीवन और इस युग के साहित्यकारों के विचार मध्ययुगीन धर्मसंबधी वाद–विवाद एवं मान्यताओं से मुक्त थे। अब साहित्य आलोचना प्रधान, मानवतावादी और व्यक्तिवादी हो गया स्पेन के लेखक सर्वातेस ने 'डॉन क्विजोट' में सामंतवादी मूल्यों की खिल्ली उड़ाई हैं। लोक साहित्य से उन्होनें मठवासियों और सामंतों की ओर लक्षित व्यंग्य और उपहास को ग्रहण किया।

फ्रॉसीसी साहित्य के क्षेत्र में रेवेलास और मॉन्टेन इसी युग की देन है। रेवेलास ने धार्मिक कट्टरता एवं पुरातनंपथियों के विरोध में आवाज उठायी। उसने अधिकतम संपन्न लोगों, धार्मिक कट्टरता एवं अंधविश्वास पर व्यंगय किये। अंग्रेजी साहित्यकारों में टोमस मूर ने पुनर्जागरण के कार्य को आगे बढ़ाया। इनकी प्रमुख रचना यूटोपिया है। इसमें इग्लैंड के जनजीवन में सामाजिक बुराईयों और आर्थिक दोषों का निरुपण किया। फ्रांसिस बेकन इस युग का सर्वोत्तम निबंधकार थे। इसने तर्क, अनुभव और प्रमाण पर जोर दिया। शेक्सपीयर द्वारा अपनी कृतियों में मानव के सभी संभव भावों और उनकी क्षमताओं तथा दुर्बालताओं का विवेचन किया है। शेक्सपीयर ने मनुष्य के चरित्र को उत्तम दर्शाने के लिए वही कार्य किया जो माइकल एंजेलो ने फ्रांस में किया।

2.6.2 कला के क्षेत्र में

चित्रकला पुनर्जागरण काल में सबसे अधिक विकास चित्रकला के क्षेत्र में हुआ। 15वीं शताब्दी तक चित्रकला न केवल धार्मिक विषयों पर सीमित थी परंतु रंगों और विषयों का चयन भी सीमित था। उस काल के चित्रों में उदासी एवं एकरसता झलकती है। परंतु पुनर्जागरण काल में कालाकार की अपनी स्वतंत्र पहचान हो गई। इस समय तक आर्थिक समृद्धि एवं धर्मनिरपेक्ष भाव की आंशिक विजय के कारण कला बहुत हद तक धर्म की सेवा से मुक्त हो गई। पुनर्जागरण काल के कलाकारों ने कला कों जीवन का रूप समझा । उन्होने प्रकाशिकी और ज्यामिति का अध्ययन किया और चित्रों में प्रक्षेपों का उपयोग प्रांरभ किया। मानव के हाव भावों की आंतरिक व्यवस्था को समझने के लिए शरीर–रचना विज्ञान के अध्ययन पर जोड़ दिया गया। इंद्रिय सुख प्राप्त करना कला का न्यायोचित

मोना लीसा

उद्देश्य हो गया। पुनर्जागरण कला के प्रांरभिक चित्रकारों में जिऐटो महत्वपूर्ण है। इन्होनें पंरपरागत शैली से हटकर मानव एवं प्रकृति पर अनेक चित्र चित्रित किए। जियेटों को चित्रकला का जन्मदाता कहा जाता है। इस काल में लियोनार्दो द विंची (द लास्त सपर, मोनालिसा,) माइकल एंजेलो (लास्ट जजमेंट) और राफेल के चित्रों मे पुनर्जागरण चेतना की पूर्ण अभिव्यक्ति हुई।

लियोनार्डो द विंची (1452–1516) – फ्लोरेंस का रहने वाला लियोनार्डो द विंची इतावली पुनर्जागरण की महानतम हस्तियों में से एक था। वह एक महान चित्रकार और वैज्ञानिक, इंजीनियर और आविष्कारक, वास्तुविद और मूर्तिकार, संगीतज्ञ और कवि था। लियोनार्डो द विंची चित्रकला को कला का मुख्या रुप मानता था। वह मानता था कि उनकी सहायता से मनुष्य संसार का परिचय प्राप्त करता है। सारा संसार उसके चित्र 'मोनालिसा' से परिचित है, जो एक युवा नगरवासिनी का रुपचित्र है। चित्रकार इसमें न केवल बाहरी सादृश्य को ही, बल्कि युवती के आंतरिक व्यक्तित्व, चरित्र और मिजाज को भी पूरी सार्थकता और सटीकता के साथ प्रेषित कर सका है।

2.6.3 स्थापत्य एवं मूर्तिकला

पुनर्जागरण चेतना के विकास के साथ कला के क्षेत्र में महत्वपूर्ण विकास हुआ। इस काल में स्थापत्य एवं मूर्तिकला एक दूसरे से स्वतंत्र होकर अलग–अलग विधा के रूप में स्थापित हुई। पुनर्जागरण चेतना के प्रभाव में गोथिक स्थापात्य का अवसान हो गया। स्थापात्य की नई शैलियों का विकास पहले इटली मे और बाद में यूरोप के अन्य भागों में हुआ। इस युग का प्रमुख मूर्तिकार डोनाटेलों तथा गिबर्ती था।

डेविड

2.6.4 दर्शन

बुद्धिवादी विकास ने व्यापारियों और दर्शनिकों को प्रोत्साहित किया। इटली के दार्शनिकों ने विश्व को यथार्थ से जोड़ा और प्रकृति को सुव्यवस्थित दैविक नियमों से नियंत्रित बताया। पुनर्जागरण काल के मानववादियों ने अरस्तु की जगह सिसरो को अपना आदर्श माना और नैतिक दर्शन पर बल दिया। आगे बहुत से दार्शनिक प्लेटोवादी हो गए और फलोरेंस मे प्लेटोनिक सोसाइटी की स्थापना हुई। मैकियावेली एक यथार्थवादी राजनीतिक दार्शनिक था जिसने अपनी पुस्तक 'द प्रिंस' और 'डिसकोर्सेज' में अपने विचार व्यक्त किए हैं। उसने मध्ययुग की आधारभूत राजनीतिक अवधारणा पर चोट की। उसने राज्य की अवधारणा आधुनिक रुप में प्रस्तुत की । उत्तरी यूरोप में इरासमस एवं बेकन महत्वपूर्ण विचारक हुए। इरासमस ने चर्च के धार्मिक आडम्बर पर चोट की और बेकन ने आगमनात्मक दर्शन पर जोर दिया।

2.6.5 विज्ञान

पुनर्जागरण के काल में विज्ञान के क्षेत्र में अभूतपूर्व प्रगति हुई। इस वैज्ञानिक विकास के प्रमुख कारण थे–

1. प्रोटेस्टेंट धर्म ने मनुष्य को धार्मिक नियंत्रण से मुक्त कर स्वतंत्र रुप से विचार करने का अवसर प्रदान किया ।

2. इस युग के विचारकों का मानना था कि ज्ञान प्राप्त करने का सबसे अच्छा तरीका अन्वेषण, अध्ययन–अध्ययापन है न कि महज चिंतन करना फ्रांसिस बेकन ने कहा था ज्ञान की प्राप्ति केवल प्रयोग करने से ही हो सकती है। बेकन के अनुसार जो व्यक्ति ज्ञान प्राप्त करना चाहता है, उसे स्वयं से प्रश्न करना चाहिए। खगोल विज्ञान के क्षेत्र में कॉपरनिकस ने एक क्रांति ला दी जब उसने घोषणा की कि पृथ्वी अपनी धुरी पर चक्कर लगाती है और वह सूर्य की परिक्रमा करती है। जर्मन वैज्ञानिक केपलर द्वारा गणित की सहायता से ग्रह द्वारा सूर्य की परिक्रमा करने की क्रिया की पुष्टि की गई। आइजेक न्यूटेन ने यह साबित किया कि सभी

खगोलीय पिंड गुरूत्वाकर्षण के अन्तर्गत यात्रा करते है। मानव शरीर और रक्त–संचारण के बारे में भी कई अविष्कार हुए। इस प्रकार वैज्ञानिक मनोवृति ने दीर्धकाल से स्वीकृत विचारों और प्रथाओं की आलोचनात्मक परीक्षा की और मनुष्य को कला, व्यवसाय, शिक्षा और जीवन के अनेक क्षेत्रों से नये विचारो के संबध में परीक्षण करने के लिए प्रेरित किया।

2.6.6 भौगोलिक खोंजें

सामुद्रिक व्यापार का एकमात्र मार्ग भूमध्य सागर था। लेकिन, अब लोग व्यापार के दूसरे सामुद्रिक मार्गों की खोज में लग गए। कोलम्बस के द्वारा 1492 में दुनिया (New World) का पता लगाया गया। उसने इसे भारत समझकर इसका नाम वेस्टइंडीज रखा परंतु, यह अमेरिका था। पुर्तगाली नाविक डियाज और वास्कोडिगामा के नाम भी भौगोलिक खोजों में महत्त्वपूर्ण है। डियाज ने उत्तमाशा अंतरीप (Cape of Good Hope) का पता लगाया। 1519 ई. में मैगलेन ने संपूर्ण विश्व की परिक्रमा की। इस तरह भौगोलिक खोजों की वजह से सागरीय व्यापार (Thalasic trade) महासागरीय व्यापार (Oceanic trade) में परिवर्तित हो गया।

2.6.7 अर्थजगत पर प्रभाव

अर्थव्यवस्था का समाज की धुरी बन जाना पुनर्जागरण की एक अन्यतम उपलब्धि रही है। पुनर्जागरण से पूर्व तक उत्पादन प्रक्रिया की दृष्टि से 'कृषि' तथा सामाजिक प्रतिष्ठा की दृष्टि से धार्मिक संस्थाओं को सर्वोच्चता प्राप्त थी। कृषि से इतर गतिविधियाँ गौण महत्त्व रखती थी। मध्यकाल में कामगारों के लिए गिल्ड व्यवस्था प्रचलित थी जिसमें लम्बी समयावधि के दौरान अनेक दोष समाहित हो गये थे पुनर्जागरण के पश्चात् इन 'गिल्ड' संस्थाओं का स्थान कारखाना पद्धति लेने लगी जिसकी ढाँचे में आमूलचूल परिवर्तन आये। इन परिवर्तनों के प्रति राजव्यवस्था का समर्थनकारी रुख और धार्मिक जंजीरों के ढीले पड़ने से पूंजीवादी व्यवस्था के विकास को गति प्राप्त हुई। नगरीय जीवन, बैंकिंग व्यवस्था, स्टॉक कम्पनियों और मध्यवर्गीय जीवन शैली के विकास और श्रम के बिकाऊ बन जाने से सामाजिक जीवन में अर्थजगत की प्रतिष्ठा स्थापित हुई और यहीं से अर्थव्यवस्था समाज और राजनीति की अनुवर्ती होने के स्थान पर समाज और राजनीति के निर्धारक की भूमिका का निर्वहन करने लगीं।

2.6.8 सामाजिक जीवन पर

पुनर्जागरण से 'विशिष्ट जन केन्द्रित' समाज व्यवस्था 'सामान्य जन केन्द्रित' व्यवस्था की ओर उन्मुख हुई। समाज संरचना के अनुक्रम में महत्त्वपूर्ण परिवर्तन यह रहा कि पादरी व सामंती वर्ग जो कि अनुत्पादक तथा विलासी हो गया था। उसके स्थान पर मध्यवर्ग वरीय स्थान पर आ गया। इस दौरान शक्ति समीकरण यह रहा कि मध्यवर्ग तथा केन्द्रीय सत्ता एक पक्ष, वहीं सामंत व पादरी वर्ग दूसरे पक्ष के रूप में प्रतिस्पर्द्धी बनकर उभरे। धर्म केन्द्रित तथा समाज केन्द्रित चिंतन शैली के स्थान पर व्यक्तिवादी चिंतन को अपेक्षित महत्त्व मिला। धर्म के प्रभाव में कमी आने से अंधविश्वास, भाग्यवादी और पारलौकिक चिंतन में समाज का विश्वास कम होता गया। इन सभी घटनाओं व प्रवृत्तियों से मध्यकालीन समाज का ढाँचा चरमराने लगा और आधुनिक समाज की नींव तैयार हुई।

दीर्घउत्तरीय प्रश्न

1. पुनर्जागरण साहित्य ने किस प्रकार नई चेतना का विकास किया।

बहुविकलपीय प्रश्न

क. इतावली पुनर्जागरण साहित्य के पिता कौन थे ?

1 पेट्रार्क 2 अरस्तु 3 दॉते 4 इरासमस

ख. डिवाइन कॉमेडी के रचनाकार कौन है ?

1 बुकासियो 2 टॉमस मूर 3 दॉते 4 शेक्सपीयर

ग. यूटोपिया के लेखक कौन है ?

1 सर्वातेस 2 टॉमस मूर 3 दॉते 4 शेक्सपीयर

सत्य/असत्य बताइए

1. लियोनार्डो द विंची को चित्रकला का जन्मदाता कहा जाता है।
2. लास्ट जजमेंट माइकल एंजेलों की कृति है।

रिक्त स्थानों को भरें

1. प्लेटोनिक सोसाइटी की स्थापना ..... में हुई थी।
2. 'द प्रिंस' के रचनाकार ..... हैं।

2.7 पुनर्जागरण का महत्व एवं परिणाम

हम समग्र रूप से पुनर्जागरण का विश्लेषण करे तो कुछ बातें स्पष्ट हो जाती है। पुनर्जागरण ने प्राचीन प्रेरणाओं पर आधारित एक ऐसा प्रयोग आंरभ किया जो उस युग की परिस्थितियों से सांमजस्य कर सका। साथ ही नितांत मौलिक एवं प्रगतिशील दिशाएँ भी तलाश सका।

2.7.1 भौतिकवादी दृष्टिकोण का विकास

पुनर्जागरण ने मनुष्या को उसकी महत्ता से अवगत कराया। यह कहा जा सकता है कि पुनर्जागरण मूलतः मध्यकाल के ईश्वर केन्द्रित सभ्यता से आधुनिक युग के मानव केन्द्रित सभ्यता की ओर एक परिवर्तन था। पुनर्जागरण चेतना से उत्पन्न व्यक्तिवाद ने यूरोपीय मानस को आंदोलित कर दिया। आर्थिक क्षेत्र में व्यक्तिवाद पूँजीवादी चेतना से जुड़ गया। पुनर्जागरण के अधिकांश विद्वानों ने मानव संसार को अधिक सुंदर एवं समृद्ध बनाने की शिक्षा दी जिससे भौतिकवादी दृष्टिकोण का विकास हुआ।

2.7.2 बुद्धिजीवी दृष्टिकोण का विकास

पुनर्जागरण ने तर्क और वितर्क को प्रतिष्ठित किया तथा पुरानी धार्मिक विचारधारा और पंरपराओ को झकझोर कर उन पर कठोर आघात किया। विचार, स्वतंत्रता को पुनर्जागरण का आधार स्तंभ माना जाता है। पुनर्जागरण काल की नई खोजों, वैज्ञानिक दृष्टिकोण और तार्किक विवेचना ने धर्मग्रथों के अनेकों सिद्धांतों और विश्वासों को हिला दिया। उसने वैज्ञानिक और बौद्धिक आंदोलन का मार्ग प्रशस्त किया।

2.7.3 पुरातन के प्रति मोह जगाना

पुनर्जागरण से पूर्व लोगों को पुरातन ज्ञान में कोई अभिरूचि नहीं थी। इटलीवासी अपने प्राचीन स्मारकों को विस्मृत कर चुके थे, परंतु इस आंदोलन ने उनका ध्यान इस ओर आकृष्ट किया।

2.7.4 अभिव्यक्ति की प्रतिष्ठा

पुनर्जागरण ने अभिव्यक्ति की भावना को प्रतिष्ठित किया। इसका अर्थ है कि अब केवल लोगों को निःस्तब्ध भाव से बातों को सुनते जाना ही संतुष्टि प्रदान कर सकता था।

2.7.5 राज्य एवं धर्म का पृथ्क्करण एवं राष्ट्रीयता का विकास

पुनर्जागरण काल में चर्च और राज्य के बीच पृथक्कता की कल्पना की गई। पुनर्जागरण के बाद ना केवल कैथोलिक चर्च का एकाधिकार टूटा और सरल संप्रदायों का जन्म हुआ बल्कि निकट भविष्य में राज्य और धर्म

के बीच एक स्पष्ट विभाजक रेखा अंकित हुई। धर्म और पोप की सत्ता के प्रभाव में कमी आने से लोगों में राष्ट्रीयता की भावना का विकास हुआ। पुनर्जागरण चेतना ने बहुत सी आधुनिक संस्थाओं के आधार निर्मित किए जिनमें एक है– आधुनिक राष्ट्रीय–राज्य।

2.8 निष्कर्ष

हम कह सकते है कि पुनर्जागरण ने यूरोप के लोगों में एक नई ज्ञानपिपासा पैदा की, तर्क को प्रतिष्ठित किया। मानवतावाद को विश्व के पटल पर स्थापित किया। विचार और स्वतंत्रता के मूल्यों को आगे बढ़ाया और भौतिकवाद का मार्ग प्रशस्त किया। पुनर्जागरणकालीन विचारधारा ने भविष्य में धर्मसुधार आंदोलन, वैज्ञानिक क्रांति, बौद्धिक क्रांति, राष्ट्रीय–राज्यों के उदय और पूँजीवाद तथा मध्यवर्ग के उदय का मार्ग प्रशस्त किया।

2.9 शब्दावली

अंधकार युग– जर्मन आक्रमणकारियों से त्रस्त पूर्वी रोमन साम्राज्य का 5वीं शताब्दी में अवसान हो गया और यही वह समय था जब यूरोप में मध्यकाल का प्रारंभ हुआ तथा सामतंवादी प्रवृत्ति विकसित हुई। मध्यकाल में मुख्य मापदंड थे– राजनीतिक सत्ता के रूप में राजतंत्र का पतन एवं सामंतवाद का उद्‌भव और विकास, धार्मिक सत्ता तथा सामंत में बेहतर तालमेल एवं उपभोग वर्ग के रूप में उसकी स्थिति, व्यापार–वाणिज्य का पतन तथा समस्त यूरोप में विकास के नाम पर गतिरोध उत्पन्न होना। आमतौर पर इसे अंधकार युग के नाम से जाना जाता है।

गोथिक स्थापत्य – जिसमें कमानीदार छतें, नुकीले मेहराव और टेकें मुख्य विशेषताएँ हो।

व्यक्तिवाद – अपनी उपलब्धियों से आत्मतुष्टि और गौरव की अनुभूति।

धर्मनिरपेक्षता – धार्मिक कार्यो की अपेक्षा संसारिक कार्यो में रुचि लेना तथा धर्म के क्षेत्र में सभी मतों का समान आदर।

पोपशाही – मध्यकालीन यूरोप में जीवन के प्रत्येक क्षेत्रों में पोप की सर्वोच्चता।

मानवतावाद – मनुष्य की सर्वोच्चता को स्थापित करना। जीवन के लक्ष्य को मानव की भलाई के लिए काम करना था।

धर्मयुद्ध – 11वीं–12वीं शताब्दी में इसाई धर्म के प्रमुख स्थल येरुशलम को लेकर मुस्लिम और इसाई के बीच युद्ध।

2.10 ग्रंथ सूची

पीटर, बर्क. – द यूरोपियन रेनसॉ : सेन्टर एण्ड पेरिफरी, ब्लैकवेल, 1992.

जे0 आर0 हैल – रेनासॉ यूरोप, फौनटाना प्रेस, 1968.

लाल बहादुर वर्मा – यूरोप का इतिहास, प्रकाशन संस्थान, नई दिल्ली, 1998.

जे0 एच0 पलम्ब – द पेंग्विन बुक ऑफ रेनासॉ, इंग्लैंड, 1964.

पार्थ सारथी गुप्ता (सं) – आधुनिक पश्चिम का यूरोप, नई दिल्ली, 1983.

जी0 एन0 क्लार्क – अर्ली मॉडर्न यूरोप, ऑक्सफोर्ड, 1976.

देवेश विजय (सं) – प्रारंभिक आधुनिक यूरोप मे सांस्कृति परिवर्तन, दिल्ली 2006.

2.11 निबंधात्मक प्रश्न

1. पुनर्जागरण पर एक विस्तृत निबंध लिखिये।

3.1 प्रस्तावना

3.2 उद्देश्य

3.3 भौगोलिक खोजें

3.3.1 भौगोलिक खोजों की तत्कालीन आवश्यकता एवं उनके लिए अनुकूल परिस्थितियां

3.3.2 भौगोलिक खोजों के परिणाम

3.4 प्रारम्भिक औपनिवेशिक साम्राज्य

3.4.1 यूरोपीय देशों की औपनिवेशिक साम्राज्य स्थापित करने के महत्वाकांक्षा

3.4.2 पुर्तगाल का औपनिवेशिक साम्राज्य

3.4.3 स्पेन का औपनिवेशिक साम्राज्य

3.4.4 डच तथा फ्रांसीसी औपनिवेशिक साम्राज्य

3.4.5 ब्रिटिश औपनिवेशिक साम्राज्य

3.4.6 जर्मन, बेल्जियन तथा इटालियन औपनिवेशिक साम्राज्य

3.4.7 औपनिवेशिक शासन के सामान्य लक्षण

3.4.8.1 विजित जाति का दमन

3.4.8.2 औपनिवेशिक शासकों द्वारा अपने सामाजिक, धार्मिक, सांस्कृतिक, शैक्षिक एवं प्रशासनिक मूल्यों की स्थापना

3.5 यूरोप में पूंजीवाद, वाणिज्यवाद का उदय और परवर्ती काल में औद्योगिक क्रान्ति के लिए अनुकूल परिस्थितियां

3.6 दास–व्यापार एवं दास प्रथा

3.6.1 अटलांटिक दास–व्यापार

3.6.2 नयी दुनिया में दासों की सेवाओं की आवश्यकता

3.7 सारांश

3.8 पारिभाषिक शब्दावली

3.9 स्वमूल्यांकित प्रश्नों के उत्तर

3.10 सन्दर्भ ग्रन्थ

3.11 उपयोगी पाठ्य सामग्री

3.12 निबंधात्मक प्रश्न

3.1 प्रस्तावना

महान भौगोलिक खोजों के युग ने पृथ्वी के आकार और उसके स्वरुप से सम्बंधित अधूरी और दोषपूर्ण जानकारी में आवश्यक संशोधन किए. अब सभी महाद्वीपों तथा विभिन्न देशों के विषय में नयी जानकारी प्राप्त हुई और भौगोलिक अध्ययन को भी एक वैज्ञानिक पद्धति प्राप्त हुई. पृथ्वी की उत्पत्ति विषयक अवधारणा तथा मानव–प्रकृति सम्बन्ध के सिद्धांतों में भी परिवर्तन हुआ. मानचित्र कला का विकास यूरोपीय शक्तियों के राजनीतिक एवं आर्थिक प्रसार में बहुत सहायक सिद्ध हुआ.

इतिहास को गति, दिशा एवं अर्थ प्रदान करने में भौगोलिक उपकरणों तथा भौगोलिक खोजों ने अत्यन्त महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है. नवीन भौगोलिक खोजें आने वाले परिवर्तनों का वाहक बनीं. यूरोपीय देशों में पुर्तगाल ने भौगोलिक खोजों के क्षेत्र में अग्रणी भूमिका निभाई थी. आगे चलकर स्पेन, नीदरलैण्ड, फ्रांस और इंग्लैण्ड ने भी नई खोजें करने में अपना योगदान दिया था. 1453 में तुर्कों द्वारा कांस्टेन्टिनोपल पर अधिकार करने के बाद पश्चिमी यूरोपीय देशों के लिए यूरोप और पूर्व के मध्य एशिया माइनर और सीरिया से होकर जाने वाला भू–क्षेत्रीय मार्ग अवरुद्ध हो चुका था. बार्तालोम्यू डियाज, कोलम्बस, वास्कोडिगामा, वोराज़ानो, जे0 कार्तियर, जॉन स्मिथ आदि ने अफ्रीका, एशिया तथा अमेरिका में अज्ञात क्षेत्रों की खोज की.

भौगोलिक खोजों से यूरोपीय देशों को अफ्रीका, एशिया तथा अमेरिका में सैनिक दृष्टि से कमज़ोर किन्तु प्राकृतिक संसाधनों में समृद्ध क्षेत्रों पर अपना अधिकार करने का अवसर मिला. इन क्षेत्रों पर अपना प्रभुत्व स्थापित कर यूरोपीय देशों ने अपने–अपने औपनिवेशिक साम्राज्य स्थापित किए. प्रारम्भ में पूर्वी गोलार्ध में पुर्तगाल और पश्चिमी गोलार्ध में स्पेन के औपनिवेशिक साम्राज्य स्थापित हुए किन्तु बाद में इस दौड़ में नीदरलैण्ड, फ्रांस तथा इंग्लैण्ड भी शामिल हो गए. प्रारम्भिक औपनिवेशिक साम्राज्यों के काल को हम औद्योगिक क्रान्ति से पूर्व तक का काल मान सकते है. अपने–अपने उपनिवेशों का विभिन्न शासक राज्यों ने जिस प्रकार बहु–आयामी दोहन किया वह नैतिक दृष्टि से निन्दनीय है और उपनिवेशों में ईसाई धर्म का व्यापक प्रचार भी उनकी धार्मिक, जातीय एवं सांस्कृतिक श्रेष्ठता की अहंकारी भावना का ही परिचायक है. उपनिवेशवाद ने यूरोपीय राज्यों के संसाधनों में अपार वृद्धि की. राजनीतिक दृष्टि से इसने शासकों को अधिक साधन–सम्पन्न बनाकर यूरोप में निरंकुश राजतन्त्र को सुदृढ़ बनाया. उपनिवेशों से अपार धन–सम्पदा आ जाने से यूरोपीय जन–जीवन स्तर में सुधार आया तथा कला का सर्वतोमुखी विकास हुआ. पाश्चात्य सभ्यता के सम्पर्क में आने से औपनिवेशिक प्रजा को भी भौतिक प्रगति का महत्व समझ में आने लगा और धीरे–धीरे उपनिवेशों में सामाजिक, शैक्षिक, सांस्कृतिक व राजनीतिक चेतना का विकास होने लगा. यूरोपीय सन्दर्भ में उपनिवेशवाद ने विभिन्न राष्ट्रों में पारस्परिक प्रतिस्पर्धा को बढ़ावा दिया। धीरे–धीरे वाणिज्य का केंद्र 'भूमि' से हटकर 'समुद्र' में स्थापित हो गया.

यूरोप में वाणिज्यिक क्रान्ति का सूत्रपात भौगोलिक खोजों के दौर से पहले ही हो चुका था किन्तु भौगोलिक खोजों ने वाणिज्यिक क्रान्ति को और सशक्त व व्यापक बना दिया था. 16 वीं एवं 17 वाणिज्यिक क्रान्ति के दौर में व्यापक स्तर पर व्यापार–वाणिज्य का संगठन विकसित हुआ. यह वाणिज्यिक क्रान्ति, सामान्य व्यावसायिक गतिविधियों में, तथा वित्तीय सेवाओं (बैंकिंग, बीमा, निवेश आदि) की वृद्धि में परिलक्षित हुई. अब यह विश्वास दृढ़ होता जा रहा था कि जो राष्ट्र जितना धनी होगा, वह उतना ही शक्तिशाली होगा. वाणिज्यवाद ने उपनिवेशवाद को बढ़ावा दिया. यह सिद्धान्त कि – उपनिवेश का अस्तित्व शासक राज्य के लाभ के लिए है'

उपनिवेशों के दोहन का मूल मन्त्र बन गया. वाणिज्यिक क्रान्ति के प्रमुख परिणामों में सामन्तवाद का पतन, पूंजीवाद का उदय, यूरोपीय सभ्यता का प्रसार, दास–प्रथा का पुनर्प्रचलन थे किन्तु इसका सबसे प्रमुख परिणाम औद्योगिक क्रान्ति की पृष्ठभूमि तैयार करना था.

वास्तव में भौगोलिक खोजों, औपनिवेशिक साम्राज्यों की स्थापना तथा दास–व्यापार का परस्पर घनिष्ठ सम्बन्ध है. इन सबने मिलकर मनुष्य के संकुचित दृष्टिकोण को व्यापक बनाने में तथा विश्व इतिहास को मध्य युग से आगे बढ़ाकर आधुनिक युग में प्रविष्ट कराने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी.

3.2 उद्देश्य

इस इकाई का उद्देश्य आपको मध्यकाल के उत्तरार्ध व पुनर्जागरण काल के दौरान यूरोपीय देशों द्वारा की गयी भौगोलिक खोजों के विभिन्न क्षेत्रों में हुए लाभ, औपनिवेशिक साम्राज्यों की स्थापना, तथा दास–व्यापार से परिचित कराना है. इस इकाई के अध्ययन के उपरांत आप अग्रांकित के विषय में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे–

1– पन्द्रहवीं शताब्दी से लेकर सत्रहवीं शताब्दी के दौरान हुई भौगोलिक खोजों के कारणों तथा उनके परिणामों के विषय में.

2. यूरोपीय देशों द्वारा सोलहवीं शताब्दी के प्रारम्भ से लेकर अठारहवीं शताब्दी के उत्तरार्ध तक एशिया, अफ्रीका, अमेरिका तथा ऑस्ट्रेलिया में औपनिवेशिक साम्राज्यों की स्थापना तथा उसके परिणामों के विषय में भौगोलिक खोजों व उपनिवेशवाद से उसके घनिष्ठ सम्बन्ध के विषय में.

3–दास–व्यापार से यूरोपीय देशों को होने वाले आर्थिक एवं राजनीतिक लाभ, दास–व्यापार के औचित्य व अनौचित्य तथा अमेरिका में औपनिवेशिक साम्राज्य के विस्तार में दासों की भूमिका के विषय में.

3.3 भौगोलिक खोजें

3.3.1 भौगोलिक खोजों की तत्कालीन आवश्यकता एवं उनके लिए अनुकूल परिस्थितियां

यूरोप के विभिन्न देशों से विभिन्न जल–मार्गों पर नौ–सैनिक अभियानों को भेजने की आम वजह यह थी कि कि यूरोप के देशों में उपयोगी वस्तुओं के उत्पादन में वृद्धि हो गयी थी और उन्हें खपाने के लिए नए बाज़ारों की आवश्यकता थी. बहुमूल्य धातुओं (सोना और चांदी) की कमी को पूरा करना, और नए–नए क्षेत्रों को जीतने की अदम्य अभिलाषा भी इन अभियानों को भेजने के मुख्य कारणों में गिने जा सकते हैं. इन अभियानों की सफलता से यह आशा की जाती थी कि यूरोप में भरपूर सोना, चांदी, मसाले, हाथी दांत, फ़र (लोम) वालरस खांग (टस्क) आदि प्राप्त होंगे. यूरोप से भारत और पूर्वी एशिया के लिए जल–मार्गों की खोज करना भी इन अभियानों के उद्देश्यों में सम्मिलित था. अब तक यूरोप और एशिया के बीच व्यापार के लिए अरब, तुर्क मध्यस्थों की भूमिका महत्वपूर्ण होती थी किन्तु अब यूरोपीय देश एशिया–व्यापार में इन मध्यस्थों की भूमिका को समाप्त कर सीधे ही यूरोप–एशिया व्यापार के स्वप्न को साकार करना चाहते थे.

लार्ड एक्टन ने इतिहास में नई दुनिया की खोज को, विश्व को मध्यकाल से आधुनिक काल में प्रविष्ट कराने की दिशा में एक निर्णायक कारण माना है. अब यूरोपीय अपनी आर्थिक, राजनीतिक एवं सांस्कृतिक महत्वाकांक्षाओं को साकार कर सकते थे. यूरोप में मध्य युग तक पृथ्वी को चपटी माना जाता था किन्तु बाद में अनुसन्धानों से उसके गोलाकार होने का पता चला. 13 वीं शताब्दी के अन्त में दिशासूचक यन्त्र 'कुतुबनुमा' तथा बाद में एस्ट्रोलोव (अक्षांश जानने का यन्त्र) के आविष्कार, उन्नत मानचित्रों के निर्माण, पाल वाले और चप्पू से चलने वाले जहाजों के निर्माण से अब यह सम्भव हो गया कि लम्बी समुद्र यात्रा द्वारा पश्चिम से पूर्व की ओर पहुंचा जाए. इस विचार ने –कि पृथ्वी वृत्ताकार है और पश्चिमी यूरोप से अटलान्टिक महासागर होते हुए भारत के लिए समुद्री मार्ग खोजा जा सकता है, भौगोलिक खोजों के लिए किए जाने वाले साहसिक प्रयासों को और अधिक बढ़ावा दिया. भौगोलिक ज्ञान तथा नौ–संचालन में पूर्वी देशवासियों की उपलब्धियों ने

महान भौगोलिक खोजों को सम्भव बनाने में महत्वपूर्ण योगदान दिया था. वाइकिंग्स तथा वेनीशियन व्यापारी मार्कोपोलो के अनुभवों ने पन्द्रहवीं व सोलहवीं शताब्दी में यूरोपीयों को नई भौगोलिक खोजों के लिए प्रेरित किया था.

यूरोपीय देशों में पुर्तगाल ने भौगोलिक खोजों के क्षेत्र में अग्रणी भूमिका निभाई थी. 1415 में अफ्रीका के समुद्री तट स्यूटा पर पुर्तगाल का अधिकार हो जाने के बाद भौगोलिक खोजों के लिए अनुकूल वातावरण विकसित हो गया था. 'हेनरी दि नेवीगेटर' के नाम से प्रसिद्ध पुर्तगाल के राजकुमार हेनरी (1399–1460) ने सैग्रेस के तट पर एक अनुसन्धान केन्द्र की स्थापना की और वहां से खगोलशास्त्रियों, पोत निर्माताओं, मानचित्र विशेषज्ञों आदि की सहायता से नाविक अभियान भेजने प्रारम्भ किए. उसके प्रयासों का सुपरिणाम अज़ोर और मडेरिया द्वीपों की खोज के रूप में दिखाई पड़ा. राजकुमार हेनरी के इन अभियानों का उद्देश्य धर्म–प्रचार, वैज्ञानिक खोज और देश की प्रतिष्ठा व उसके अधीन भू–क्षेत्रों की वृद्धि करना था.

पूर्वी यूरोप में तुर्कों की प्रगति एवं प्रभुत्व की स्थापना के कारण पूर्वी देशों के साथ यूरोपीय व्यापार में गतिरोध आ गया था और यूरोपीयों को पूर्वी देशों से प्राप्त होने वाले सामान मिलना बन्द हो गए. इससे भूमध्य सागर का व्यापारिक महत्व समाप्त हो गया था अतः विकल्प के रूप में अटलान्टिक महासागर की ओर लोगों का ध्यान आकर्षित हुआ और यूरोपीय नाविकों ने शासकों की प्रेरणा से व उनके संरक्षण में नए सामुद्रिक मार्गों की खोज प्रारम्भ की.

पूर्वी यूरोप के एक भाग पर मुस्लिम आधिपत्य स्थापित होने और यूरोप से पूर्व की ओर जाने वाला मार्ग पश्चिमी यूरोप के देशों के लिए अवरुद्ध हो जाने के बाद ईसाइयों के लिए पूर्व में अपने धर्म का प्रचार कर पाना असम्भव हो गया था इसलिए अपने धर्म का प्रचार–प्रसार करने के लिए उन्हें नए क्षेत्रों और पूर्व के लिए एक नए मार्ग की तलाश थी. भौगोलिक खोजों के लिए ईसाई धर्म के प्रसार–प्रचार के नए क्षेत्रों तथा नए जल–मार्गों की तलाश को भी हम एक प्रमुख कारण मान सकते हैं.

यूरोपीय देशों में माल के उत्पादन में वृद्धि, सोने और चाँदी जैसी बहुमूल्य धातुओं की कमी, सोने, चाँदी, मसाले, मछली, लकड़ी, सूती एवं रेशमी वस्त्र, हाथी दाँत, कालीन, फ़र (लोम), विलासिता की सामग्री आदि मिलने की आशा में नए भू–क्षेत्रों की तलाश और यूरोप से भारत तथा पूर्वी एशिया के लिए नए समुद्री मार्गों खोजने की आकांक्षा (1453 में तुर्कों द्वारा कांस्टेन्टिनोपल पर अधिकार करने के बाद पश्चिमी यूरोपीय देशों के लिए यूरोप और पूर्व के मध्य एशिया माइनर और सीरिया से होकर जाने वाला भू–क्षेत्रीय मार्ग अवरुद्ध हो चुका था) ने पश्चिमी यूरोप के प्रतिस्पर्धी व्यापारियों को व्यापार–बिचौलियों के शोषण से बचने के लिए और एशिया के देशों से खुद सीधे सम्पर्क स्थापित करने के उद्देश्य, नाविक अभियानों के भेजे जाने के प्रमुख कारण थे.

सन् 1488 में पुर्तगाली नाविक बार्तालोम्यू डियाज़ ने केप ऑफ़ गुड होप की खोज की थी. डियाज़, डी कैम आदि ने इसी वर्ष में अफ्रीकी महाद्वीप के समूचे पश्चिमी और दक्षिणी तटीय क्षेत्र की खोज कर ली थी. 'मैनुअल दि फोर्च्यूनेट' के संरक्षण में 1498 में पुर्तगाली नाविक वास्कोडिगामा ने अरब मार्गदर्शकों की सहायता से दक्षिण अफ्रीका होते हुए पश्चिमी यूरोप से भारत के लिए समुद्री मार्ग की खोज की थी. कालीकट के समुद्री तट पर पहुँचकर उसने भारत में औपनिवेशिक शासन की नींव का पहला पत्थर रखा. वास्कोडिगामा ने कहा था कि वह मसालों की प्राप्ति और ईसाई धर्म के प्रसार हेतु भारत पहुंचा है. वास्कोडिगामा द्वारा भारत के लिए समुद्री मार्ग की खोज से उत्साहित होकर पुर्तगाली 16 वीं शताब्दी के प्रारम्भ में श्री लंका व सुदूर पूर्व में जावा व सुमात्रा तक पहुँच गए. 1517 में उन्होंने चीन के कैंटन में अपनी स्थायी बस्ती स्थापित की और 1542 तक वह जापान भी पहुँच गए.

1492 और 1494 के मध्य स्पेनिश नाविक कोलम्बस ने बहामाज़ तथा ग्रेटर एन्टिलेस (क्यूबा, पीट्रो रिको, हेटी, डोमिनिकन रिपब्लिक, केमैन आदि उपद्वीप) व लैसर एन्टिलेस (उत्तरी लीवार्ड उपद्वीप, दक्षिण–पूर्वी विन्डवार्ड उपद्वीप, लीवार्ड एन्टिलेस तथा लुकायन द्वीपसमूह) की खोज की थी. 1492 में कोलम्बस ने अमेरिका की खोज की थी. 1498 से 1502 के मध्य कोलम्बस, ए ओजेडा, ए वैस्पुसी आदि स्पेनिश व पुर्तगाली नाविकों ने

दक्षिणी अमेरिका के समूचे उत्तरीय समुद्री तट, ब्राज़ील और मध्य अमेरिका के कैरीबियन समुद्र तट की खोज की थी. सोलहवीं शताब्दी में स्पेनिश नाविकों ने मध्य अमेरिका व दक्षिण अमेरिका में अपना आधिपत्य स्थापित कर लिया था. फ्रांसीसी नाविकों – वोराज़ानो तथा जे0 कार्तियर ने उत्तरी अमेरिका के पूर्वी तट तथा सेंट लारेन्स नदी की खोज की थी.

1606 में पहली बार यूरोपीय नाविकों ने ऑस्ट्रेलिया में प्रवेश किया था. ऑस्ट्रेलिया में पहले यूरोपीय बेड़े का नायक डच नागरिक विलेम जेंसजून था. सबसे पहले डच ईस्ट इंडीज़ कंपनी तथा एबल तस्मान के व्यापारिक जहाज ऑस्ट्रेलिया पहुंचे. 1770 में जेम्स कुक के नेतृत्व में इंग्लैंड भी ऑस्ट्रेलिया की इस व्यापारिक प्रतिस्पर्धा में सम्मिलित हो गया. कप्तान आर्थर फ़िलिप ने पश्चिमी ऑस्ट्रेलिया में प्रथम ब्रिटिश उपनिवेश स्थापित किया. जॉर्ज वेनकोवर ने ब्रिटिश औपनिवेशिक साम्राज्य का विस्तार किया. ऑस्ट्रेलिया भेजे जाने वालों में अधिकांश सज़ायाफ्ता लोग थे. ऑस्ट्रेलिया के मूल निवासियों के प्रति निर्ममता का व्यवहार कर अंग्रेजों ने अपना औपनिवेशिक साम्राज्य स्थापित किया. न्यूज़ीलैंड में भी ब्रिटिश औपनिवेशिक साम्राज्य की स्थापना हुई.

3.3.2 भौगोलिक खोजों के परिणाम

1. यूरोपीय खोजों ने पूर्व पर पश्चिम की श्रेष्ठता स्थापित कर दी.
2. .व्यापारिक गतिविधियों के साथ यूरोपीय देशों ने नए खोजे हुए क्षेत्रों में ईसाई धर्म–प्रचार को भी अपना लक्ष्य बनाया. पुर्तगालियों व स्पेन के निवासियों के हृदय में सदियों से मुसलमानों के प्रति आक्रोश था. इस्लाम के अनुयायियों पर प्रहार करना उनकी अभिलाषा थी. पुर्तगालियों ने पूर्व में ईसाई धर्म के व्यापक प्रसार–प्रचार के लिए भी निरन्तर प्रयास किए. जेसुइट मिशन के फ्रांसिस ज़ेवियर ने मलक्का, मलाकू द्वीप, अम्बोनिया, टीमाटे, जापान, चीन और विशेषकर भारत के गोआ में ईसाई धर्म का व्यापक प्रचार किया.
3. जो यूरोपीय अंतर्राष्ट्रीय व्यापार केवल भूमध्यसागर तक सीमित था वह भौगोलिक खोजों के बाद पूरे विश्व में फैल गया. अब पूर्वी व्यापार पर इटली के नगर राज्यों का एकाधिकार समाप्त हो गया और जेनोवा अथवा वेनिस के स्थान पर लिस्बन, बोर्दिया, ब्रिस्टल, लिवरपूल, एम्सटर्डम और एंटवर्प का व्यापारिक महत्त्व अधिक हो गया. अब यूरोप में पूर्व से आयातित सामानों में मसाले, सूती तथा रेशमी कपड़े, पोर्सलिन आदि के साथ–साथ पश्चिम तम्बाकू, कोको, चॉकलेट, कुनैन और अफ्रीका से दास, हाथी दांत, शुतुरमुर्ग के पंख आदि सम्मिलित हो गए. आयातित शक्कर, कॉफ़ी, चावल औउर कपास की मात्र में भी तीव्र वृद्धि हुई. यूरोप में जहाँ सोने–चांदी की कमी थी, वहां अब इसकी आपूर्ति इसकी मांग से कहीं अधिक होने लगी. भौगोलिक खोजों के बाद यूरोपीय व्यापार समस्त विश्व में फैल गया. इससे यूरोप में सामन्तवाद के पतन की प्रक्रिया तीव्र हो गई और पश्चिमी यूरोप में पूंजीवाद उभर कर आने लगा. सोने–चाँदी का अतुलित भण्डार आ जाने से यूरोप में आवश्यक वस्तुओं के दामों में अत्यधिक वृद्धि हो गई. व्यापार में भू–मध्यसागर के स्थान पर अटलान्टिक महासागर की महत्ता बढ़ जाने से इटली और जर्मनी जैसे देश आर्थिक दृष्टि से पिछड़ने लगे और नीदरलैण्ड व इंग्लैण्ड जैसे देश आगे बढ़ने लगे. अब भू–मध्य सागर व बाल्टिक सागर के बन्दरगाहों से अधिक महत्व लिस्बन, लन्दन व एम्सटर्डम के बन्दरगाहों का हो गया.
4. भौगोलिक खोजों के फलस्वरूप व्यापारिक गतिविधियों में अप्रत्याशित वृद्धि ने पूंजीवाद व राष्ट्रीय वाणिज्यवाद को बढ़ावा दिया और अनेक व्यापारिक बैंकों की स्थापना हुई. वाणिज्यिक व्यवस्था के उत्थान के कारण सभी यूरोपीय शक्तियों ने निर्यात को बढ़ावा देने और आयात को घटाने के प्रयास किए.

5. भौगोलिक खोजों ने उपनिवेशवाद तथा साम्राज्यवाद के उदय को सम्भव बनाया. नए क्षेत्रों की खोज के बाद अनेक यूरोपीय उन क्षेत्रों में बस गए और उन्होंने उन पर अपना अधिकार जमा कर वहां अपना शासन स्थापित कर लिया. पुर्तगालियों, स्पेन वासियों, फ्रांसीसियों, डचों तथा अंग्रेज़ों ने एशिया, अफ्रीका तथा अमेरिका में अपने द्वारा खोजे गए क्षेत्रों में अपने–अपने उपनिवेश स्थापित किए. इसी प्रकार रूसी भौगोलिक खोजों ने साइबेरिया के औपनिवेशिकीकरण का मार्ग प्रशस्त किया. औपनिवेशिक शक्तियों ने अपने–अपने उपनिवेशों का व्यवस्थित दोहन प्रारम्भ किया. किसी भी उपनिवेश को अपने शासक राष्ट्र के अतिरिक्त अन्य किसी राष्ट्र से व्यापार करने की अनुमति नहीं थी. औपनिवेशिक शक्तियां अपने उपनिवेशों को उन वस्तुओं का उत्पादन करने से आमतौर पर रोकती थीं जिनका कि उत्पादन स्वयं उनके यहां पर्याप्त मात्रा में होता था. इससे उनके अपने देश के उत्पादकों को उपनिवेशों के उत्पादों से प्रतिस्पर्धा करने का भय नहीं रहता था. विजित क्षेत्रों के निवासियों पर यूरोपीय शक्तियों ने भयंकर क्रूरता का व्यवहार किया. अमेरिका में तो वहां के मूल निवासियों का लगभग पूरी तरह से उन्मूलन ही कर दिया गया. नए उपनिवेश बसाने के लिए सस्ते से सस्ते श्रमिकों की आवश्यकता थी और इस कमी की पूर्ति औपनिवेशिक शक्तियों ने दास–व्यापार की अमानुषिक व्यवस्था के द्वारा की.
6. भौगोलिक खोजों ने ज्ञान की अन्य विधाओं जैसे वनस्पतिशास्त्र, जन्तुशास्त्र, मानव–जाति विज्ञान आदि में नई खोजों के अवसर उपलब्ध कराए. यूरोपीयों ने आलू, मक्का, टमाटर और तम्बाकू की खेती करना शुरू कर दिया. राष्ट्रीय संसाधनों में वृद्धि के कारण कला की विभिन्न विधाओं को शासक वर्ग तथा धनाढ्य वर्ग द्वारा प्रोत्साहन दिया जाने लगा और वैज्ञानिक आविष्कारों के लिए समुचित धन भी उपलब्ध कराया जाने लगा जिसका कि परिणाम कला व विज्ञान के क्षेत्र में अभूतपूर्व प्रगति के रूप में दिखाई दिया.
7. भौगोलिक खोजों ने उपनिवेशवाद और साम्राज्यवाद को तो बढ़ावा दिया ही साथ ही साथ इनके परिणाम स्वरूप यूरोपीय राज्यों में जिस प्रकार अतुलित धन–सम्पदा आई, उसने वहां के शासकों के संसाधनों और शक्ति में अपार वृद्धि कर दी. इसने यूरोप में निरंकुश राजतन्त्र की स्थापना को बढ़ावा दिया.
8. भौगोलिक खोजों ने यूरोपीय देशों के मध्य प्रतिस्पर्धा को बढ़ाया जिसकी परिणति अनेक बार भीषण युद्धों में हुई.

3.4 प्रारम्भिक औपनिवेशिक साम्राज्य

3.4.1 यूरोपीय देशों की औपनिवेशिक साम्राज्य स्थापित करने के महत्वाकांक्षा

पन्द्रहवीं शताब्दी में यूरोप में भौगोलिक खोजों का दौर चल पड़ा था और सोलहवीं शताब्दी तक समुद्री मार्ग द्वारा दुनिया के एक बड़े भाग की खोज कर ली गई थी. पुनर्जागरण के दौरान वैज्ञानिक व तकनीकी प्रगति के परिणाम स्वरूप यूरोपीय देशों ने न केवल नौ–चालन के क्षेत्र में बहुत प्रगति कर ली थी अपितु अस्त्र–शस्त्र के क्षेत्र में भी समान रूप से प्रगति कर ली थी. अब यूरोपीय शक्तियों के पास दुनिया के शेष सभी देशों की तुलना में अधिक मारक शक्ति के हथियार थे और आधुनिक अस्त्र–शस्त्रों से सज्जित उनकी थल सेनाएं व नौ–सेनाए भी सबसे सुगठित व आधुनिक रणनीति में पारंगत थीं. इन अनुकूल परिस्थितियों में अनेक यूरोपीय देशों में 'ग्रीड ऑफ़ गोल्ड एण्ड लस्ट फॉर ग्लोरी' (धन का लोभ और यश की लालसा) की भावना के

वशीभूत होकर औपनिवेशिक साम्राज्य की स्थापना की महत्वाकांक्षा उत्पन्न हुई. इसके अतिरिक्त अपने–अपने विजित क्षेत्रों में अपने धर्म अर्थात् ईसाई धर्म के प्रचार–प्रसार की आकांक्षा ने भी यूरोपीय देशों को अपने–अपने औपनिवेशिक साम्राज्य स्थापित करने की प्रेरणा दी थी. वास्कोडिगामा ने कहा था कि – 'वह मसालों की प्राप्ति और ईसाई धर्म के प्रसार हेतु भारत पहुंचा है.' वास्तव में औपनिवेशिक साम्राज्यों की स्थापना के प्रारम्भिक दौर में यूरोपीय देशों का प्रमुख प्रेरक कारण धर्म–प्रचार था न कि विजित क्षेत्रों में अपना राजनीतिक प्रभुत्व स्थापित करना. परन्तु बाद में आर्थिक कारणों से, विशेषकर व्यापारिक लाभ हेतु उपनिवेशों की स्थापना की जाने लगी. अपने देश में उत्पादित माल की बिक्री के लिए नए बाज़ारों की तलाश और अपने यहां तैयार उत्पादों के लिए आवश्यक कच्चे माल की सस्ते में और नियमित एवं निर्बाध आपूर्ति की समस्या, इन दोनों का ही समाधान अधिक से अधिक और बड़े से बड़े उपनिवेशों की स्थापना में मिल सकता था.

3.4.2 पुर्तगाल का औपनिवेशिक साम्राज्य

पुर्तगाल ने सबसे पहले उत्तर क्रूस–युद्ध से प्रेरित होकर अफ्रीका के मुस्लिम राज्यों पर अपना आधिपत्य स्थापित करने का प्रयास किया. इस से उसकी राजनीतिक महत्ता बढ़ने के साथ–साथ लूट के माल से उसकी आर्थिक स्थिति में सुधार भी हो सकता था और इसके अतिरिक्त इस से पुर्तगाली व्यापार को भी अंतर्राष्ट्रीय बनाने में सफलता मिल सकती थी. 1415 में भूमध्यसागर में स्थित स्युटा पर पुर्तगाली आक्रमण हुआ. 15 वीं शताब्दी में हेनरी दि नेविगेटर ने अफ्रीका में पुर्तगाली औपनिवेशिक साम्राज्य के विस्तार में महत्वपूर्ण योगदान दिया. अब पुर्तगाल के लिए मदेरिया तथा एज़ोरेस से गेंहू पहुचाया जाने लगा. करावेल पाल वाले जहाजों की मदद से 1445 में पुर्तगाली सेनेगल तथा केप वेर्दे प्रायद्वीप पहुँच गए. फेर्नाओ गोमेज़ नमक व्यापारी ने गुयाना की खाड़ी की खोज की. 15 वीं शताब्दी के आठवें दशक में पुर्तगाली प्रचुर मात्र में अफ्रीकी सोना अपने देश लाने लगे. अफ्रीकी समुद्र तट के एक बड़े भाग पर अब पुर्तगालियों का अधिकार हो गया. अफ्रीका से दास–व्यापार में भी पुर्तगाल ने बहुत धन कमाया.

आधुनिक काल में औपनिवेशिक साम्राज्य की स्थापना का इतिहास पुर्तगाल तथा स्पेन के साहसिक प्रयासों से प्रारम्भ होता है. पूर्वी गोलार्ध एवं पश्चिमी गोलार्ध, दोनों में ही यूरोपीय उपनिवेशवाद के मूल में भौगोलिक अन्वेषण के क्षेत्र में पुर्तगाली व स्पेनिश उपलब्धियां थीं. अपने व्यापारिक लाभ और धर्म–प्रचार अभियान को स्थायित्व देने के लिए पुर्तगालियों ने अफ्रीका, एशिया और अमेरिका में अपने उपनिवेश स्थापित करने के प्रयास किए किन्तु इसमें उनका सामना स्पेन से हो गया. स्पेन और पुर्तगाल के मध्य औपनिवेशिक साम्राज्य के विस्तार विषयक प्रतिस्पर्धा को समाप्त करने के लिए पोप ने हस्तक्षेप कर दोनों राज्यों के मध्य 7 जून, 1494 को टार्डिसिलास की सन्धि हुई जिसके अन्तर्गत खोज की गई नई दुनिया को स्पेन और पुर्तगाल (इबेरियन राज्यों) के मध्य बांट दिया गया. इस नई दुनिया का पूर्वी भाग (अफ्रीका, सुदूर पूर्व, श्री लंका आदि) पुर्तगाल के अधीन और पश्चिमी भाग (उत्तरी व दक्षिणी अमेरिका) स्पेन के अधीन रखा गया. परन्तु 1500 में पुर्तगाली नाविक कैबराल अपने भारतीय अभियान में गल्ती से ब्राज़ील पहुँच जाने से पश्चिमी गोलार्ध में पुर्तगाल के अधिकार में ब्राज़ील आने का मार्ग प्रशस्त हो गया. पूर्वी गोलार्ध में पुर्तगाली औपनिवेशिक साम्राज्य का विस्तार अफ्रीका में मोंज़ाबीक तथा मैडागास्कर में, तथा एशिया में श्री लंका, मलेशिया (मलक्का को शामिल कर), इण्डोनेशिया, मकाउ, पूर्वी तिमोर, गोवा, दमन, दिउ, बॉम्बे (बाद में अंग्रेज़ो के अधीन) और चीन व जापान के कुछ भागों तक हो गया.

3.4.3 स्पेन का औपनिवेशिक साम्राज्य

स्पेन के औपनिवेशिक साम्राज्य की गणना विश्व के सबसे बड़े औपनिवेशिक साम्राज्यों में की जाती है. हैब्सबर्ग राज्यवंश के काल में यह सैनिक, राजनीतिक और आर्थिक दृष्टि से अपनी शक्ति की पराकाष्ठा पर था. 18 वीं शताब्दी में बोर्बन राज्यवंश के काल में स्पेन का साम्राज्य विश्व में सबसे बड़ा था. ब्रिटिश साम्राज्य के विषय में कहे जाने से पहले यह कहा जाता था कि दृ 'स्पेन के साम्राज्य में सूर्य, कभी डूबता नहीं है.' स्पेन का साम्राज्य दक्षिण अमेरिका, मध्य अमेरिका, उत्तर अमेरिका सहित एशिया, ओशिएनिया तथा अफ्रीका तक फैला

था. इसमें फिलिपींस सहित प्रशांत महासागर के द्वीप समूह भी सम्मिलित थे. स्पेनिश औपनिवेशिक साम्राज्य की स्थापना क्रिस्टोफ़र कोलंबस के काल से ही होनी प्रारंभ हो गई थी.

इतिहास में ब्रिटेन के बाद स्पेन का औपनिवेशिक साम्राज्य सबसे बड़ा रहा है. कोलम्बस द्वारा 1492 में नई दुनिया की खोज के बाद स्पेन ने पश्चिमी गोलार्ध में न्यू स्पेन, पेरू, अर्जेन्टिना, कोलम्बिया, वैस्टइंडीज़, मैक्सिको में अपने उपनिवेश स्थापित किए. सोलहवीं शताब्दी के उत्तरार्ध तक दक्षिणी अमेरिका का अधिकांश भाग स्पेन के औपनिवेशिक साम्राज्य का अंग बन गया. सोलहवीं शताब्दी के अन्तिम दशक में ब्रिटेन तथा अन्य उत्तरी यूरोपीय देशों ने पश्चिमी गोलार्ध में स्पेन के एकाधिकार को चुनौती दी और अमेरिका के पूर्वी समुद्री तट, कैनाडा, कैरीबियन द्वीपों में अरूबा, मार्टिनिक तथा बारबडोस पर अपना अधिकार कर लिया.

स्पेन के औपनिवेशिक शासन में अमानवीयता की सभी पराकाष्ठाओं को पार कर इण्डियन अमेरिकन्स (रैड इण्डियन्स) का समूल विनाश कर दिया गया. स्पेन को अपने उपनिवेशों से इतना धन प्राप्त हुआ कि वहां के शसकों ने दीर्घकालीन धर्म–युद्ध किए जो आगे चलकर स्पेनिश शक्ति के पतन का कारण बने.

3.4.4 डच तथा फ्रांसीसी औपनिवेशिक साम्राज्य

सोलहवीं शताब्दी में अपनी नौ–सैनिक शक्ति के उत्थान के फलस्वरूप सत्रहवीं शताब्दी तक नीदरलैण्ड व्यापारिक गतिविधियों में विश्व का एक अग्रणी देश बन गया था और एम्सटर्डम जहाजरानी, बैंकिंग तथा बीमा के क्षेत्र में यूरोप का सबसे प्रमुख केन्द्र बन गया था. 1594 में 'कम्पनी फॉर फ़ारलैण्ड' तथा 1602 में 'डच ईस्ट इण्डिया कम्पनी' तथा 1621 में 'डच वैस्ट इण्डीज़ कम्पनी' की स्थापना के बाद डच औपनिवेशिक साम्राज्य के विस्तार का मार्ग प्रशस्त हो गया. 1619 में डचों ने जकार्ता पर अधिकार कर लिया और बठाविया के नाम से उसे डच ईस्ट इण्डीज़ की राजधानी बनाया. 1638 में उन्होंने मौरिशस पर अधिकार कर लिया. 1641 में उन्होंने मलक्का से पुर्तगालियों को निकाल कर उस पर अधिकार कर लिया. 1658 तक उनका श्री लंका पर अधिकार हो गया. भारत में 1662 में उन्होंने नागपट्टम, केरांगनोर, ट्रैवनकोर, तथा कोचीन पर अधिकार कर लिया. डच शक्ति अफ्रीका तथा अमेरिका में अपने पैर नहीं जमा सकी. 1688 के बाद डच विलियम ऑफ़ औरेन्ज के ब्रिटिश सिंहासन पर बैठने के बाद यह निश्चित किया गया कि पूर्व में कपड़ों व्यापार पर अंग्रेज़ों का और मसाला व्यापार में डचों का वर्चस्व रहेगा. मसाला–व्यापार में डचों ने प्रचुर मात्रा में धन कमाया.

फ्रांसीसी औपनिवेशिक साम्राज्य का विस्तार उत्तरी अमेरिका में कैनाडा, मिसीसिपी नदी की घाटी, वैस्ट इण्डीज़ में – सेन्ट किट्स तथा फ्रेन्च गुयाना तथा भारत (पोंडिचेरी, चन्द्रनगर) तक हो गया था. भारत में आंग्ल–फ्रांसीसी प्रतिद्वन्द्विता में रोबर्ट क्लाइव ने बंगाल और दक्षिण भारत में फ्रांसीसी शक्ति को अपंग बनाने में पूर्ण सफलता प्राप्त की थी.

3.4.5 ब्रिटिश औपनिवेशिक साम्राज्य

ब्रिटिश औपनिवेशिक साम्राज्य की स्थापना की प्रक्रिया ट्यूडर काल में एलिज़ाबेथ प्रथम के शासन के अन्तिम वर्षों में प्रारम्भ हुई किन्तु स्टुअर्ट काल में सम्राट जेम्स प्रथम और विशेषकर, चार्ल्स द्वितीय के शासनकाल में यह गतिमान हो गई. 1583 में न्यू फ़ाउण्डलैण्ड में ब्रिटिश उपनिवेश स्थापित हुआ. प्रारम्भिक काल में व्यापारिक कम्पनियों तथा संयुक्त सार्वजनिक एवं निजी उपक्रमों ने ब्रिटिश उपनिवेशों की स्थापना में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई. इंग्लैण्ड की दृष्टि सोने–चाँदी की लालसा, व्यापारिक लाभ, गर्म मसालों, तम्बाकू और चीनी आदि के लिए अपना औपनिवेशिक साम्राज्य स्थापित करने पर थी किन्तु अमेरिका में इसके लिए स्पेन के औपनिवेशिक साम्राज्य के विस्तार के बाद ब्रिटेन को उत्तरी अमेरिका, मध्य अमेरिका व कैरिबियन में छोटे द्वीपों में तथा दक्षिणी अमेरिका में स्पेन से छूटे हुए क्षेत्र में ही सम्भावनाए बची थीं. सत्रहवीं शताब्दी के प्रारम्भ में वर्जीनिया, बाल्टीमोर, मैरीलैण्ड, जेम्सटाउन, हॉर्ड्स आइलैण्ड, मैसाचुसेट्स, न्यू जेरेसी, जॉर्जिया, अल्बानी, कानेक्टिकस, न्यू नीदरलैण्ड (बाद में इसका नाम न्यूयॉर्क रखा गया), पेन्सिलवेनिया, नार्थ तथा साउथ कैरोलिना में ब्रिटिश कालोनियां स्थापित हुईं.

अठारहवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में भारत में यूरोपीय उपनिवेशों की स्थापना के लिए अनुकूल परिस्थितियां बन गई थीं. आंग्ल–फ्रांसीसी प्रतिद्वन्द्विता में अंग्रेज़ों को विजय दिलाकर रॉबर्ट क्लाइव ने भारत में ब्रिटिश औपनिवेशिक साम्राज्य की स्थापना की नींव डाली.

3.4.6 जर्मन, बेल्जियन तथा इटालियन औपनिवेशिक साम्राज्य

जर्मनी में समुद्र–व्यापार की जड़ें तो हैन्सियातिक लीग के काल से ही बहुत मज़बूत थीं किन्तु 1871 तक जर्मनी के एकीकरण से पहले उसका अपना औपनिवेशिक साम्राज्य नहीं था. अब जर्मनी के अनेक निवासी यह मान रहे थे कि जब तक कि उनका देश अपना औपनिवेशिक साम्राज्य खड़ा नहीं कर लेता तब तक एक स्वतंत्र देश के रूप में उसकी अपनी पहचान नहीं बन पाएगी. स्वयं बिस्मार्क औपनिवेशिक साम्राज्य स्थापित करने की दौड़ में जर्मनी को शामिल नहीं करना चाहता था किन्तु 1884 में उसे जर्मन औपनिवेशिक साम्राज्य स्थापित करने की योजना को अपनी स्वीकृति देनी पड़ी. अपने औपनिवेशिक साम्राज्य की स्थापना से जर्मनी को अपने अंतर्राष्ट्रीय व्यापार को सुरक्षा प्रदान करने, अपने कारखानों के लिए समुचित मात्र में कच्चा माल प्राप्त करने, अपने तैयार माल का निर्यात करने और अपने देश की पूंजी के लाभकारी निवेश की नए अवसरों की संभावनाओं को देखते हुए उसने इसे स्वीकार किया. अफ्रीका में ज़ंज़ीबार में विशाल जर्मन औपनिवेशिक साम्राज्य की स्थापना हुई.

बेल्जियम को डच आधिपत्य से 1830 में स्वतंत्रता प्राप्त हुई. 1840 और 1850 के दशक में बेल्जियम के शासक लियोपोल्ड प्रथम ने पश्चि अफ्रीका में औपनिवेशिक साम्राज्य की स्थापना के असफल प्रयास किए किन्तु लियोपोल्ड द्वितीय के शासन काल में कांगो में विशाल बेल्जियन औपनिवेशिक साम्राज्य की स्थापना हुई. 1885 में लियोपोल्ड द्वितीय की निजी संपत्ति के रूप में 'कांगो फ्री स्टेट' भी अस्तित्व में आया.

इटली के एकीकरण से अपने औपनिवेशिक साम्राज्य की इटली की महत्वाकांक्षा बढ़ने लगी. ट्यूनिसिया पर अधिकार करने का उसका प्रयास निष्फल हुआ किन्तु मस्सावा, इथोपिया आदि पर उसका अधिकार हो गया. 1896 में इथोपिया से इटली की हार ने इटली की औपनिवेशिक साम्राज्य स्थापित करने की महत्वाकांक्षा को एक बड़ी चोट पहुंचाई लेकिन बाद में 1911 में इटली का लीबिया पर प्रभुत्व स्थापित हो गया.

3.4.7 औपनिवेशिक शासन के सामान्य लक्षण

धर्म–परिवर्तनः पुर्तगाल तथा स्पेन के औपनिवेशिक साम्राज्य–विस्तार में रोमन कैथालिक चर्च ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी. जहां–जहां पुर्तगाल तथा स्पेन का आधिपत्य हुआ वहां–वहां डोमिनिकन, जेसुइट तथा फ्रंसिस्कन मिशनरियों ने अपना धर्म प्रचार किया. इनमें एशिया में फ्रांसिस ज़ेवियर तथा उत्तरी अमेरिका में जैनिपैरो की भूमिका सर्वाधिक महत्वपूर्ण थी. ईसाई धर्म का प्रचार सभी यूरोपीय उपनिवेशों में ईसाई धर्म का व्यापक प्रचार किया गया और इस धर्म प्रचार कार्यक्रम को औपनिवेशिक शासकों का संरक्षण प्राप्त था. लाखों–करोड़ों स्थानीय प्रजा को ईसाई धर्म में दीक्षित किया गया.

3.4.8.1 विजित जाति का दमन

उपनिवेशवाद का अर्थ है – किसी सैनिक दृष्टि से शक्तिशाली राष्ट्र द्वारा अपने विभिन्न हितों को साधने के लिए किसी सैनिक दृष्टि से निर्बल किन्तु प्राकृतिक संसाधनों से परिपूर्ण राष्ट्र पर अपनी शक्ति के बल पर अधिकार कर उसके संसाधनों का अपने हित में उपयोग करना. उपनिवेशवाद में उपनिवेश की जनता एक विदेशी राष्ट्र द्वारा शासित होती है और उसे शासन में न तो पूरे राजनीतिक अधिकार प्राप्त होते हैं और न ही पूरे आर्थिक अधिकार.

औपनिवेशिक शक्तियों ने जातीय श्रेष्ठता के सिद्धान्त का पालन करते हुए विजित जाति को कभी भी अपने समकक्ष नहीं समझा और न स्थानीय प्रजाजनों को प्रशासन, न्याय–व्यवस्था व सेना में उच्च पद प्रदान किए. स्थानीय व्यक्तियों की निर्मम हत्या, स्त्रियों के बलात्कार के लिए भी शासक जाति को प्रायः दण्डित नहीं किया जाता था. स्पेन के औपनिवेशिक शासकों ने अमेरिकन इन्डियन्स का समूल विनाश कर दिया. इस प्रकार की अमानुषिक बर्बरता का कोई अन्य उदाहरण मिल पाना असम्भव है.

3.4.8.2 औपनिवेशिक शासकों द्वारा अपने सामाजिक, धार्मिक, सांस्कृतिक, शैक्षिक एवं प्रशासनिक मूल्यों की स्थापना

औपनिवेशिक शासन – अनवरत दमन, दोहन, शोषण, जातिभेद, रंगभेद और धर्मभेद की निर्मम गाथा है. उपनिवेशवाद के निहितार्थों में उपनिवेश के प्राकृतिक संसाधनों का दोहन, उपनिवेशों के लिए अपने उत्पादों के लिए नए बाज़ारों का निर्माण, और उपनिवेश (अधीनस्थ देश) में अपने धार्मिक, सामाजिक, सांस्कृतिक व शैक्षिक मूल्यों का विस्तार करना सम्मिलित है. मेकाले की शिक्षा पद्धति के द्वारा अंग्रेज़ों ने भारतीयों के एक ऐसे वर्ग को तैयार किया जो अपने वर्ण (रंग) को छोड़कर मनसा, वाचा और कर्मणा, पूरी तरह अपने गौरांग प्रभुओं के समान था. यही काम पुर्तगालियों, स्पेनियड्र्स, डचों, फ्रांसीसियों आदि ने अपने–अपने उपनिवेशों में किया था.

3.5 यूरोप में पूंजीवाद, वाणिज्यवाद का उदय और परवर्ती काल में औद्योगिक क्रान्ति के लिए अनुकूल परिस्थितियां

औपनिवेशिक साम्राज्यों की स्थापना के कारण यूरोपीय देशों में अथाह समृद्धि आई और व्यापार–संतुलन सदैव उनके पक्ष में रहने के कारण उनकी व्यापारिक गतिविधियां अपने शिखर पर पहुंच गईं. अतुलित धन–सम्पदा ने पूंजीवाद के विकास में सहयोग किया और राष्ट्रीय जीवन में व्यापार की महत्ता बढ़ने के कारण स्वाभाविक रूप से वाणिज्यवाद को भी बढ़ावा मिला. अब यूरोपीय देशों को अपना तैयार माल बेचने के लिए बाज़ार खोजने की ज़रूरत नहीं थी (क्योंकि वो अपने उपनिवेशों में ही अपना सारा माल खपा सकते थे) और न ही अपने यहां अनुपलब्ध कच्चा माल खोजने के लिए उन्हें अपने उपनिवेशों के अतिरिक्त किसी पर निर्भर रहना था. धन–सम्पदा के आधिक्य ने अधिक उन्नत औद्योगिक उपकरणों के आविष्कार के लिए अनुकूल वातावरण विकसित कर दिया था. इन अनुकूल परिस्थितियों में 18 वीं शताब्दी के अन्त में यूरोप में, विशेषकर सबसे बड़े औपनिवेशिक साम्राज्य के स्वामी इंग्लैण्ड में, औद्योगिक क्रान्ति होना कोई आश्चर्य की बात नहीं थी.

3.6 दास–व्यापार एवं दास प्रथा

3.6.1 अटलांटिक दास–व्यापार

15 वीं शताब्दी के अंत से लेकर 19 वीं शताब्दी तक चले अटलांटिक दास–व्यापार ने अनैतिकता क्रूरता और अमानवीयता की सभी हदों को पार कर दिया था. अधिकांश दासों को मध्य अफ्रीका तथा पश्चिमी अफ्रीका से एकत्र किया जाता था फिर उन्हें पश्चिमी अफ्रीकियों द्वारा पश्चिमी यूरोप के दास–व्यापारियों को बेच दिया जाता था. इसके बाद दासों को अमेरिका लाया जाता था. दक्षिण अटलांटिक क्षेत्र की और कैरीबियन क्षेत्र की अर्थ–व्यवस्था के लिए दासों की सेवाओं की नितांत आवश्यकता थी क्योंकि इन्हीं के बल पर खेतों और कारखानों में कम हो सकता था. पश्चिमी यूरोप के देशों के औपनिवेशिक साम्राज्यों की स्थापना के लिए भी दासों की सेवाओं की आवश्यकता थी. 1526 में पुर्तगालियों ने अफ्रीका से दासों की पहली खेप अमेरिका पहुंचाई थी. बाद में अन्य देशों ने भी पुर्तगाल का इस व्यवसाय में अनुकरण किया. अमेरिका में दासों को विशाल भू–क्षेत्र में कॉफ़ी, तम्बाकू, कोकोआ, चीनी, चावल तथा कपास के उत्पादन से जुड़े हुए कार्य, सोने और चांदी की खानों में काम करने के लिए, इमारतें बनाने के काम के लिए, सड़क बनाने के लिए, जहाज के निर्माण हेतु लकड़ी काटने के काम करने के लिए और घरेलू काम करने के लिए बेच दिया जाता था. इन दासों को बंधुआ दास कहा जाता था. ये दास अपनी स्वामी की संपत्ति माने जाते थे और दास महिलाओं की संतानों की भी वही स्थिति होती थी. दासों के स्वामी अपने समस्त कठिन और श्रम–साध्य काम इन दासों से करवाते थे और उनका सिर्फ़ काम था, अपने दासों पर सख्ती के साथ हुक्म चलाना.

दासों की खरीद और बिक्री बाज़ार में बिकने वाले अन्य सामानों की भांति ही होती थी. अटलांटिक दास–व्यापार से शताब्दियों पहले अफ्रीका, यूरोप और एशिया में दास प्रथा का प्रचलन था और अमेरिका में यूरोपीय औपनिवेशीकरण से पहले भी अफ्रीका से यूरोप के देशों में तथा मुस्लिम देशों में दासों का व्यापार किया जाता था. किन्तु तब अफ्रीकी दासों का व्यापार, यूरोपीय देशों की तुलना में मुस्लिम देशों से अधिक किया जाता था. अटलांटिक दास–व्यापार के समय यूरोपीय व्यापारी अफ्रीकी राज्यों के पारस्परिक युद्धों में

पराजित राज्य के बंदी बनाए गए लोगों में से दासों को खरीदते थे. दासों को विक्रेता दासों को बेचकर बदले में बंदूकें, शराब, कपड़े और यूरोप का अन्य तैयार माल प्राप्त करते थे. इस अटलांटिक दास–व्यापार में अफ्रीकन तथा यूरोपीय शासक सामान रूप से भागीदार थे. यूरोपीय दास–व्यापारी अफ्रीका में जिन स्थानों से दास खरीदते थे उनमें मुख्य आठ स्थान थे दृ सेनेगाम्बिया, अपर गुयाना, विंडवार्ड कोस्ट, गोल्ड कोस्ट, बिघ्ट ऑफ़ बियाफ्रा, पश्चिम–मध्य अफ्रीका तथा दक्षिण–पूर्व अफ्रीका.

अटलांटिक दास–व्यापार का पहला चरण 16 वीं शताब्दी में था जब कि दासों को दक्षिण अमेरिका के पुर्तगाली और स्पेनिश उपनिवेशों में भेजा जाता था परन्तु यह कुल अटलांटिक दास–व्यापार का मात्र 3ः था. दास–व्यापार के दूसरे चरण में अंग्रेज़, पुर्तगाली, फ्रांसीसी तथा डच व्यापारियों ने मुख्य भूमिका निभाई और इन दासों को मुख्यतः कैरीबियन द्वीपों और ब्राज़ील में बेचा. ऐसा अनुमान लगाया जाता है कि अटलांटिक दास–व्यापार 18 वीं शताब्दी में अपनी पराकाष्ठा पर पहुंचा. ब्रिटिश दास–व्यापारी सर जॉन हॉकिन्स को अफ्रीका, यूरोप और अमेरिका के त्रिकोणात्मक दास–व्यापार में अग्रणी माना जाता है.

अमेरिका में दासों को अपनी मर्ज़ी से विवाह करने का अधिकार नहीं था. अपने स्वामी के घर में उन्हें कभी भी परिवार के सदस्य के रूप में नहीं देखा जाता था, उन्हें तो अपने स्वामी की संपत्ति के रूप में देखा जाता था. यदि कोई दास विद्रोह करता था अथवा किसी की हत्या कर देता था तो उसे प्राणदंड दिया जाना निश्चित होता था.

3.6.2 नयी दुनिया में दासों की सेवाओं की आवश्यकता

प्रशांत महासागर के पार दास–व्यापार की उत्पत्ति अमेरिकी उपनिवेशों में श्रमिकों की कमी के कारण हुई थी. पहले अमेरिका में उपनिवेश स्थापित करने वालों ने वहां के मूल निवासियों को दास बनाया किन्तु खदान के काम में, शर्करा उत्पाद की खेती और उसके उत्पादन, शीरा और उस से शराब बनाने के और कपास उगाने के गुरुतर कार्यों हेतु उनकी संख्या बहुत कम थी. मुफ्त ज़मीनें दिए जाने वा अन्य प्रलोभनों के बावजूद यूरोप से श्रमिकों की इतनी बड़ी खेप पहुंचना बहुत मुस्किल था. अमेरिका में श्रमिकों की आपूर्ति के लिए यूरोपीय व्यापारियों ने पहले पश्चिमी अफ्रीका और फिर मध्य अफ्रीका की ओर अपनी दृष्टि डाली. सबसे पहले स्पेनियड्र्स और फिर पुर्तगालियों ने अमेरिका में अफ्रीकी दासों की आपूर्ति की. जब ब्रिटिश नौ–सैनिक शक्ति अपने उत्कर्ष पर पहुंची और अमेरिका में उनका औपनिवेशिक साम्राज्य का अत्यधिक विस्तार हो गया तो लिवरपूल और ब्रिस्टल से व्यापक स्तर पर दास–व्यापार होने लगा. यूरोप से तैयार माल अफ्रीका भेजा जाता था और उसके बदले में वहां से गुलाम खरीदकर लाए जाते थे, जिनको कि बाद में अमेरिका भेज दिया जाता था. मध्य अमेरिका ने 2 लाख, उत्तर अमेरिका ने 5 लाख और ब्राज़ील ने लगभग 45 लाख दासों का आयात किया. 1790 में ब्रिटिश वेस्टइंडीज़ लगभग 5 लाख 24 हज़ार दास थे और फ्रेंच वेस्टइंडीज़ में उनकी संख्या 6 लाख 43 हज़ार थी. स्पेन, नीदरलैंड्स तथा डेनमार्क के उपनिवेशों में भी दासों की संख्या लाखों में थी. इन दासों को इतनी कठिन और अमानवीय परिस्थितियों में रक्खा जाता था कि इन में से अधिकांश की अकाल मृत्यु हो जाती थी. दास–व्यापार अपने समय का सबसे मुनाफ़े वाला व्यापार था. पुनर्जागरण काल से ही कुछ धर्म–प्रचारक दास–व्यापार को ईसाई धर्म की शिक्षा के विरुद्ध बताते आ रहे थे किन्तु अधिकांश लोग यह मानते थे कि इस दुनिया में गोरों और कालों की अलग–अलग भूमिकाएँ हैं और यूरोपीय सभ्यता तथा ईसाई धर्म के वरदान के बदले में अश्वेतों का कठोर श्रम करना तो सर्वथा उचित था.

इंग्लैंड और यूरोप के अन्य भाग में दास–व्यापार के विरुद्ध 'रिलीजस सोसाइटी ऑफ़ फ्रेंड्स' तथा विलियम विल्बरफ़ोर्स जैसे सुधारकों ने अभियान छेड़ा. 1803 में डेनमार्क ने और 1807 में ब्रिटेन ने दास–व्यापार पर प्रतिबन्ध लगा दिया और 1807 में ही अमेरिका ने दासों के आयात पर प्रतिबन्ध लगा दिया किन्तु स्पेन, पुर्तगाल, ब्राज़ील और फ्रांस इस व्यापार में पूर्ववत संलग्न रहे और 1852 तक यह व्यापार चलता रहा.

यूरोप के अधिकांश शक्तिशाली देश – पुर्तगाल, स्पेन, नीदरलैण्ड, फ्रांस ब्रिटेन आदि दास–व्यापार में लिप्त थे. नए उपनिवेशों को बसाने में तथा खेती सहित कठिन श्रम के सभी कार्यों के लिए न्यूनतम मज़दूरी पर कार्य करने वाले दासों से अधिक उपयोगी और कोई नहीं हो सकता था. 16 वीं शताब्दी के अन्तिम वर्षों में फ्रांसिस ड्रेक तथा जॉन हाकिंस ने दास–व्यापार द्वारा इंग्लैण्ड के लिए प्रचुर मात्रा में धन कमाया था. अफ्रीका से लाकर लाखों दासों का अमेरिका में निर्यात करने के कारण इंग्लैण्ड के शहर ब्रिस्टल व लिवरपूल अत्यन्त समृद्ध हो गए थे. 1776 तक अमेरिका के 13 उपनिवेशों में में लगभग 6 लाख दास आयात किए गए थे. अश्वेत दासों के साथ उनके मालिकों द्वारा जो अमानवीय व्यवहार किया जाता था उसका शब्दों में वर्णन कर पाना असम्भव है. स्पेनवासी, अमेरिकन इण्डियन्स को गुलाम बनाना अपना अधिकार समझते थे. सेपुवेदा ने कहा था – 'अमेरिकी इण्डिन्स प्राकृतिक रूप से गुलाम होते हैं.'

स्वमूल्यांकित प्रश्न

निम्न पर संक्षिप्त टिप्पणी कीजिए

1. भौगोलिक खोजों की तत्कालीन आवश्यकता एवं उनके लिए अनुकूल परिस्थितियां
2. ब्रिटिश औपनिवेशिक साम्राज्य
3. विजित जाति का दमन
4. नयी दुनिया में दासों की सेवाओं की आवश्यकता

3.7 सारांश

महान भौगोलिक खोजों के युग ने पृथ्वी के आकार और उसके स्वरुप से सम्बंधित अधूरी और दोषपूर्ण जानकारी में आवश्यक संशोधन किए. अब सभी महाद्वीपों तथा विभिन्न देशों के विषय में नयी जानकारी प्राप्त हुई और भौगोलिक अध्ययन को भी एक वैज्ञानिक पद्धति प्राप्त हुई.

यूरोपीय देशों में पुर्तगाल ने भौगोलिक खोजों के क्षेत्र में अग्रणी भूमिका निभाई थी. आगे चलकर स्पेन, नीदरलैण्ड, फ्रांस और इंग्लैण्ड ने भी नई खोजें करने में अपना योगदान दिया था. 1453 में तुर्कों द्वारा कांस्टेन्टिनोपल पर अधिकार करने के बाद पश्चिमी यूरोपीय देशों के लिए यूरोप और पूर्व के मध्य एशिया माइनर और सीरिया से होकर जाने वाला भू–क्षेत्रीय मार्ग अवरुद्ध हो चुका था. बार्तालोम्यू डियाज, कोलम्बस, वास्कोडिगामा, वोराज़ानो, जे0 कार्तियर, जॉन स्मिथ आदि ने अफ्रीका, एशिया तथा अमेरिका में अज्ञात क्षेत्रों की खोज की.

भौगोलिक खोजों से यूरोपीय देशों को अफ्रीका, एशिया तथा अमेरिका में सैनिक दृष्टि से कमज़ोर किन्तु प्राकृतिक संसाधनों में समृद्ध क्षेत्रों पर अपना अधिकार करने का अवसर मिला. इन क्षेत्रों पर अपना प्रभुत्व स्थापित कर यूरोपीय देशों ने अपने–अपने औपनिवेशिक साम्राज्य स्थापित किए. उपनिवेशवाद ने यूरोपीय राज्यों के संसाधनों में अपार वृद्धि की. राजनीतिक दृष्टि से इसने शासकों को अधिक साधन–सम्पन्न बनाकर यूरोप में निरंकुश राजतन्त्र को सुद्रढ़ बनाया. उपनिवेशों से अपार धन–सम्पदा आ जाने से यूरोपीय जन–जीवन स्तर में सुधार आया तथा कला का सर्वतोमुखी विकास हुआ. पाश्चात्य सभ्यता के सम्पर्क में आने से औपनिवेशिक प्रजा को भी भौतिक प्रगति का महत्व समझ में आने लगा और धीरे–धीरे उपनिवेशों में सामाजिक, शैक्षिक, सांस्कृतिक व राजनीतिक चेतना का विकास होने लगा. धीरे–धीरे वाणिज्य का केंद्र 'भूमि' से हटकर 'समुद्र' में स्थापित हो गया. अब यूरोपीय अपनी आर्थिक, राजनीतिक एवं सांस्कृतिक महत्वाकांक्षाओं को साकार कर सकते थे.

यूरोप में भौगोलिक खोजों ने वाणिज्यिक क्रान्ति को और सशक्त व व्यापक बना दिया था. 16 वीं एवं 17 वीं शताब्दी में वाणिज्यिक क्रान्ति अपनी उन्नति और विकास के चरम शिखर पर पहुँच गई. वास्तव में भौगोलिक खोजों, औपनिवेशिक साम्राज्यों की स्थापना तथा दास–व्यापार का परस्पर घनिष्ठ सम्बन्ध है. इन सबने मिलकर मनुष्य के संकुचित दृष्टिकोण को व्यापक बनाने में तथा विश्व इतिहास को मध्य युग से आगे बढ़ाकर आधुनिक युग में प्रविष्ट कराने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी.

यूरोपीय खोजों ने पूर्व पर पश्चिम की श्रेष्ठता स्थापित कर दी. व्यापारिक गतिविधियों के साथ यूरोपीय देशों ने नए खोजे हुए क्षेत्रों में ईसाई धर्म–प्रचार को भी अपना लक्ष्य बनाया. जो यूरोपीय अंतर्राष्ट्रीय व्यापार केवल भूमध्यसागर तक सीमित था वह भौगोलिक खोजों के बाद पूरे विश्व में फैल गया. अब यूरोप में पूर्व से आयातित सामानों में मसाले, सूती तथा रेशमी कपड़े, पोर्सलिन आदि के साथ–साथ पश्चिम तम्बाकू, कोको, चॉकलेट, कुनैन और अफ्रीका से दास, हाथी दांत, शुतुरमुर्ग के पंख आदि सम्मिलित हो गए. आयातित शक्कर, कॉफ़ी, चावल और कपास की मात्रा में भी तीव्र वृद्धि हुई. यूरोप में जहाँ सोने–चांदी की कमी थी, वहां अब इसकी आपूर्ति इसकी मांग से कहीं अधिक होने लगी. वाणिज्यवाद के विकास से यूरोप में सामन्तवाद के पतन की प्रक्रिया तीव्र हो गई और पश्चिमी यूरोप में पूंजीवाद उभर कर आने लगा. भौगोलिक खोजों के फलस्वरूप व्यापारिक गतिविधियों में अप्रत्याशित वृद्धि ने पूंजीवाद व राष्ट्रीय वाणिज्यवाद को बढ़ावा दिया और अनेक व्यापारिक बैंकों की स्थापना हुई. वाणिज्यिक व्यवस्था के उत्थान के कारण सभी यूरोपीय शक्तियों ने निर्यात को बढ़ावा देने और आयात को घटाने के प्रयास किए.

भौगोलिक खोजों ने उपनिवेशवाद तथा साम्राज्यवाद के उदय को सम्भव बनाया. नए क्षेत्रों की खोज के बाद अनेक यूरोपीय उन क्षेत्रों में बस गए और उन्होंने उन पर अपना अधिकार जमा कर वहां अपना शासन स्थापित कर लिया. पुर्तगालियों, स्पेन वासियों, फ्रांसीसियों, डचों तथा अंग्रेज़ों ने एशिया, अफ्रीका तथा अमेरिका में अपने द्वारा खोजे गए क्षेत्रों में अपने–अपने उपनिवेश स्थापित किए. इसी प्रकार रूसी भौगोलिक खोजों ने साइबेरिया के औपनिवेशिकीकरण का मार्ग प्रशस्त किया. औपनिवेशिक शक्तियों ने अपने–अपने उपनिवेशों का व्यवस्थित दोहन प्रारम्भ किया.

भौगोलिक खोजों ने ज्ञान की अन्य विधाओं जैसे वनस्पतिशास्त्र, जन्तुशास्त्र, मानव–जाति विज्ञान आदि में नई खोजों के अवसर उपलब्ध कराए. यूरोपीयों ने आलू, मक्का, टमाटर और तम्बाकू की खेती करना शुरू कर दिया. राष्ट्रीय संसाधनों में वृद्धि के कारण कला की विभिन्न विधाओं को शासक वर्ग तथा धनाढ्य वर्ग द्वारा प्रोत्साहन दिया जाने लगा और वैज्ञानिक आविष्कारों के लिए समुचित धन भी उपलब्ध कराया जाने लगा जिसका कि परिणाम कला व विज्ञान के क्षेत्र में अभूतपूर्व प्रगति के रूप में दिखाई दिया.

भौगोलिक खोजों ने यूरोपीय देशों के मध्य प्रतिस्पर्धा को बढ़ाया जिसकी परिणति अनेक बार भीषण युद्धों में हुई।अटलांटिक दास–व्यापार में अफ्रीकन तथा यूरोपीय शासक समान रूप से भागीदार थे.अटलांटिक दास–व्यापार का पहला चरण 16 वीं शताब्दी में था जब कि दासों को दक्षिण अमेरिका के पुर्तगाली और स्पेनिश उपनिवेशों में भेजा जाता था. दास–व्यापार के दूसरे चरण में अंग्रेज़, पुर्तगाली, फ्रांसीसी तथा डच व्यापारियों ने मुख्य भूमिका निभाई और इन दासों को मुख्यतः कैरीबियन द्वीपों और ब्राज़ील में बेचा. ऐसा अनुमान लगाया जाता है कि अटलांटिक दास–व्यापार 18 वीं शताब्दी में अपनी पराकाष्ठा पर पहुंचा. ब्रिटिश दास–व्यापारी सर जॉन हॉकिन्स को अफ्रीका, यूरोप और अमेरिका के त्रिकोणात्मक दास–व्यापार में अग्रणी माना जाता है. अमेरिका में श्रमिकों की आपूर्ति के लिए यूरोपीय व्यापारियों ने पहले पश्चिमी अफ्रीका और फिर मध्य अफ्रीका की ओर अपनी दृष्टि डाली. सबसे पहले स्पेनियड्र्स और फिर पुर्तगालियों ने अमेरिका में अफ्रीकी दासों की आपूर्ति की. जब ब्रिटिश नौ–सैनिक शक्ति अपने उत्कर्ष पर पहुंची और अमेरिका में उनका औपनिवेशिक साम्राज्य का अत्यधिक विस्तार हो गया तो लिवरपूल और ब्रिस्टल से व्यापक स्तर पर दास–व्यापार होने लगा. यूरोप से तैयार माल अफ्रीका भेजा जाता था और उसके बदले में वहां से गुलाम खरीदकर लाए जाते थे, जिनको कि बाद में अमेरिका भेज दिया जाता था. दास–व्यापार अपने समय का सबसे मुनाफ़े वाला व्यापार था. यूरोप के अधिकांश शक्तिशाली देश – पुर्तगाल, स्पेन, नीदरलैण्ड, फ्रांस ब्रिटेन आदि दास–व्यापार में लिप्त थे। नए उपनिवेशों को बसाने में तथा खेती सहित कठिन श्रम के सभी कार्यों के लिए न्यूनतम मज़दूरी पर कार्य करने वाले दासों से अधिक उपयोगी और कोई नहीं हो सकता था.

3.8 पारिभाषिक शब्दावली

कुतुबनुमा – दिशा सूचक यंत्र

एस्ट्रोलोव – अक्षांश नापने का यंत्र
वाइकिंग्स – घुमंतू समुद्री दस्यु
वेनीशियन – इटली के शहर वेनिस के निवासी
निर्बाध – बिना किसी बाधा और बिना किसी रुकावट के
क्रूस युद्ध – ईसाईयों द्वारा धर्म–विजय हेतु किए जाने वाले सैनिक अभियान
इंडियन अमेरिकन्स – रैड इंडियंस
स्पेनियड्र्स – स्पेन के निवासी

3.9 स्वमूल्यांकित प्रश्नों के उत्तर

1. देखिए 3. 2. 1
2. देखिए 3. 3. 5
3. देखिए 3. 3. 8
4. देखिए 3. 4. 2

3.10 सन्दर्भ ग्रन्थ

1. अर्नाल्ड, डेविड , दि एज ऑफ़ डिस्कवरी 1400–1600,लंकास्टर, 2002
2. एर्मेस्तो फेलिपो फ़र्नान्डेज़ , पाथ फाइंडर्सरू ए ग्लोबल हिस्ट्री ऑफ़ एक्सप्लोरेशन, न्यूयॉर्क, 2006
3. पेनरोज़, बी. , ट्रेवल एंड डिस्कवरी इन दि रिनेसां, कैम्ब्रिज, 1952
4. पेरी, जे. एच. , दि डिस्कवरी ऑफ़ दि सी, कैलिफोर्निया, 1981
5. प्रमोद कुमार , आधुनिक यूरोप का इतिहास (1450–1789), दिल्ली, 2016

3.11 उपयोगी पाठ्य सामग्री

बीज़ले, सी. रेमण्ड दृ प्रिंस हेनरी दि नेविगेटर, दि हीरो ऑफ़ पोर्चगाल एंड ऑफ़ मॉडर्न डिस्कवरी , 1394 , 1460, लन्दन, 1894

फ़ौट, सी. ब्रेड , क्लाइव, फाउंडर ऑफ़ ब्रिटिश इंडिया, वाशिंगटन, 2013

मार्क बेन्स–जोन्स , क्लाइव ऑफ़ इंडिया, लन्दन, 1974

मार्टिंस, जे. पी. ओलेवेरा , दि गोल्डन एज ऑफ़ प्रिंस हेनरी दि नेविगेटर एंड दि रिजल्ट्स, लन्दन, 1877

3.10निबंधात्मक प्रश्न

1. अटलांटिक दास–व्यापार पर एक आलोचनात्मक निबंध लिखिए.

इकाई चारः यूरोप में वाणिज्यवाद और व्यापारिक क्रान्ति

4.1 प्रस्तावना

4.2 उद्देश्य

4.3. वाणिज्यिक क्रान्ति एवं व्यापारिक क्रान्ति से पूर्व अंतर्राष्ट्रीय यूरोपीय व्यापार एवं वाणिज्य का विकास

4.3.1 प्रारंभिक व्यापारिक संघ तथा अंतर्राष्ट्रीय व्यापारिक गतिविधियाँ

4.3.2 हैन्सियाटिक लीग

4.3.3 हेनरी दि नेविगेटर

4.4 15 वीं तथा 16 वीं शताब्दी में हुई भौगोलिक खोजों का यूरोपीय व्यापार पर प्रभाव

4.4.1 भौगोलिक खोजें

4.4.2 यूरोप से पूर्व और पश्चिम की ओर होने वाला व्यापार

4.4.3 यूरोप, अफ्रीका और अमेरिका के मध्य त्रिकोणात्मक व्यापार

4.5 वाणिज्यिक क्रान्ति के दौरान वित्तीय सेवाओं का विकास

4.5.1 बैंकिंग

4.5.2 निवेशक कम्पनियों का विकास

4.5.3 प्राचीन एवं मध्यकालीन 'गिल्ड व्यवस्था' का अंत (शिल्पी–संघ व्यवस्था)

4.5.4 पुटिंग आउट सिस्टम (घरेलू व्यवस्था)

4.6 वाणिज्यवाद, व्यापारिक क्रान्ति तथा उपनिवेशवाद का अन्तः सम्बन्ध

4.6.1 पुर्तगाल, स्पेन और नीदरलैंड के उपनिवेश

4.6.2 ब्रिटिश उपनिवेश

4.7 यूरोप में वाणिज्यिक एवं व्यापारिक क्रान्ति के परिणाम

4.7.1 यूरोप में अथाह समृद्धि का आगमन

4.7.2 पूंजीवाद का उदय

4.7.3 यूरोपीय सभ्यता का प्रसार

4.7.4. दास–प्रथा का पुनर्प्रचलन

4.7.5 मध्यवर्ग का उदय

4.7.6 नगरों का विकास तथा जनसँख्या विस्फोट

4.7.7 औद्योगिक क्रान्ति की पृष्ठभूमि तैयार करना

4.8 सारांश

4.9 पारिभाषिक शब्दावली

4.10 सन्दर्भ ग्रंथ

4.11 उपयोगी नाठ्य सामग्री

4.11 स्वमूल्यांकित प्रश्न संक्षिप्त टिप्पणी के उत्तर

4.12 निबंधात्मक प्रश्न

4.1 प्रस्तावना

वाणिज्यवाद वह आर्थिक नीति है जिसके अंतर्गत प्रत्येक देश साध्य के औचित्य अथवा अनौचित्य पर विचार किए बिना किसी भी प्रकार से अधिक से अधिक धन एकत्र करने के लिए प्रयत्नशील रहता है. इस नीति के पीछे धारणा यह है कि जो देश जितना अधिक समृद्ध होता है, वह उतना ही अधिक शक्तिशाली होता है. वाणिज्यवाद के प्रतिपादकों में थॉमस मून तथा फ़िलिप वॉन होर्निक प्रमुख हैं. वाणिज्यवाद के प्रारंभिक आलोचकों में हम निकोलस बरबन का नाम ले सकते हैं.

वाणिज्यिक क्रान्ति ने मध्ययुगीन अस्थिर, सीमित क्षेत्र तक व्याप्त और महत्वाकांक्षा–हीन, केवल जीवन–निर्वाह तक सीमित अर्थव्यवस्था को एक नया व्यापक अंतर्राष्ट्रीय स्वरुप प्रदान किया, उसमें गतिशीलता व महत्वाकांक्षा का संचार किया और अंततः पूँजीवादी व्यवस्था को विश्वव्यापी बनाया. 'वाणिज्यवाद' तथा 'वाणिज्यिक क्रान्ति' शब्द, 20 वीं शताब्दी के आर्थिक इतिहासकार रोबेर्टो सबातिनो लोपेज़ की देन हैं. जो कि उन्होंने अपनी पुस्तक दृ 'दि कमर्शियल रेवोलुशन ऑफ़ दि मिडिल एजेज़' में प्रयुक्त किए थे. 13 वीं के उत्तरार्ध से लेकर 18 वीं शताब्दी के प्रारंभ तक यूरोपीय आर्थिक विस्तार, उपनिवेशवाद और वाणिज्यवाद को हम वाणिज्यिक क्रान्ति के रूप में जानते हैं. वाणिज्यिक क्रान्ति ने आधुनिक युग के प्रारंभ में समस्त विश्व की दिशा और दशा बदल दी. अंतर्राष्ट्रीय और स्थानीय व्यापार को ध्यान में रखते हुए विभिन्न राज्यों में नए क़ानून बनाए गए. अब राज्यों ने अपने राष्ट्रीय व्यापार और उद्योग को अंतर्राष्ट्रीय प्रतिस्पर्धा से सुरक्षा प्रदान करने के लिए उन्हें राज्य की ओर से प्रोत्साहन तथा सहायता देना प्रारंभ कर दिया.

ईसाई शक्तियों को अपने जल–मार्गीय धर्म–युद्ध (11 वीं शताब्दी से प्रारम्भ) अभियानों के दौरान मसाले, रेशम तथा यूरोप में अन्य दुर्लभ वस्तुओं की प्राप्ति हुई जिसने मध्यकाल के उत्तरार्ध में उन्हें अपने व्यापार का विस्तार करने के लिए प्रेरित किया। 13 वीं शताब्दी में हेन्सियाटिक लीग ने एक संगठित व्यापार–संघ बनाकर अंतर्राष्ट्रीय व्यापार को नयी ऊंचाइयों तक पहुँचाने में सफलता प्राप्त की थी. 1453 में तुर्कों द्वारा कुन्सतुनिया पर अधिकार के बाद पश्चिमी यूरोप के देशों (पुर्तगाल, स्पेन, नीदरलैण्ड और इंग्लैण्ड) के लिए थल–मार्ग से पूर्वी व्यापार असम्भव हो गया था. इस व्यापारिक संकट ने शासकों द्वारा प्रायोजित सफल भौगोलिक खोजों का दौर प्रारम्भ किया. एशिया, अफ्रीका व अमेरिका में नए क्षेत्रों की खोज और तदन्तर उन पर यूरोपीय देशों के अधिकार के कारण यूरोपीय, एशियायी, अफ़्रीकी तथा अमेरिकी देशों का आर्थिक दृष्टि से बहु–आयामीय सम्बन्ध

स्थापित हो गया. नव गठित यूरोपीय राज्य 15 वीं तथा 16 वीं शताब्दी में पुराने व्यापार मार्गों के वैकल्पिक व्यापार–मार्ग खोज रहे थे. भौगोलिक खोजों ने नए–नए व्यापारिक मार्गों की खोज को संभव बनाया और शीघ्र ही यूरोपीय देशों से अंतर्राष्ट्रीय व्यापार का जाल बिछ गया. यूरोपीय राष्ट्रों ने समृद्धि के नए स्रोतों की तलाश की और वो उन्हें प्राप्त भी हुए. वाणिज्यिक क्रान्ति आम वाणिज्य में वृद्धि तथा बैंकिंग, बीमा तथा निवेश जैसी वित्तीय सेवाओं के विकास में दृष्टिगोचर हुई.

16 वीं से 18 वीं शताब्दी के बीच में यूरोपीयों ने उल्लेखनीय जहाजी आविष्कार किए. अब यूरोपीय शक्तियां सुगमता से अपने अतर्राष्ट्रीय व्यापार को बढ़ा सकती थीं और अपने औपनिवेशिक साम्राज्य स्थापित कर सकती थीं. मानचित्रों, पाल वाले जहाजों, दिशा सूचक यंत्र, नक्षत्रीय गणना के आधार पर दिशाओं के ज्ञान ने वाणिज्यिक क्रान्ति को नया बल प्रदान किया. पुर्तगाल के प्रिंस हेनरी दि नेविगेटर ने प्रशांत महासागर में साहसिक अभियान का दौर प्रारंभ किया, बर्तोलोम्यू दियास, वास्कोडिगामा, फर्दिनेंद मेगेलन, क्रिस्टोफर कोलंबस, जेकेस कार्टियर आदि ने पूर्व और पश्चिम में नए–नए क्षेत्रों की खोज ने व्यापार और वाणिज्य को नयी दिशा और नए आयाम दिए.

अफ्रीका, उत्तर अमेरिका और यूरोप के मध्य त्रिकोणात्मक व्यापार ने व्यापारिक क्रांति को एक नया बल प्रदान किया. दास अफ्रीका से लाए जाते थे और फिर उन्हें अमेरिका भेजा जाता था; कच्चा माल अमेरिका से आता था और फिर उसका उपयोग यूरोप की फैक्टरियों में तैयार माल बनाने के लिए किया जाता था फिर यह तैयार माल अमेरिका में ऊंचे दामों पर बेचा जाता था. कोकोआ, कॉफ़ी, मक्का, कसावा और आलू का प्रचलन सारी दुनिया में हो गया. वाणिज्यिक एवं व्यापारिक क्रान्ति का एक परिणाम यह हुआ कि बेहतर खाने और बेहतर सुख–सुविधाओं के कारण यूरोप की जनसँख्या में वृद्धि हुई. इसका सबसे बड़ा फायदा यह हुआ कि अब यूरोप में प्रचुर मात्रा में धन की उपलब्धता हो गयी और इसी के बल पर वहां औद्योगिक क्रान्ति संभव हो सकी. भौगोलिक खोजों ने व्यापार के लिए नयी संभावनाओं को विकसित किया. अबतक केप ऑफ़ गुड होप होते हुए भारत तक पहुँचने के समुद्री मार्ग की खोज की जा चुकी थी. पुर्तगाल, पूर्व से पश्चिम के व्यापार की मुख्य कड़ी बन गया था. धीरे–धीरे नीदरलैंड के शहर एंटवर्प की भी इस व्यापार में महत्वपूर्ण भूमिका हो गयी.

यूरोप और चीन के मध्य व्यापार की शुरूआत 16 वीं शताब्दी में हुई. भारत में गोवा और चीन में मकाऊ पुर्तगाली व्यापारिक ठिकाने बन गए. बाद में इस वाणिज्यिक–व्यापारिक होड़ इंग्लैंड भी आ गया और उसने प्रारंभ में अपनी अभिरुचि प्रशांतसागर के पार वाले क्षेत्र की और केन्द्रित की. 1450 से लेकर 1700 तक यूरोपीय आर्थिक केंद्र, इस्लाम के अनुयायियों के भूमध्यसागर से हटकर पाश्चात्य यूरोप (पुर्तगाल, स्पेन, फ्रांस, नीदरलैंड और एक सीमा तक इंग्लैंड) में स्थानांतरित हो गया था.

वाणिज्यवाद ने उपनिवेशवाद को बढ़ावा दिया. यह सिद्धान्त कि – उपनिवेश का अस्तित्व शासक राज्य के लाभ के लिए है' उपनिवेशों के दोहन का मूल मन्त्र बन गया. शासक राष्ट्रों ने अपने उपनिवेशों को स्वतन्त्र रूप से व्यापार करने की अनुमति नहीं दी, उन्हें अपना तैयार माल खरीदने का खरीदार और कच्चे माल की आपूर्ति करने वाला बनाकर छोड़ दिया. इस काल में व्यापारिक कम्पनियों ने ताज के प्रतिनिधि की भूमिका निभाई. वाणिज्यिक क्रान्ति ने आधुनिक कारखानों में वृहद मात्रा में उत्पादित माल की खपत के लिए उपनिवेशों के बाज़ार पहले ही तैयार कर दिए थे। इन अनुकूल परिस्थितियों में औद्योगिक क्रान्ति यूरोपीय इतिहास में कोई आश्चर्यजनक नहीं अपितु नितान्त स्वाभाविक घटना बनकर प्रकट हुई थी.

4.2 उद्देश्य

इस इकाई का उद्देश्य आपको उत्तर मध्यकाल में यूरोप में हुई वाणिज्यिक तथा व्यापारिक प्रगति से अवगत कराना है. इस इकाई के अध्ययन से आपको ज्ञात होगा कि इस काल में यूरोपीय व्यापार एवं वाणिज्य का अत्यधिक विस्तार हुआ और उसका स्वरुप अंतर्राष्ट्रीय हो गया.

1. इस इकाई के प्रथम चरण में आप वाणिज्यिक एवं व्यापारिक क्रान्ति से पूर्व अंतर्राष्ट्रीय यूरोपीय व्यापार एवं वाणिज्य की प्राम्भिक प्रगति के विषय में जान सकेंगे.
2. इस इकाई के दूसरे चरण में आप 15 वीं तथा 16 वीं शताब्दी में बदली हुई राजनीतिक परिस्थितियों तथा भौगोलिक खोजों के फस्वरूप नयी व्यापारिक एवं वाणिज्यिक संभावनाओं के विषय में जान सकेंगे.
3. इस इकाई के तीसरे चरण में आप यूरोप से पूर्व और पश्चिम की ओर होने वाले व्यापार तथा यूरोप, अफ्रीका तथा अमेरिका के मध्य होने वाले त्रिकोणात्मक व्यापार, विशेषकर दास–व्यापार की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे.
4. इस इकाई के चौथे चरण में आप वाणिज्यिक क्रान्ति के दौरान हुई वित्तीय सेवाओं के क्षेत्र में हुए विकास की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे.
5. इस इकाई के पांचवें चरण में आप वाणिज्यवाद, व्यापारिक क्रान्ति तथा उपनिवेशवाद के अन्तः सम्बन्ध की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे.
6. इस इकाई के छठे चरण में आप यूरोप में वाणिज्यिक एवं व्यापारिक क्रान्ति के परिणामों की जानकारी प्राप्त करेंगे तथा इसके साथ ही आप यूरोप में औद्योगिक क्रान्ति की पृष्ठभूमि तैयार करने में वाणिज्यवाद तथा व्यापारिक क्रान्ति के योगदान के विषय में जानकारी भी प्राप्त कर सकेंगे.

4.3. वाणिज्यिक क्रान्ति एवं व्यापारिक क्रान्ति से पूर्व अंतर्राष्ट्रीय यूरोपीय व्यापार एवं वाणिज्य का विकास

4.3.1 प्रारंभिक व्यापारिक संघ तथा अंतर्राष्ट्रीय व्यापारिक गतिविधियाँ

यहूदी तथा मुस्लिम व्यापारियों ने 11वीं शताब्दी से भी पहले व्यापारी–संघ स्थापित कर लिए थे. वो बहुत पहले ही 'वाणिज्यिक क्रान्ति' में प्रयुक्त की जाने वाली ऋण–सुविधा व मुद्रा–विनिमय की प्रणाली का विकास कर चुके थे.

ईसाई शक्तियों को अपने जल–मार्गीय धर्म–युद्ध (11 वीं शताब्दी से प्रारम्भ) अभियानों के दौरान मसाले, रेशम तथा यूरोप में अन्य दुर्लभ वस्तुओं की प्राप्ति हुई जिसने कि मध्यकाल के उत्तरार्ध में उन्हें अपने व्यापार का विस्तार करने के लिए प्रेरित किया.

4.3.2 हैन्सियाटिक लीग

हैन्सियाटिक लीग एक ऐसा शिल्पीसंघ था जो कि व्यापारियों के वाणिज्यिक हितों की रक्षा करने के लिए बनाया गया था. इसने लगभग चार सौ साल बाल्टिक सागर में और उत्तरी यूरोप के समुद्री तट पर होने वाले व्यापार पर अपना प्रभुत्व स्थापित किया था. इस लीग का उद्देश्य व्यापार–मार्ग में आने वाले विभिन्न शहरों और देशों मे शिल्पीसंघ के आर्थिक हितों और कूटनीतिक अधिकारों की रक्षा करना था. इस लीग की अपनी क़ानून प्रणाली थी और अपनी सेना भी थी. इसकी तुलना हम 'फ्री इम्पीरियल सिटी' से कर सकते हैं.

जर्मनी के व्यापारियों ने 1300 में एक व्यापारिक संघ के रूप में 'हैन्सियाटिक लीग' की स्थापना की थी जिसमें कि लगभग 100 नगरों के व्यापारी सम्मिलित थे. इसकी शुरुआत मोटे ऊनी कपड़े के व्यापार से हुई थी, बाद में इसमें अच्छी किस्म के ऊनी तथा रेशमी कपड़ों, लकड़ी तथा धातु निर्मित उत्पाद, फ़र, शहद, गेहूं आदि का व्यापार भी सम्मिलित हो गया. इस लीग ने उत्तरी यूरोप तथा बाल्टिक सागर क्षेत्र में व्यापक स्तर पर व्यापारिक गतिविधियां की. इस लीग का उद्देश्य व्यापारियों के आर्थिक हितों की अपने–अपने शहर, देश और व्यापार–मार्गों पर रक्षा करना था. 'हैन्सियाटिक लीग' के अन्तर्गत शहरों के अपने कानून और समुद्री डाकुओं का मुकाबला करने के लिए अपनी सेनाएं थीं. सैक्सोनी तथा वैस्टफ़ेलिया के लिए ल्यूबेक सबसे बड़ा व्यापारिक केन्द्र बना. लगभग दो सौ वर्षों तक यह लीग यूरोपीय व्यापार में प्रभावशाली भूमिका निभाने में सफल रही. ल्युबेक तथा विस्बी शहर इस लीग की व्यापारिक गतिविधियों के मुख्य केंद्र थे. अपने चरमोत्कर्ष के समय इस लीग का व्यापार ब्रजेस, बर्जेन एवं लन्दन सहित लगभग 170 शहरों तक फैल गया था. हर शहर में एक किलेनुमा प्रांगण में इस लीग के अपने गोदाम थे, अपने तुला–गृह थे, अपने चर्च थे और अपने कार्यालय थे. हैन्सियाटिक शहरों की निष्ठा पवित्र रोमन सम्राट के प्रति होती थी. हैन्सियाटिक लीग ने विभिन्न व्यापार–मार्गों

पर अपना प्रभुत्व स्थापित कर रक्खा था और वह राज्यों की नीतियों पर भी अपना प्रभाव स्थापित करने में सफल रहती थी. राजनीतिक प्रभाव के साथ–साथ लीग एक सैनिक शक्ति के रूप में भी उभर कर आई थी. डेनमार्क के राज्य से युद्ध कर लीग ने उसे अपने व्यापारिक लाभ का 15ः लीग को देने के लिए बाध्य किया था. हैन्सियाटिक लीग ने ल्युबेक और डेज़िंग के पोत–निर्माण उद्योग के अधिकांश भाग पर अपना अधिकार कर रक्खा था, इस कारण उसे अपना समुद्री–व्यापार बढ़ाने में अत्यधिक सुविधा प्राप्त थी. डची ऑफ़ बरगुंडी में ब्रजेस, एंटवर्प तथा होलैंड के शामिल होने के बाद 'हैन्सियाटिक लीग' का व्यापार पर एकाधिकार धीरे–धीरे क्षीण होने लगा. और अनाज का व्यापार अब ब्रजेस से एम्सटर्दम की और स्थानांतरित हो गया.

4.3.3 हेनरी दि नेविगेटर

पुर्तगाल के प्रिंस हेनरी दि नेविगेटर ने अटलांटिक महासागर में साहसिक अभियान का दौर प्रारंभ किया. प्रिंस हेनरी का संरक्षण प्राप्त नाविकों ने अफ्रीका के तटीय क्षेत्रों पोर्टो सान्तो, मदेरिया, एज़ोरेस पर पुर्तगाली उपनिवेश की स्थापना की. हेनरी दि नेवीगेटर ने अफ्रीका में सफल निजी व्यापारिक अभियानों की शुरूआत की. उसने सैग्रेस के तट पर एक अनुसन्धान केन्द्र की स्थापना की और वहां से खगोलशास्त्रियों, पोत निर्माताओं, मानचित्र विशेषज्ञों आदि की सहायता से नाविक अभियान भेजने प्रारम्भ किए. उसके प्रोत्साहन और संरक्षण में 1644 से 1646 के बीच 40 व्यापारिक पोत लागोस से अपने अभियान के लिए रवाना हुए. प्रिंस हेनरी के नाविकों ने सहारा के रेगिस्तान तक पहुँचने में सफलता प्राप्त की. कुछ ही समय में अफ्रीका से प्रचुर मात्रा में सोना पुर्तगाल पहुँचने लगा और पुर्तगाल दास–व्यापार में भी अग्रणी देश बन गया.

4.4 15 वीं तथा 16 वीं शताब्दी में हुई भौगोलिक खोजों का यूरोपीय व्यापार पर प्रभाव

4.4.1 भौगोलिक खोजें

1453 में तुर्कों द्वारा कुन्सतुनिया पर अधिकार के बाद पश्चिमी यूरोप के देशों (पुर्तगाल, स्पेन, नीदरलैण्ड और इंग्लैण्ड) के लिए थल–मार्ग से पूर्वी व्यापार असम्भव हो गया था. इस व्यापारिक संकट ने शासकों द्वारा प्रायोजित सफल भौगोलिक खोजों का दौर प्रारम्भ किया.

बर्तोलोम्यू दियास, वास्कोडिगामा, फर्दिनेंद मेगेलन, क्रिस्टोफर कोलंबस, जेकेस कार्टियर आदि ने पूर्व और पश्चिम में नए–नए क्षेत्रों की खोज ने व्यापार और वाणिज्य को नयी दिशा और नए आयाम दिए. एशिया, अफ्रीका व अमेरिका में नए क्षेत्रों की खोज और तदन्तर उन पर यूरोपीय देशों के अधिकार के कारण यूरोपीय, एशियायी, अफ़्रीकी तथा अमेरिकी देशों का आर्थिक दृष्टि से बहु–आयामीय सम्बन्ध स्थापित हो गया. वैकल्पिक व्यापारिक मार्गों की खोज से यूरोपीय राज्यों को अंतर्राष्ट्रीय–व्यापार का एक वृहत जाल फैलाने में सफलता मिली. इस अंतर्राष्ट्रीय–व्यापार से यूरोपीय देशों को अतुलित धन प्राप्त हुआ. भौगोलिक खोजों ने व्यापार के लिए नयी संभावनाओं को विकसित किया. 16 वीं से 18 वीं शताब्दी के बीच में यूरोपीयों ने उल्लेखनीय जहाजी आविष्कार किए. अब यूरोपीय शक्तियां सुगमता से अपने अतर्राष्ट्रीय व्यापार को बढ़ा सकती थीं और अपने औपनिवेशिक साम्राज्य स्थापित कर सकती थीं. मानचित्रों, पाल वाले जहाजों, दिशा सूचक यंत्र, नक्षत्रीय गणना के आधार पर दिशाओं के ज्ञान ने वाणिज्यिक क्रान्ति को नया बल प्रदान किया.

4.4.2 यूरोप से पूर्व और पश्चिम की ओर होने वाला व्यापार

15 वीं शताब्दी के अंत तक केप ऑफ़ गुड होप होते हुए भारत तक पहुँचने के समुद्री मार्ग की खोज की जा चुकी थी. पुर्तगाल, पूर्व से पश्चिम के व्यापार की मुख्य कड़ी बन गया था. धीरे–धीरे नीदरलैंड के शहर एंटवर्प की भी इस व्यापार में महत्वपूर्ण भूमिका हो गयी. यूरोप और चीन के मध्य व्यापार की शुरूआत 16 वीं शताब्दी में हुई. भारत में गोवा और चीन में मकाऊ पुर्तगाली व्यापारिक ठिकाने बन गए. बाद में इस वाणिज्यिक–व्यापारिक होड़ इंग्लैंड भी आ गया और उसने प्रारंभ में अपनी अभिरुचि अटलांटिक महासागर के पार वाले क्षेत्र की और केन्द्रित की. 1450 से लेकर 1700 तक यूरोपीय आर्थिक केंद्र, इस्लाम के अनुयायियों के

भूमध्यसागर से हटकर पाश्चात्य यूरोप (पुर्तगाल, स्पेन, फ्रांस, नीदरलैंड और एक सीमा तक इंग्लैंड) में स्थानांतरित हो गया था.

16 वीं शताब्दी में चीन के मिंग राज्यवंश में चीन के साथ पुर्तगाल, स्पेन तथा होलैंड के साथ व्यापार बढ़ा. 1543 में जापान में पुर्तगालियों का आगमन हुआ और फिर वहां पुर्तगालियों ने चीन की रेशम के बदले जापान से प्रचुर मात्र में चांदी प्राप्त की. 1573 में जब मनिला में स्पेन का व्यापारिक ठिकाना बन गया तो स्पेन के अधीन अमेरिका के क्षेत्र से लाई गयी चांदी के बदले में चीन से वस्तुओं रेशम आदि वस्तुओं का आयात किया जाने लगा. पहले बाल्टिक, रूसी तथा इस्लामिक व्यापारिक कड़ियों पर जर्मन तथा इटालियन व्यापारिक शक्तियों का प्रभुत्व था किन्तु अब इसकी जगह प्रशांत महासागरीय व्यापार ने ले ली थी. अब चीनी, मसाले और चीनी मिट्टी का सामान भी आसानी से यूरोप के बाज़ार में पहुँचने लगा था.

डची ऑफ़ ब्रैबेंट का एक भाग, एंटवर्प का शहर, समस्त अंतर्राष्ट्रीय अर्थ–व्यवस्था का केंद्र और उस समय का यूरोप का सबसे समृद्ध शहर बन गया. एंटवर्प और एम्सटर्डम के व्यापारिक महत्त्व के कारण ही 'डच गोल्डन एज' अस्तित्व में आया. वेनीशियन प्रतिनिधि फ्रांसिस्को गुचियार्दिनी के अनुसार एंटवर्प से प्रतिदिन 100 जहाज और प्रति सप्ताह लगभग 2000 गाड़ियाँ माल लेकर शहर में प्रविष्ट होती थीं. काली मिर्च और दालचीनी से भरे पुर्तगाली जहाजों से नित्य ही माल उतारा जाता था. एंटवर्प शहर की अर्थ–व्यवस्था पर विदेशियों का क़ब्ज़ा था इसमें वेनिस, रैगुसा, स्पेन और पुर्तगाल के व्यापारी रहते थे. धार्मिक सहिष्णुता की नीति अपनाये जाने के कारण यहाँ बड़ी संख्या में कट्टरपंथी यहूदी समुदाय भी आकर बस गया था. सच्चे अर्थों में यह शहर एक अंतर्राष्ट्रीय शहर था. काली मिर्च, चांदी और कपड़ा उद्योग से सम्बद्ध के व्यापार ने इस शहर को अत्यधिक समृद्ध बना दिया था.

1557 में पुर्तगालियों ने मिंग दरबार को 'मकाउ' को पुर्तगाली व्यापारिक बस्ती के रूप में स्वीकार करने के लिए तैयार कर लिया. चीन से आयात किये जाने वाले मुख्य उत्पाद रेशम और पोर्सलिन के बर्तन थे जो कि योरोपीय विलासिता के आवश्यक अंग बन गए थे. डच ईस्ट इंडिया कंपनी की स्थापना के बाद से 1602 से 1682 के दौरान 60 लाख पोर्सलिन के बर्तनों का आयत किया गया था.

4.4.3 यूरोप, अफ्रीका और अमेरिका के मध्य त्रिकोणात्मक व्यापार

अफ्रीका, उत्तर अमेरिका और यूरोप के मध्य त्रिकोणात्मक व्यापार ने व्यापारिक क्रांति को एक नया बल प्रदान किया. दास अफ्रीका से लाए जाते थे और फिर उन्हें अमेरिका भेजा जाता था; कच्चा माल अमेरिका से आता था और फिर उसका उपयोग यूरोप की फैक्टरियों में तैयार माल बनाने के लिए किया जाता था फिर यह तैयार माल अमेरिका में ऊंचे दामों पर बेचा जाता था. प्रशांत महासागर के पार दास–व्यापार की उत्पत्ति अमेरिकी उपनिवेशों मं6 श्रमिकों की कमी के कारण हुई थी. अमेरिका में श्रमिकों की आपूर्ति के लिए यूरोपीय व्यापारियों ने पहले पश्चिमी अफ्रीका और फिर मध्य अफ्रीका की ओर अपनी दृष्टि डाली. सबसे पहले स्पेनियड्र्स और फिर पुर्तगालियों ने अमेरिका में अफ्रीकी दासों की आपूर्ति की. जब ब्रिटिश नौ–सैनिक शक्ति अपने उत्कर्ष पर पहुंची और अमेरिका में उनका औपनिवेशिक साम्राज्य का अत्यधिक विस्तार हो गया तो लिवरपूल और ब्रिस्टल से व्यापक स्तर पर दास–व्यापार होने लगा. यूरोप से तैयार माल अफ्रीका भेजा जाता था और उसके बदले में वहां से गुलाम खरीदकर लाए जाते थे, जिनको कि बाद में अमेरिका भेज दिया जाता था. मध्य अमेरिका ने 2 लाख, उत्तर अमेरिका ने 5 लाख और ब्राज़ील ने लगभग 45 लाख दासों का आयात किया. 1790 में ब्रिटिश वेस्टइंडीज़ लगभग 5 लाख 24 हज़ार दास थे और फ्रेंच वेस्टइंडीज़ में उनकी संख्या 6 लाख 43 हज़ार थी. स्पेन, नीदरलैंड्स तथा डेनमार्क के उपनिवेशों में भी दासों की संख्या लाखों में थी. इन दासों को इतनी कठिन और अमानवीय परिस्थितियों में रक्खा जाता था कि इन में से अधिकांश की अकाल मृत्यु हो जाती थी. दास–व्यापार अपने समय का सबसे मुनाफ़े वाला व्यापार था. पुनर्जागरण काल से ही कुछ धर्म–प्रचारक दास–व्यापार को ईसाई धर्म की शिक्षा के विरुद्ध बताते आ रहे थे किन्तु अधिकांश लोग यह

मानते थे कि इस दुनिया में गोरों और कालों की अलग–अलग भूमिकाएँ हैं और यूरोपीय सभ्यता तथा ईसाई धर्म के वरदान के बदले में अश्वेतों का कठोर श्रम करना तो सर्वथा उचित था.

4.5 वाणिज्यिक क्रान्ति के दौरान वित्तीय सेवाओं का विकास

4.5.1 बैंकिंग

नयी परिस्थितियों में व्यापार की आधारभूत संस्थाओं का विकास, परिष्कार और उनमें परिवर्तन किया जाना आवश्यक हो गया. वाणिज्यिक क्रान्ति के इस दौर में व्यापक स्तर पर व्यापार–वाणिज्य का संगठन विकसित हुआ. यह वाणिज्यिक क्रान्ति, सामान्य व्यावसायिक गतिविधियों में, तथा वित्तीय सेवाओं (बैंकिंग, बीमा, निवेश आदि) में वृद्धि में परिलक्षित हुई. बैंकिंग व्यवस्था के विकास ने वाणिज्यिक क्रान्ति को एक दृढ आधार प्रदान किया. मध्यकाल तक ईसाई समाज में बैंकिंग के व्यवसाय को सम्मान की दृष्टि से नहीं देखा जाता था और यूरोप में बैंकिंग व्यवस्था पर एक प्रकार से यहूदियों का ही एकाधिकार था किन्तु 13 वीं शताब्दी से बैंकिंग के व्यवसाय पर लगे धार्मिक प्रतिबन्ध शिथिल होने लगे. मुनाफ़ा कमाना अब कोई पाप नहीं रह गया. सबसे पहले इटली में बैंकिंग व्यवसाय को कई परिवारों ने अपनाया. 14 वीं शताब्दी में व्यापारिक गतिविधियों में आने वाले खतरों को कम करने के लिए बैंकिंग, स्टॉक एक्सचेंज और बीमा जैसे उपायों को विकसित किया गया. जर्मनी में औग्सबर्ग के फुगर परिवार ने बैंकिंग व्यवसाय को नयी बुलंदियों तक पहुंचा दिया था. अतिरिक्त धन की उपलब्धता के कारण उत्तरी यूरोप में मूलतः खदानों के मालिक फुगर परिवार ने आम आदमी को से लेकर आभिजात्य वर्ग तक, यहाँ तक कि सम्राट तक को ब्याज पर मुद्रा दी और इसके अतिरिक्त भी अन्य वित्तीय गतिविधियाँ प्रारंभ कर दीं. फ्लोरेंस के मेडिसी परिवार ने मेडिसी बैंक की स्थापना की. 15 वीं शताब्दी तक जर्मनी और फ्रांस में भी बैंकिंग व्यवसाय गति पकड़ने लगा. यूरोप में अब निजी परिवारों के बैंकों के साथ धीरे–धीरे सरकारी बैंकों की स्थापना भी होने लगी थी. इन सरकारी बैंकों में 1657 में स्थापित 'बैंक ऑफ़ स्वीडन' तथा 1694 में स्थापित 'बैंक ऑफ़ इंग्लैंड' प्रमुख थे. बैंकिंग व्यवस्था के विकास ने स्थानीय तथा अंतर्राष्ट्रीय व्यापार को सुगम बनाकर उसे एक नया बल प्रदान किया. अब व्यापारियों के लिए बड़े–बड़े क़र्ज़ लेकर भी अपने साहसिक अभियानों को सफल बनाना असंभव नहीं रह गया. चेक के द्वारा धन के लेन–देन ने व्यापार को पहले से कहीं अधिक सुरक्षित बना दिया. अब विनिमय में सोने–चांदी की जगह कागज़ के बने नोटों ने ले ली थी.

4.5.2 निवेशक कम्पनियों का विकास

स्टॉक एक्सचेंज का प्रारंभिक रूप हमको 11 वीं शताब्दी में कैरो के मुस्लिम तथा यहूदी व्यापारिक संगठनों में देखने को मिलता है. 13 वीं शताब्दी के मध्य में वेनिस के बैंकरों ने राज्य–सुरक्षा में व्यापार करना प्रारंभ किया था और 14 वीं शताब्दी में पीसा, वेरोना, जेनेवा तथा फ्लोरेंस भी इस प्रकार के व्यापार में सम्मिलित हो गए थे. पहली बार 1602 में डच ईस्ट इंडिया कंपनी ने एम्स्टर्दम स्टॉक एक्सचेंज में अपने शेयर और बांड निर्गत किए थे. एम्सटर्दम स्टॉक एक्सचेंज ने 17 वीं शताब्दी के प्रारंभ में निर्बाध व्यापार को संभव बनाया था. डच व्यापारियों ने अल्पावधि बिक्री, वैकल्पिक व्यापार, व्यापारी–बैंकिंग आदि की शुरूआत की थी. निवेशक कम्पनियां पूँजी निवेश में साझेदारी के आधार पर हिस्सेदारी (शेयर) जारी करने लगी थीं. इन निवेश कम्पनियों में कोई भी निवेश कर सकता था और अपने निवेश के अनुपात में कंपनी के मुनाफ़े या घाटे में उसकी हिस्सेदारी होती थी. पहले इन निवेश कम्पनियों ने अंतर्राष्ट्रीय व्यापार के विकास में अपना योगदान दिया और बाद में औद्योगिक क्रान्ति को भी

दृढ़ आर्थिक आधार देने में भी इनकी महत्वपूर्ण भूमिका रही. विभिन्न राज्यों की सरकारों ने कुछ कम्पनियों को चार्टर प्रदान किए. व्यापारिक क्रांति की सफलता के लिए यह आवश्यक था कि व्यापार को सुरक्षित बनाया जाय. बैंक, स्टॉक एक्सचेंज तथा बीमा कंपनियों के विकास ने व्यापार को आवश्यक सुरक्षा प्रदान की. भूमध्यसागर में व्यापार करने वालों को 1750 ईसा पूर्व के 'कोड ऑफ़ हमूराबी' द्वारा एक रकम देकर अपने माल का दुर्घटना बीमा कराने की सुविधा थी. अब इस बीमा–व्यवस्था को पुनर्जीवित किया गया. बीमा पर

वैधानिक नियमों की पहली पुस्तक पेड्रो सनातेरना ने 1488 में लिखी जिसका कि प्रकाशन 1552 में हुआ. 17 वीं शताब्दी के प्रारंभिक दशकों में लन्दन में व्यापारिक अभियानों में जहाज तथा माल का बीमा किए जाने की व्यवस्था हुई. सत्रहवीं शताब्दी के अंत में लन्दन में एडवर्ड लायड ने व्यापारिक बीमा के लिए 'लायड कॉफ़ी हाउस' की स्थापना की. फ्रांस के वित्तमन्त्री कोलबर्ट ने 1681 में व्यापार–बीमा के लिए नए नियम जारी किए.

4.5.3 प्राचीन एवं मध्यकालीन 'गिल्ड व्यवस्था' का अंत (शिल्पी–संघ व्यवस्था)

प्राचीन काल में और मध्यकाल के प्रारंभिक चरण में व्यापार और उद्योग पर 'गिल्ड व्यवस्था' का एक प्रकार से एकाधिकार था. 'गिल्ड व्यवस्था' कुछ परिवारों, घरानों तक सीमित थी और उसमें नए विचारों तथा नयी तकनीक से अधिक परंपरा को महत्त्व दिया जाता था. इस अपरिवर्तनशीलता की प्रवृत्ति के कारण व्यापार, वाणिज्य तथा उद्योग का चहुमुखी विकास असंभव था. वाणिज्यिक क्रान्ति ने 'गिल्ड व्यवस्था' के एकाधिकार को समाप्त कर दिया, खासकर खनन उद्योग, धातु उद्योग और कपड़ा उद्योग का विकास अब 'गिल्ड व्यवस्था' के बाहर भी होने लगा. इन उद्योगों में नयी तकनीक और नए–नए उपकरणों का उपयोग किया जाने लगा. कपड़ा उद्योग में तो नयी तकनीक की तकलियों, चर्खों तथा बुनाई के लिए नयी तकनीक के फ्रेमों ने कपड़ा उत्पादन में क्रान्ति ला दी थी. धीरे–धीरे उद्योगों पर नए पूंजीपतियों का अधिकार हो गया तथा कारीगर, शिल्पी आदि उनके मजदूर बनकर रह गए.

4.5.4 पुटिंग आउट सिस्टम (घरेलू व्यवस्था)

इस व्यवस्था के अंतर्गत कारीगरों को अपने घर में ही रहकर काम करना होता था. व्यापारी उन्हें कच्चा माल उनके घर पर ही उपलब्ध करा देते थे जिसको एक निश्चित अवधि में और निश्चित मज़दूरी में, तैयार माल के रूप में देना होता था. इस व्यवस्था में कारीगरों को अपने काम में अपने घर के सदस्यों का सहयोग भी मिल जाता था और उन्हें घर में रहकर अपने इस काम के अतिरिक्त खेती आदि करने का अवसर भी मिल जाता था. किन्तु इस व्यवस्था ने कारीगरों को एक मज़दूर बना दिया था और उनकी मुनाफ़े की संभावनाओं (प्रॉफिट इंसेटिव) को बहुत कम कर दिया था. व्यापारीगण कारीगरों को अग्रिम राशि का भुगतान कर उन्हें अपने जाल में फाँस लेते थे और उसके बल पर उन्हें एक प्रकार से अपना बंधुआ मजदूर बना लेते थे. 18 वीं शताब्दी उत्तरार्ध में 'ग्रांट ऑफ़ दीवानी' के अंतर्गत बंगाल के जुलाहों के साथ ईस्ट इंडिया कंपनी कम्पनी के कर्मचारियों ने इसी व्यवस्था के अंतर्गत व्यवसाय किया था. भारतीय कपड़ा उद्योग पर इसके विनाशकारी प्रभाव से हम सब भलीभांति अवगत हैं. इस व्यवस्था से कारीगरों की संगठित शक्ति पूर्णतया निष्प्राण हो गयी तथा वो इन पूंजीपति व्यापारियों के चंगुल में सदा–सदा के लिए फँस गए थे.

4.6 वाणिज्यवाद, व्यापारिक क्रान्ति तथा उपनिवेशवाद का अन्तः सम्बन्ध

4.6.1 पुर्तगाल, स्पेन और नीदरलैंड के उपनिवेश

अनेक यूरोपीय देशों में 'ग्रीड ऑफ़ गोल्ड एण्ड लस्ट फॉर ग्लोरी' (धन का लोभ और यश की लालसा) की भावना के वशीभूत होकर औपनिवेशिक साम्राज्य की स्थापना की महत्वाकांक्षा उत्पन्न हुई. अपने देश में उत्पादित माल की बिक्री के लिए नए बाज़ारों की तलाश और अपने यहां तैयार उत्पादों के लिए आवश्यक कच्चे माल की सस्ते में और नियमित एवं निर्बाध आपूर्ति की समस्या, इन दोनों का ही समाधान अधिक से अधिक और बड़े से बड़े उपनिवेशों की स्थापना में मिल सकता था. 15 वीं शताब्दी के आठवें दशक में पुर्तगाली प्रचुर मात्र में अफ्रीकी सोना अपने देश लाने लगे. अफ्रीका से दास–व्यापार में भी पुर्तगाल ने बहुत धन कमाया. स्पेन के औपनिवेशिक शासन में अमानवीयता की सभी पराकाष्ठाओं को पार कर इण्डियन अमेरिकन्स (रैड इण्डियन्स) का समूल विनाश कर दिया गया। स्पेन को अपने उपनिवेशों से अत्यधिक धन प्राप्त हुआ. सोलहवीं शताब्दी में अपनी नौ–सैनिक शक्ति के उत्थान के फलस्वरूप सत्रहवीं शताब्दी तक नीदरलैण्ड व्यापारिक गतिविधियों में विश्व का एक अग्रणी देश बन गया था और एम्सटर्डम जहाजरानी, बैंकिंग तथा बीमा के क्षेत्र में यूरोप का सबसे प्रमुख केन्द्र बन गया था. 1594 में 'कम्पनी फॉर फ़ारलैण्ड' तथा 1602 में 'डच ईस्ट इण्डिया

कम्पनी' तथा 1621 में 'डच वैस्ट इण्डीज़ कम्पनी' की स्थापना के बाद डच औपनिवेशिक साम्राज्य के विस्तार का मार्ग प्रशस्त हो गया. 1688 के बाद डच विलियम ऑफ़ औरेन्ज के ब्रिटिश सिंहासन पर बैठने के बाद यह निश्चित किया गया कि पूर्व में कपड़ों व्यापार पर अंग्रेज़ों का और मसाला व्यापार में डचों का वर्चस्व रहेगा। मसाला–व्यापार में डचों ने प्रचुर मात्रा में धन कमाया.

4.6.2 ब्रिटिश उपनिवेश

1553 में न्यू फ़ाउण्डलैण्ड में ब्रिटिश उपनिवेश स्थापित हुआ. प्रारम्भिक काल में व्यापारिक कम्पनियों तथा संयुक्त सार्वजनिक एवं निजी उपक्रमों ने ब्रिटिश उपनिवेशों की स्थापना में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई. इंग्लैण्ड की दृष्टि सोने–चाँदी की लालसा, व्यापारिक लाभ, गर्म मसालों, तम्बाकू और चीनी आदि के लिए अपना औपनिवेशिक साम्राज्य स्थापित करने पर थी. अंग्रेजों ने ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कंपनी को ब्रिटिश ताज के हितों के रक्षक के रूप में प्रयुक्त किया. ईस्ट इंडिया कंपनी ने भारत पर शासन करते समय वहां की जनता और वहां के वाणिज्य के हितों की रक्षा करने के अपने दायित्व को ब्रिटिश ताज और ब्रिटिश व्यापार के हितों पर कुर्बान कर दिया. विभिन्न राज्यों की ओर से व्यक्ति–विशेष अथवा कम्पनियों को व्यापारिक एकाधिकार प्रदान किए जाने लगे. महारानी एलिज़ाबेथ प्रथम ने वाल्टर रैले को ब्रॉड क्लोद और शराब के निर्यात का एकाधिकार प्रदान किया था. ईस्ट इंडिया कंपनी के भारत व्यापार के अधिकांश क्षेत्रों में व्यापारिक एकाधिकार के विषय में सब जानते हैं. 1930 में महात्मा गाँधी ने नमक बनाने और उसे बेचने के अँगरेज़ सरकार के सरकार के एकाधिकार के विरुद्ध अपना नमक सत्याग्रह प्रारंभ किया था.

4.7 यूरोप में वाणिज्यिक एवं व्यापारिक क्रान्ति के परिणाम

4.7.1 यूरोप में अथाह समृद्धि का आगमन

वाणिज्यिक क्रान्ति ने आधुनिक युग के प्रारंभ में समस्त विश्व की दिशा और दशा बदल दी. वाणिज्यिक क्रान्ति तेरहवीं शताब्दी के अंतिम वर्षों से लेकर 18 वीं शताब्दी के दौरान हुई. इस अवधि के दौरान यूरोप का आर्थिक विकास हुआ, यूरोपीय देशों के औपनिवेशिक साम्राज्यों की स्थापना हुई और वाणिज्य का अभूतपूर्व विकास हुआ.अमेरिका में स्पेनिश साम्राज्य की स्थापना के लिए इन्का, एज़टेक तथा माया साम्राज्यों को तहस–नहस कर दिया गया. अफ्रीका से 'येलो फीवर, बीमारी अमेरिका पहुँच गयी. कोकोआ, कॉफ़ी, मक्का, कसावा और आलू का प्रचलन सारी दुनिया में हो गया. वाणिज्यिक एवं व्यापारिक क्रान्ति का एक परिणाम यह हुआ कि बेहतर खाने और बेहतर सुख–सुविधाओं के कारण यूरोप की जनसँख्या में वृद्धि हुई. इसका सबसे बड़ा फायदा यह हुआ कि अब यूरोप में प्रचुर मात्रा में धन की उपलब्धता हो गयी और इसी के बल पर वहां औद्योगिक क्रान्ति संभव हो सकी. अब राज्यों ने अपने राष्ट्रीय व्यापार और उद्योग को अंतर्राष्ट्रीय प्रतिस्पर्धा से सुरक्षा प्रदान करने के लिए उन्हें राज्य की ओर से प्रोत्साहन तथा सहायता देना प्रारंभ कर दिया. अपनी थल सेना और नौ–सेना को सशक्त बनाने के लिए राज्यों को प्रचुर मात्र में धन की आवश्यकता थी जो कि उन्हें व्यापारिक लाभ में अपनी हिस्सेदारी से सुगमता से प्राप्त हो सकता था. शासकों के लिए व्यापारिक एवं औद्योगिक घरानों का समर्थन अब बहुत महत्वपूर्ण हो गया था और दूसरी ओर व्यापारिक एवं औद्योगिक घरानों को भी अपनी उन्नति के लिए शासकों का सहयोग नितांत आवश्यक था. नयी दुनिया की खोज ने यूरोप में वाणिज्यिक क्रान्ति के विकास में निर्णायक भूमिका निभायी. घोड़े तथा भेड़ें यूरोप से नयी दुनिया को निर्यात हुईं और नयी दुनिया से सोना, चांदी, तम्बाकू, आलू, मक्का, गन्ने से बनाई गयी चीनी और कपास का आयात यूरोप को हुआ. समुद्री खोजों ने पूरी दुनिया में यूरोपीय देशों के औपनिवेशिक साम्राज्यों की स्थापना के स्वप्न को साकार किया.

4.7.2 पूंजीवाद का उदय

सामन्तवाद का पतन और मध्यमवर्ग से सम्बद्ध पूंजीपतियों (व्यापारी, बैंकर्स, पूंजी–निवेशक, उद्योगपति, जहाज–मालिक आदि) की देश के आर्थिक, सामाजिक व राजनीतिक जीवन में महत्वपूर्ण भूमिका वाणिज्यिक क्रान्ति का परिणाम थी.

4.7.3 यूरोपीय सभ्यता का प्रसार

वाणिज्यिक क्रान्ति का एक परिणाम समस्त विश्व का यूरोपीकरण था। यूरोपीय धर्म (ईसाई धर्म), अर्थ–व्यवस्था, शैक्षिक, कलात्मक व सांस्कृतिक मूल्य, राजनीतिक आदर्श, प्रशासनिक एवं न्यायिक–व्यवस्था को एशिया, अफ़्रीका, अमेरिका तथा आस्ट्रेलिया में स्थापित किया गया.

4.7.4. दास–प्रथा का पुनर्प्रचलन

यूरोप में लगभग 500 साल तक लुप्तप्राय दास–प्रथा को उपनिवेशों में नई बस्तियां बसाने और श्रम–साध्य कार्यों से स्वयं को मुक्ति दिलाने के लिए अमानुनिषिक दास–प्रथा का पुनर्प्रचलन वाणिज्यिक क्रान्ति का एक दुखद परिणाम था.

4.7.5 मध्यवर्ग का उदय

वाणिज्यिक क्रांति ने यूरोप को धन–सम्पदा का अतुलित भंडार बना दिया. अब धन केवल शाही परिवारों तथा आभिजात्य वर्ग तक ही सीमित नहीं रह गया. अब यूरोप में मध्यवर्ग का उदय हुआ जो कि पुश्तैनी जागीरों और खजाने के बल पर नहीं बल्कि अपनी योग्यता, साहस, कर्मठता और आर्थिक मामलों में अपनी विशेषज्ञता के बल पर धनवान बना था. इस वर्ग में व्यापारी, बैंकर्स, निवेशक, उद्योगपति, शिक्षक, वकील , चिकित्सक, कलाकार आदि सम्मिलित थे. इस वर्ग ने धीरे–धीरे यूरोप में अपना राजनीतिक प्रभाव भी स्थापित किया.

4.7.6 नगरों का विकास तथा जनसँख्या विस्फोट

यूरोप में जब वाणिज्यिक एवं व्यापारिक क्रान्ति से धन–सम्पदा में अपार वृद्धि हुई तो वहां भुखमरी तथा महामारी का प्रकोप कम हो गया. फलस्वरूप जनसँख्या में अप्रत्याशित वृद्धि होने लगी. अब समृद्ध वर्ग गाँवों के स्थान पर शहरों में रहना पसंद करने लगा. 14 वीं शताब्दी में जहाँ लन्दन की जनसँख्या मात्र पचास हज़ार थी वह 17 वीं शताब्दी के अंत तक बढ़ कर दो लाख तक पहुँच गयी. नगरों में एक ओर जहाँ व्यापार व उद्योग की संभावनाएं अधिक थीं, वहीं विलासिता के साधन भी अधिक थे. ऊंची–ऊंची अट्टालिकाएँ, पक्की, साफ़ और चौड़ी सड़कें, उद्यान, वाचनालय, थियेटर, विद्यालय आदि ने नगरों का स्वरुप ही बदल दिया.

4.7.7 औद्योगिक क्रान्ति की पृष्ठभूमि तैयार करना

वाणिज्यिक क्रान्ति ने यूरोपीय देशों में धन–सम्पदा का अतुलित भण्डार का संचय कराने में उलेखनीय भूमिका निभाई। लगभग समूची दुनिया के व्यापार पर नियन्त्रण स्थापित कर और अपने उपनिवेशों की औद्योगिक प्रगति पर भारी चोट लगा कर अब यूरोपीय राज्य अपने उद्योग के आधुनिकीकरण के लिए प्रयास कर सकते थे। वैज्ञानिक प्रगति ने और शोध के लिए आवश्यक पूंजी की उपलब्धता ने औद्योगिक क्रान्ति के लिए अनुकूल परिस्थितियां उत्पन्न कर दी थीं. वाणिज्यिक क्रान्ति ने आधुनिक कारखानों में वृहद मात्रा में उत्पादित माल की खपत के लिए उपनिवेशों के बाज़ार पहले ही तैयार कर दिए थे. इन अनुकूल परिस्थितियों में औद्योगिक क्रान्ति यूरोपीय इतिहास में कोई आश्चर्यजनक नहीं अपितु नितान्त स्वाभाविक घटना बनकर प्रकट हुई थी.

स्वमूल्यांकित प्रश्नों पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए

1. हेन्सियाटिक लीग
2. यूरोप, अफ्रीका और अमेरिका के मध्य त्रिकोणीय व्यापार
3. बैंकिंग
4. ब्रिटिश उपनिवेश

4.8 सारांश

वाणिज्यवाद वह आर्थिक नीति है जिसके अंतर्गत प्रत्येक देश साध्य के औचित्य अथवा अनौचित्य पर विचार किए बिना किसी भी प्रकार से अधिक से अधिक धन एकत्र करने के लिए प्रयत्नशील रहता है. इस

नीति के पीछे धारणा यह है कि जो देश जितना अधिक समृद्ध होता है, वह उतना ही अधिक शक्तिशाली होता है. वाणिज्यवाद के प्रतिपादकों में थॉमस मून तथा फ़िलिप वॉन होर्निक प्रमुख हैं. वाणिज्यवाद के प्रारंभिक आलोचकों में हम निकोलस बरबन का नाम ले सकते हैं.

वाणिज्यिक क्रान्ति ने मध्ययुगीन अस्थिर, सीमित क्षेत्र तक व्याप्त और महत्वाकांक्षा–हीन, केवल जीवन–निर्वाह तक सीमित अर्थव्यवस्था को एक नया व्यापक अंतर्राष्ट्रीय स्वरुप प्रदान किया, उसमें गतिशीलता व महत्वाकांक्षा का संचार किया और अंततः पूँजीवादी व्यवस्था को विश्वव्यापी बनाया. 'वाणिज्यवाद' तथा 'वाणिज्यिक क्रान्ति' शब्द, 20 वीं शताब्दी के आर्थिक इतिहासकार रोबेर्टो सबातिनो लोपेज़ की देन हैं. जो कि उन्होंने अपनी पुस्तक दृ 'दि कमर्शियल रेवोलुशन ऑफ़ दि मिडिल एजेज़' में प्रयुक्त किए थे. 13 वीं के उत्तरार्ध से लेकर 18 वीं शताब्दी के प्रारंभ तक यूरोपीय आर्थिक विस्तार, उपनिवेशवाद और वाणिज्यवाद को हम वाणिज्यिक क्रान्ति के रूप में जानते हैं. वाणिज्यिक क्रान्ति ने आधुनिक युग के प्रारंभ में समस्त विश्व की दिशा और दशा बदल दी. अंतर्राष्ट्रीय और स्थानीय व्यापार को ध्यान में रखते हुए विभिन्न राज्यों में नए क़ानून बनाए गए. अब राज्यों ने अपने राष्ट्रीय व्यापार और उद्योग को अंतर्राष्ट्रीय प्रतिस्पर्धा से सुरक्षा प्रदान करने के लिए उन्हें राज्य की ओर से प्रोत्साहन तथा सहायता देना प्रारंभ कर दिया. 13 वीं शताब्दी में हेन्सियाटिक लीग ने एक संगठित व्यापार–संघ बनाकर अंतर्राष्ट्रीय व्यापार को नयी ऊंचाइयों तक पहुँचाने में सफलता प्राप्त की थी. 1453 में तुर्कों द्वारा कुन्सतुनिया पर अधिकार के बाद पश्चिमी यूरोप के देशों (पुर्तगाल, स्पेन, नीदरलैण्ड और इंग्लैण्ड) के लिए थल–मार्ग से पूर्वी व्यापार असम्भव हो गया था. इस व्यापारिक संकट ने शासकों द्वारा प्रायोजित सफल भौगोलिक खोजों का दौर प्रारम्भ किया. एशिया, अफ्रीका व अमेरिका में नए क्षेत्रों की खोज और तदन्तर उन पर यूरोपीय देशों के अधिकार के कारण यूरोपीय, एशियायी, अफ़्रीकी तथा अमेरिकी देशों का आर्थिक दृष्टि से बहु–आयामीय सम्बन्ध स्थापित हो गया.

अब यूरोपीय शक्तियां सुगमता से अपने अतर्राष्ट्रीय व्यापार को बढ़ा सकती थीं और अपने औपनिवेशिक साम्राज्य स्थापित कर सकती थीं. मानचित्रों, पाल वाले जहाजों, दिशा सूचक यंत्र, नक्षत्रीय गणना के आधार पर दिशाओं के ज्ञान ने वाणिज्यिक क्रान्ति को नया बल प्रदान किया. पुर्तगाल के प्रिंस हेनरी दि नेविगेटर ने प्रशांत महासागर में साहसिक अभियान का दौर प्रारंभ किया, बर्तोलोम्यू दियास, वास्कोडिगामा, फर्दिनेंद मेगेलन, क्रिस्टोफर कोलंबस, जेकेस कार्टियर आदि ने पूर्व और पश्चिम में नए–नए क्षेत्रों की खोज ने व्यापार और वाणिज्य को नयी दिशा और नए आयाम दिए.

अफ्रीका, उत्तर अमेरिका और यूरोप के मध्य त्रिकोणात्मक व्यापार ने व्यापारिक क्रांति को एक नया बल प्रदान किया. दास अफ्रीका से लाए जाते थे और फिर उन्हें अमेरिका भेजा जाता था; कच्चा माल अमेरिका से आता था और फिर उसका उपयोग यूरोप की फैक्टरियों में तैयार माल बनाने के लिए किया जाता था फिर यह तैयार माल अमेरिका में ऊंचे दामों पर बेचा जाता था. कोकोआ, कॉफ़ी, मक्का, कसावा और आलू का प्रचलन सारी दुनिया में हो गया. वाणिज्यिक एवं व्यापारिक क्रान्ति का एक परिणाम यह हुआ कि बेहतर खाने और बेहतर सुख–सुविधाओं के कारण यूरोप की जनसँख्या में वृद्धि हुई. इसका सबसे बड़ा फायदा यह हुआ कि अब यूरोप में प्रचुर मात्रा में धन की उपलब्धता हो गयी और इसी के बल पर वहां औद्योगिक क्रान्ति संभव हो सकी. भौगोलिक खोजों ने व्यापार के लिए नयी संभावनाओं को विकसित किया. 1450 से लेकर 1700 तक यूरोपीय आर्थिक केंद्र, इस्लाम के अनुयायियों के भूमध्यसागर से हटकर पाश्चात्य यूरोप (पुर्तगाल, स्पेन, फ्रांस, नीदरलैंड और एक सीमा तक इंग्लैंड) में स्थानांतरित हो गया था.

वाणिज्यिक क्रान्ति के दौरान बैंकिंग, स्टॉक एक्सचेंज, बीमा आदि वित्तीय सेवाओं का विकास हुआ. वाणिज्यवाद ने उपनिवेशवाद को बढ़ावा दिया. यह सिद्धान्त कि – उपनिवेश का अस्तित्व शासक राज्य के लाभ के लिए है' उपनिवेशों के दोहन का मूल मन्त्र बन गया. शासक राष्ट्रों ने अपने उपनिवेशों को स्वतन्त्र रूप से व्यापार करने की अनुमति नहीं दी, उन्हें अपना तैयार माल खरीदने का खरीदार और कच्चे माल की आपूर्ति करने वाला बनाकर छोड़ दिया. इस काल में व्यापारिक कम्पनियों ने ताज के प्रतिनिधि की भूमिका निभाई. वाणिज्यिक

क्रान्ति ने आधुनिक कारखानों में वृहद मात्रा में उत्पादित माल की खपत के लिए उपनिवेशों के बाज़ार पहले ही तैयार कर दिए थे। इन अनुकूल परिस्थितियों में औद्योगिक क्रान्ति यूरोपीय इतिहास में कोई आश्चर्यजनक नहीं अपितु नितान्त स्वाभाविक घटना बनकर प्रकट हुई थी.

यूरोप में वाणिज्यिक एवं व्यापारिक क्रान्ति के परिणामों में सबसे महत्वपूर्ण था– यूरोप में अथाह समृद्धि का आगमन. वाणिज्यिक क्रान्ति तेरहवीं शताब्दी के अंतिम वर्षों से लेकर 18 वीं शताब्दी के दौरान हुई. इस अवधि के दौरान यूरोप का आर्थिक विकास हुआ, यूरोपीय देशों के औपनिवेशिक साम्राज्यों की स्थापना हुई और वाणिज्य का अभूतपूर्व विकास हुआ. कोकोआ, कसावा और आलू, मक्का, कॉफ़ी, चाय आदि का प्रचलन सारी दुनिया में हो गया और परिणाम यह हुआ कि बेहतर खाने और बेहतर सुख–सुविधाओं के कारण यूरोप की जनसँख्या में वृद्धि हुई. सामन्तवाद का पतन और मध्यमवर्ग से सम्बद्ध पूंजीपतियों (व्यापारी, बैंकर्स, पूंजी–निवेशक, उद्योगपति, जहाज–मालिक आदि) की देश के आर्थिक, सामाजिक व राजनीतिक जीवन में महत्वपूर्ण भूमिका वाणिज्यिक क्रान्ति का परिणाम थी. यूरोप में लगभग 500 साल तक लुप्तप्राय दास–प्रथा को उपनिवेशों में नई बस्तियां बसाने और श्रम–साध्य कार्यों से स्वयं को मुक्ति दिलाने के लिए अमानुनिषिक दास–प्रथा का पुनर्प्रचलन वाणिज्यिक क्रान्ति का एक दुखद परिणाम था. यूरोप में जब वाणिज्यिक एवं व्यापारिक क्रान्ति से धन–सम्पदा में अपार वृद्धि हुई तो वहां भुखमरी तथा महामारी का प्रकोप कम हो गया. फलस्वरूप जनसँख्या में अप्रत्याशित वृद्धि होने लगी. अब समृद्ध वर्ग गाँवों के स्थान पर शहरों में रहना पसंद करने लगा.

वाणिज्यिक क्रान्ति का सबसे बड़ा फायदा यह हुआ कि अब यूरोप में प्रचुर मात्रा में धन की उपलब्धता हो गयी और इसी के बल पर वहां औद्योगिक क्रान्ति संभव हो सकी. वाणिज्यिक क्रान्ति का एक परिणाम समस्त विश्व का यूरोपीकरण था. यूरोपीय धर्म (ईसाई धर्म), अर्थ–व्यवस्था, शैक्षिक, कलात्मक व सांस्कृतिक मूल्य, राजनीतिक आदर्श, प्रशासनिक एवं न्यायिक–व्यवस्था को एशिया, अफ़्रीका, अमेरिका तथा आस्ट्रेलिया में स्थापित किया गया.

लगभग समूची दुनिया के व्यापार पर नियन्त्रण स्थापित कर और अपने उपनिवेशों की औद्योगिक प्रगति पर भारी चोट लगा कर अब यूरोपीय राज्य अपने उद्योग के आधुनिकीकरण के लिए प्रयास कर सकते थे. वैज्ञानिक प्रगति ने और शोध के लिए आवश्यक पूंजी की उपलब्धता ने औद्योगिक क्रान्ति के लिए अनुकूल परिस्थितियां उत्पन्न कर दी थीं. वाणिज्यिक क्रान्ति ने आधुनिक कारखानों में वृहद मात्रा में उत्पादित माल की खपत के लिए उपनिवेशों के बाज़ार पहले ही तैयार कर दिए थे. इन अनुकूल परिस्थितियों में औद्योगिक क्रान्ति यूरोपीय इतिहास में कोई आश्चर्यजनक नहीं अपितु नितान्त स्वाभाविक घटना बनकर प्रकट हुई थी.

4.9 पारिभाषिक शब्दावली

मिडिल एज – यूरोपीय सन्दर्भ में 5 वीं शताब्दी से लेकर 15 वीं शताब्दी के प्रथमार्ध तक का काल

जल–मार्गीय धर्म–युद्ध दृ ईसाई धर्म–विजय हेतु नौ–सैनिक अभियान

फ्री इम्पीरियल सिटी – उत्तर–मध्य काल के स्व–शासित नगर जिन्हें एक सीमा तक स्वायत्तता प्राप्त थी और जिनकी निष्ठां पवित्र रोमन राज्य के सम्राट के प्रति होती थी.

डच गोल्डन पीरियड – हौलैंड (नीदरलैंड) के इतिहास का स्वर्ण–युग

चार्टर –अधिकार पत्र

गिल्ड – शिल्पि–संघ

इंडियन अमेरिकन – रैड इंडियन

येलो फीवर– मादा मच्छर के काटने से फैलने वाला एक वायरल ज्वर

4.10 सन्दर्भ ग्रंथ

1. लोपेज़, रॉबर्ट , दि कमर्शियल रेवोलुशन ऑफ़ दि मिडिल एजेज़, न्यूयॉर्क, 1976
2. लोपेज़ रॉबर्ट , मेडिवल ट्रेड इन दि मेडीटेरेरियन वर्ड, न्यूयॉर्क, 1955
3. कनिंघम, विलियम , दि ग्रोथ इंग्लिश इंडस्ट्रीज़ एंड कॉमर्स इन मॉडर्न टाइम्स, 1892, न्यूयॉर्क
4. गिबन्स, हेनरी दि बेल्टजेन्स , दि हिस्ट्री ऑफ़ कॉमर्स इन यूरोप , 1891, न्यूयॉर्क
5. प्रमोद कुमार , आधुनिक यूरोप का इतिहास (1450–1789), दिल्ली, 2016
6. मार्शल माइकल , फ्रॉम मर्कैंटाइलिज्म टू दि वेल्थ ऑफ़ नेशंस, 1999, लन्दन
7. सदर्न, आर. डब्लू. , दि मेकिंग ऑफ़ दि मिडिल एजेज़, न्यू हावेन, 1953
8. सिपोला, सी. एस. दृबिफ़ोर दि इंडस्ट्रियल रिवोल्यूशन, यूरोपियन सोसाइटी एंड इकॉनमी 1000–1700, न्यूयॉर्क, 1980

4.11 उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. किपलिंग, रुडयार्ड – दि व्हाइट मैन'स बर्डन, 1899, लन्दन
2. लेनिन, वी. आई. दृ दि हाइएस्ट स्टेज ऑफ़ कैपिटलिज्म, न्यूयॉर्क, 1997
3. मार्शल माइकल दृ फ्रॉम मर्कैंटाइलिज्म टू दि वेल्थ ऑफ़ नेशंस, 1999, लन्दन
4. टेलर, ए. , जे. पी. दृ इकनोमिक इम्पीरियलिज्म, 1952, दि अनार्किस्ट लाइब्रेरी वेब साइट

4.12 स्वमूल्यांकित प्रश्न संक्षिप्त टिप्पणी के उत्तर

1. देखिए 4. 3. 2
2. देखिए 4. 4. 3
3. देखिए 4. 5. 1
4. देखिए 4. 6. 2

4.11 निबंधात्मक प्रश्न

1. वाणिज्यिक क्रान्ति के परिणामों पर एक संक्षिप्त आलोचनात्मक निबंध लिखिए.

5.1 प्रस्तावना

5.2 उद्देश्य

5.3 धर्म सुधार का अर्थ एवं स्वरुप

5.4 पृष्ठभूमि

5.5 धर्म सुधार आन्दोलन के कारण

5.5.1 राष्ट्रीय चेतना का विकास

5.5.2 प्रिंटिंग प्रेस

5.5.3 मानववाद

5.5.4 बुर्जुआ वर्ग का उदय

5.5.5 पोप एवं चर्च में दोष

5.6 मार्टिन लूथर

5.6.1 मार्टिन लूथर के विचार

5.6.2 प्रोटेस्टेंट चर्च

5.7 ज्विंगली

5.9 काल्विनवाद

5.10 धर्म सुधार आन्दोलन के परिणाम

5.10.1 कैथोलिक चर्च का विभाजन

5.10.2 राजनैतिक परिवर्तन

5.10.3 गृहस्थ जीवन और स्त्री दशा

5.10.4 शिक्षा एवं संस्कृति

5.10.5 प्रति धर्म सुधार आन्दोलन

5.10.6 पूंजीवादी अर्थव्यवस्था का विकास

5.11 अभ्यास एवं बोध प्रश्न

5.12 शब्दावली

5.13 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

5.14 अध्ययन सामग्री

5.15 निबंधात्मक प्रश्न

5.1 प्रस्तावना

पुनर्जागरण से पहले यूरोपीय समाज धर्म केन्द्रित था, मानव जीवन पर ईसाई धर्म, चर्च एवं पोप का ऐसा वर्चस्व था कि वह जन्म से लेकर मृत्यु तक विभिन्न संस्कारो के कारण चर्च के नियंत्रण में होता था। यूरोप का पूरा ईसाई जगत रोम के पोप के अधीन था, राज्य एवं समाज पर उसका एकाधिकार था। पोप का निर्वाचन पादरियों के एक विशेष संगठन द्वारा किया जाता था, जिन्हें कार्डिनल कहा जाता था। कैथोलिक चर्च ही एक ऐसा तंत्र था जो सम्पूर्ण यूरोप को एक सूत्र में बांधे हुए था, और व्यक्ति चाह कर भी इस बंधन से मुक्त नहीं हो सकता था। धीरे–धीरे इस बंधन की पकड़ और मज़बूत होती गयी और अब तब लोगों का दम घुटने लगा, पर विरोध का कहीं कोई नाम नहीं था। राजकीय कर के साथ चर्च के भी अनेक करों को देना होता था, जो कि असहनीय होता जा रहा था। कैथोलिक चर्च जिसका वास्तविक मूल मानव सेवा में था, अब चर्च लोगों से सेवा ले रहा था, जिसके प्रसार का मुख्य कारण ही सेवा भाव, धर्म की सादगी, संतों का शुद्ध आचरण था, अब वह कहीं धूमिल सा होता जा रहा था, धीरे–धीरे चर्च रूढ़ियों, अन्धविश्वासों, भ्रष्टाचारों और शोषण का उपकरण बन गया।

सोलहवीं शताब्दी के आते आते यह एकाधिकार टूटने लगा। पुनर्जागरण ने लोगों को सवाल करना सिखा दिया, जिसका जवाब वे पादरी वर्ग, पोप या चर्च से चाहते थे। परन्तु पोप के जवाब उन्हें संतुष्ट नहीं कर सके क्योंकि अब लोग तर्क एवं विवेक के आधार को महत्व देने लगे थे, अंततः विरोध होना स्वाभाविक हो गया। जहाँ तेरहवीं शताब्दी में चर्च का विरोध करने पर मृत्युदंड मिलता था, वहीं अब सोलहवीं सदी में विरोधियों ने न केवल मजबूती से पोप एवं चर्च की सत्ता का विरोध किया बल्कि प्रोटेस्टेंट चर्च की नींव भी डाली। इसके साथ ही यूरोप में अन्य अनेक सम्प्रदायों कि स्थापना होनी आरम्भ होने लगी जोकि उनके राष्ट्रीय राज्यों के अनुकूल थी। ये सभी ईसा मसीह और बाइबिल में तो पूर्ण यकीन रखते थे परन्तु पोप और रुढ़िवादी चर्च के संगठन के विरोधी थे, इनमें से अनेक समाज सुधारक भी हुए, जिनके बारे में आगे चर्चा की जाएगी और साथ ही धर्म सुधार आन्दोलन की विभिन्न गतिविधियों का भी आप अध्ययन कर सकेंगे।

5.2 उद्देश्य

इस इकाई में हम सोलहवीं सदी में यूरोप में होने वाले धर्म सुधार आन्दोलन के कारणों एवं परिणाम की विस्तार से चर्चा के साथ ही इस सम्बन्ध में विभिन्न इतिहासकारों के मत को भी समझने का प्रयास करेंगे। इस इकाई के अध्ययन के बाद आप–

- रोमन कैथोलिक चर्च के उत्थान एवं उसके विभाजन कि परिस्थितियों से अवगत हो सकेंगे।
- विभिन्न समाज सुधारक जिन्होंने इस धर्म सुधार आन्दोलन में अपना सहयोग दिया उनसे भी आप परिचित हो सकेंगे।
- और धर्म सुधार आन्दोलन के परिणामों का अध्ययन कर सकेंगे।
- चर्च विरोधी आन्दोलन तथा पूंजीवाद से इसके सम्बन्ध से अवगत हो पाएंगे।

5.3 धर्म सुधार का अर्थ एवं स्वरुप

धर्म सुधार से तात्पर्य धर्म में व्याप्त बुराईयों को समझने और उनमें सुधार के लिए किये जाने वाले प्रयास से है। समकालीन यूरोप में सुधारवादियों ने रोमन कैथोलिक चर्च में व्याप्त बुराईयों के खिलाफ अपनी आवाज़ बुलंद की। यूरोप में होने वाले धर्म सुधार आन्दोलन से आशय रोमन कैथोलिक चर्च के विभाजन से भी

समझा जाता है। 16वीं शताब्दी तक चर्च एवं पोप में अनेक बुराइयाँ घर कर गयी थीं, संसार के प्रति मोह, विलासिता, भ्रष्टाचार तथा पोप द्वारा धन की लूट (ईन्डल्जेंस की बिक्री के द्वारा) अर्थात पोप की नैतिकता का पूरी तरह पतन हो चुका था। 1517 ई० में मार्टिन लूथर द्वारा कैथोलिक चर्च में व्याप्त बुराईयों एवं पोप की निरंकुश सत्ता का पुरजोर विरोध किया गया, इसे ही व्यापक रूप में धर्म सुधार आन्दोलन कहा जाता है। इसके परिणामस्वरूप ईसाई धर्म के भीतर अनेक सम्प्रदायों का जन्म हुआ, जिनमे, प्रोटेस्टेंट, कैल्विनिस्ट, प्यूरिटन्स, ऐनाबैप्टिस्ट, एन्लिकंस, प्रेस्बिटेरेनियंस प्रमुख हैं। इसके पश्चात कैथोलिक चर्च ने भी स्वयं में व्याप्त बुराईयों को समाप्त एवं अनेक सुधार करते हुए प्रति धर्म सुधार आन्दोलन शुरू किये। परंतु इससे कहीं अधिक यह महत्वपूर्ण है कि इसके पश्चात धर्म से इतर सामाजिक एवं आर्थिक मामलों के सम्बन्ध में लोगों की सोच में व्यापक परिवर्तन आया। अब लोग धर्म को नहीं बल्कि मानव को अधिक महत्व दे रहे थे। पूंजीवाद एवं अर्थव्यवस्था के विकास के लिए नए कदम उठने लगे थे। इस इकाई में हम आगे पढेंगे कि यह विरोध केवल चर्च में व्याप्त बुराईयों के खिलाफ ही नहीं था, बल्कि एक ऐसा क्रन्तिकारी कदम था, जिसने चर्च कि जर्जर व्यवस्थाओं पर ऐसी चोट करी कि उसकी जड़ें तक हिल गयी और यह सब क्यों और कैसे हुआ? आइये इसका जवाब हम आगे देखते हैं–

5.4 पृष्ठभूमि

ऐसा नहीं है कि लोगों में धर्म सुधार की भावना का जागृत होना कोई नयी घटना थी, इससे पूर्व भी चर्च एवं चर्च के सांगठनिक गतिविधियों के सम्बन्ध में समय–समय पर विरोध प्रतिरोध होते ही रहे हैं। पंद्रहवीं सदी में कन्सिलियर आन्दोलन के द्वारा पोप के अधिकारों को सीमित करने कि मांग रखी गयी और सोलहवीं सदी में पुनर्जागरण के पश्चात् जब धर्म के स्थान पर मानव को केंद्र में रखकर समाज की कल्पना ने अनेक बुद्धिजीवियों द्वारा चर्च कि बुराईयों को समाप्त करने के लिए ईसाई धर्म की प्राचीन व्यवस्थाओं की ओर लौटने की बात की गई, तथा बाइबिल का क्षेत्रीय भाषा में अनुवाद के बारे में सोचा जाने लगा जो अब तक प्राचीन लैटिन भाषा में लिखी होती थी, और जिस पर पादरी वर्ग का एकाधिकार था। विक्लिफ तथा जॉन हुस जैसे लोगों ने जो आंदोलन चलाए उनमें किसानों, मजदूरों एवं निम्नवर्गीय का सहयोग प्राप्त था। परन्तु 16वीं सदी का धर्मसुधार आन्दोलन बुर्जुआ एवं धनिक वर्ग के समर्थन से ही संभव हो सका था।

जैसा कि आप पिछले अध्याय में पढ़ चुके होंगे कि सोलहवीं सदी यूरोप में पुनर्जागरण ने समाज के प्रत्येक क्षेत्र को उद्वेलित किया। अब लोगों ने तर्क के आधार पर समझना आरम्भ किया, तथा धर्म केन्द्रित समाज की गाँठ कमज़ोर होने लगी। पुनर्जागरण से पूर्व समूचे यूरोप पर कैथोलिक चर्च का एक छत्र अविभाज्य साम्राज्य था, रोम से लेकर सुदूर गावं तक चर्च का ही राज था। व्यक्ति जन्म के साथ स्वयं को चर्च की शरण में पाता और मृत्यु के साथ ही उसे चर्च से छुटकारा मिल पाता था, जिसका विरोध करने का साहस कोई नहीं कर सकता था। लोगों को अन्य राजकीय करों के साथ चर्च कर भी अनिवार्य रूप से देना होता था, जिसका उपयोग वे एश्वर्य एवं विलासितापूर्ण जीवन जीने में करते थे। पोप एवं उसकी संस्था दिनोंदिन भ्रष्ट होती जा रही थी। एक प्रकार से हम यह कह सकते हैं कि पवित्र रोमन साम्राज्य और पोप ने धर्म को जनता के लिए एक बोझ की तरह बना दिया था जोकि धीरे–धीरे असह्य होता जा रहा था, जिसका प्रस्फुटन धर्म सुधार आन्दोलन के रूप में सामने आया, जिसके परिणामस्वरुप ईसाई धर्म के अन्दर अनेक सम्प्रदायों का निर्माण हुआ जैसे– लूथरवाद, कैल्विनवाद, प्यूरिटनवाद, प्रेसबिटेरियन इत्यादि। इसके साथ ही कैथोलिकों ने प्रति धर्म सुधार आन्दोलन चलाया, और चर्च की कमियों को दूर करने का निर्णय लिया। यह धर्म सुधार आन्दोलन कई क्षेत्रों में हुआ। चर्च और समाज ीकि नैतिकता के साथ ही संरचना में भी सुधार किया गया। इसाई धर्म के वास्तविक स्वरुप की व्याख्या की गयी और साथ ही अनेक रुढ़िवादी सिद्धांतों में सुधार भी किया गया। अतः आगे हम देखेंगे कि यह धर्म सुधार आन्दोलन केवल कैथोलिक चर्च में व्याप्त बुराईयों के खिलाफ ही नहीं था बल्कि मानव समाज से जुड़े पहलुओं पर प्रहार करने वाली ताकतों के खिलाफ भी था।

5.5 धर्म सुधार आन्दोलन के कारण

धर्म सुधार के लिए जो कारण उत्तरदायी थे, यदि उन पर नज़र डाली जाये तो हम यह पाते हैं कि लगभग 14वीं 15वीं शताब्दी के मध्य कैथोलिक चर्च को अनेक आतंरिक समस्याओं का सामना करना पड रहा था। चर्च के अधिकारी अब अपना ध्यान आध्यात्म से हटाकर भोग–विलास में लगा रहे थे। अराजकता, युद्ध बिमारियां. एवं फसल बर्बाद होने के कारण, जिसे लोग पहले ईश्वर का क्रोध मानते थे पर अब लोगों के मन में धर्म, चर्च को लेकर अनेको सवाल थे; पर उनका जवाब देने वाला कैथोलिक चर्च में कोई विवेकशील धर्माधिकारी नहीं था। धर्मगुरुओं के भाषण भी उन्हें संतुष्ट नहीं कर पा रहे थे। परिस्थितियां चर्च की अक्षमता और धर्म गुरुओं के भ्रष्टाचार की कहानियां स्वयं बयान कर रही थीं। 14वीं–15वीं सदी के धार्मिक आन्दोलन कमज़ोर भले ही थे परन्तु इन आंदोलनों ने 16वीं सदी में हुए धर्म सुधार आन्दोलन के बीज जरुर बो दिए थे। वायक्लिफ और हस को उनके आंदोलनकारी विचारों तथा पोप विरोधी होने के कारण फांसी दे दी गयी। सोचने वाली बात यह है कि आखिर क्या कारण रहे होंगे जिससे कि यह सक्रीय एवं सफल हो गया। अतः आइये अब हम उन कारणों को देखते हैं।

5.5.1 राष्ट्रीय चेतना का विकास

पुनर्जागरण चेतना के कारण राज्य से धर्म–चर्च को अलग करने की कल्पना की जाने लगी, अतः अनेक राष्ट्रीय राज्यों के निर्माण पर बल दिया जाने लगा। मध्यकाल में ही संप्रभुता को लेकर चर्च एवं राज्य के बीच विवाद उत्पन्न हो गया था, चर्च ने धार्मिक एवं न्यायिक मामलों पर अपने दावे पेश किये और राज्य ने राजनैतिक संप्रभुता का। चर्च के पास अनेक व्यापक अधिकार थे, वित्तीय एवं विधिक मामले उसके पास होने के कारण वह अधिक शक्तिशाली था। परन्तु अब अनेक राजा और राजकुमार स्वछंद रूप से अपनी जनता पर शासन करना चाहते थे, जिसमें वे चर्च एवं पोप की भागीदारी के बिलकुल भी समर्थक नहीं थे। अब वे इस बात को समझ चुके थे कि जितना ज्यादा नियंत्रण होगा उतना ही अधिक उन्हें राजस्व प्राप्त होगा, जिससे वे अपना और अधिक राज्य विस्तार और विकास कर सकते थे। जर्मनी में चर्च विरोधी भावनाएं तीव्र थीं और इसी कारण लूथर और उसके विचारों को दबे रूपों में ही सही पर राज्य एवं कुलीन वर्ग का समर्थन मिल रहा था। स्विट्ज़रलैंड में भी ज्विंगली ने नगर परिषदों से अपने सुधार आंदोलनों में समर्थन एवं सहयोग की अपील की। अब लोग यह सहन नहीं कर सकते थे कि उनके राज्य का धन कर के रूप में रोम जाये, क्योंकि अब लोग इस धन का उपयोग अपने राज्य के विकास में लगाना चाहते थे, अतः हम यह स्पष्ट रूप से देख सकते हैं कि जब राष्ट्रीय चेतना का विकास हो रहा था तो लोग चर्च के प्रभाव से विमुख होते जा रहे थे।

5.5.2 प्रिंटिंग प्रेस

सोलहवीं सदी में प्रिंटिंग प्रेस के निर्माण ने भी धर्म सुधार आन्दोलन को और अधिक प्रभावी बना दिया। अब सुधारकों के विचारों को आमजन तक पहुचने में आसानी हो गयी। लोक भाषाओँ में सुधारकों की बातें पहुँचने लगी और इसी के साथ बाइबिल एवं अन्य धर्मशास्त्रों का अनुवाद और उसकी अनेक प्रतियां उनकी अपनी भाषा में उपलब्ध होने लगी। लगभग 10 लाख बाइबिल की प्रतियाँ प्रकाशित की गयीं। सोलहवीं सदी के अंतिम दशक तक इंग्लैण्ड के उच्च वर्ग तक लूथर के विचार उसकी किताबों के द्वारा अधिक लोकप्रिय होने लगे क्योंकि इन वर्गों के पास इन छपी हुई किताबों को खरीदने और इन्हें पढ़ने की क्षमता थी। जहाँ वायक्लिफ और हेस के विचार प्रिंटिंग प्रेस ना होने के कारण उनके क्षेत्र के बाहर शायद ही जाने गये, परन्तु लूथर के विचार सम्पूर्ण जर्मनी और जर्मनी के बाहर भी लोगो को प्रभावित कर रहे थे, और यह सब केवल प्रिंटिंग प्रेस के कारण ही संभव हो सका था। धर्म सुधार आन्दोलन के प्रचार के लिए इन प्रिंटिंग प्रेस की सहायता से न केवल किताबों, धर्मशास्त्रों का अनुवाद बल्कि अनेक तस्वीरें और कार्टून्स को भी शामिल किया गया।

5.5.3 मानववाद

धर्म सुधार आन्दोलन के प्रसार में मानववाद की भी भूमिका रही है। मानववाद का अर्थ उन सभी विषयों के अध्ययन से है, जो मानव से सम्बंधित हो। अर्थात समाज का केन्द्रीय विषय मानव, मानव जीवन में रूचि, मानव की समस्याओं का अध्ययन, मानव का आदर इत्यादी होना चाहिए। इसके अंतर्गत मानव के बौद्धिक चिंतन का विकास से तर्क एवं आलोचन को बल मिला। वास्तव में मानववाद प्रत्यक्ष रूप से धर्म सुधार आन्दोलन से जुडा हुआ तो नहीं था, परन्तु फिर भी इसने आलोचना का हथियार तो थमा ही दिया था, जिसके द्वारा चर्च एवं पोप के भ्रष्ट संगठन पर प्रहार करना आसान हो गया। यह अवश्य ही ध्यान देने की बात है कि मानववादी लेखकों और समाज सुधारकों (खास कर मार्टिन लूथर) का कोई सम्बन्ध नहीं था, परन्तु इरैस्मस के विचारों का प्रभाव कहीं न कहीं अवश्य ही दिख पड़ता है। डेसिडेरियस इरैस्मस (1466–1536) को उत्तरी मानववाद का सर्वश्रेष्ठ लेखक माना जाता है, उसने धर्मग्रंथों के महत्व के साथ ही पोप एवं अन्य धर्माधिकारियों के एकाधिकार की आलोचना की, उसने चर्च के रुढ़िवादी संस्कारों की भी आलोचना की जो मनुष्य के लिए असह्य थे। लूथर के अलावा हमें कैल्विन और ज्विंगली के विचारों से भी यह पता चलता है कि उनके विचारों का बौद्धिक आधार मानववाद ही था, जिसने उन्हें धर्म सुधार आन्दोलन के लिए उद्वेलित किया।

5.5.4 बुर्जुआ वर्ग का उदय

बुर्जुआ वर्ग के उदय को भी धर्म सुधार आन्दोलन का कारण माना जाता है। मार्क्स और एंगेल्स धर्म सुधार आन्दोलन को क्रान्तिकारी घटना मानते हैं। क्योंकि यह वर्ग (बुर्जुआ) सामंतवाद का विरोधी था, जर्मनी में इनका उदय पीजेंट वार के दौरान हो रहा था, जो कि जर्मनी के सामाजिक–आर्थिक संघर्ष की कहानी है। धर्म सुधार आन्दोलन इन्हीं संघर्षो की अभिव्यक्ति है। यह माना जाता है कि बढती हुई पूंजीवादी वयवस्था ने वणिक समुदाय के धन संपत्ति के विस्तार में योगदान दिया और लूथर, केल्विन, ज्विंगली इत्यादि ने इन महत्वपूर्ण लोगों को प्रभावित किया परन्तु इसके बावजूद यह सवाल उठता है कि क्या वास्तव में इन नए बुर्जुआ वर्ग कि संपत्ति में वृद्धि हुई थी, राजकुमारों ने आर्थिक प्रगति के लिए कोई कर वृद्धि किये थे? उदाहरण के रूप में स्काटलैंड को देख सकते हैं।

5.5.5 पोप एवं चर्च में दोष

कैथोलिक चर्च का प्रसार सादगी, सेवा भाव और संतों के प्रभावी आचरण के कारण हो सका था, परन्तु 14वीं–15वीं सदी से ही उनमें उनमे अनेक कमियां आनी शुरू हो गयीं थी। पोप द्वारा चर्च के विभिन्न पदों को बेचा जाने लगा था, जो धर्माधिकारी वर्ग अब तक संत का जीवन जी रहे थे, व्यभिचारी होते जा रहे थे, जिनकी अनेक नाजायज संताने थीं। इन संतानों के जीवन को सुरक्षित बनाने के लिए वे निर्लज्ज होकर अनेक यत्न कर रहे थे। जुलियस II (1505–1513) पोप होते हुए भी सैनिक कार्यों में रूचि लेता था। लियो X (1513–1529) एक कला प्रेमी था, जिस पर पुनर्जागरण का ऐसा प्रभाव हुआ कि उसने इन्हें मूर्त रूप देने के लिए लोगों पर विभिन्न कर लगाकर आर्थिक शोषण भी करना प्रारंभ कर दिया।

इस आर्थिक शोषण का सबसे घिनौना रूप क्षमा–पत्रों (इन्डल्जेंस) के रूप में देखा गया। वास्तव में ईसाई धर्म में अपने पापों के प्रायश्चित के लिए पादरी के समक्ष कंफेशन करना होता था, जिसका आधार यह होता है कि, मन से अपने पापों को स्वीकार करने और प्रायश्चित करने के बाद फिर से अपनी इस भूल को दुहरायेगा नहीं, तो उस क्षमा के योग्य समझा जाता था और क्षमा करने का सबसे अधिक अधिकार पोप के पास था। वास्तव में यदि देखा जाए तो वह भी पूरी तरह क्षमा नहीं कर सकता था, बल्कि ईश्वर द्वारा उसे क्षमा कर दिया जायेगा ऐसा वह केवल आश्वासन दे सकता था लेकिन अपने निकृष्टतम रूप में प्रयाश्चित हेतु क्षमा के लिए क्षमा–पत्रों को बेचा जाने लगा। ऐसा कहा जाता था कि इन पत्रों को खरीदने से वह न केवल पिछले पापों से मुक्त ही नहीं हो जाता है, बल्कि भविष्य में भी यदि वह कोई पाप करे तो उसे उससे भी मुक्ति मिल जाएगी। टेटजेल द्वारा यह कहना कि जैसे ही इस धन पेटिका में सिक्कों के गिरने की आवाज़ आती है, स्वर्ग में उसका घर बन जाता है। ये सब बाते बुद्धिजीवियों द्वारा अस्वीकार्य थीं।

अतः यह स्पष्ट है कि यूरोपीय समाज का प्रत्येक वर्ग किसी न किसी रूप में धर्म विरोधी होता जा रहा था और इन घटनाओं से लोगों के अन्दर चर्च विरोधी भावनाए उत्पन्न होने लगीं, जिन्हें आसानी से शांत नहीं किया जा सकता था। ये अन्दर ही अन्दर विरोध की चिंगारियां तो थी, आवश्यकता थी तो बस नेतृत्व की जो एक फूंक से इनके अन्दर की क्रांति को भड़का सके, और मार्टिन लूथर ने इसे नेतृत्व प्रदान किया।

5.6 मार्टिन लूथर (1483–1546)

मार्टिन लूथर का जन्म 10 नवम्बर, 1483 ई० में जर्मनी के एक किसान परिवार में हुआ था। पिता ने उनकी शिक्षा–दीक्षा पर अधिक ध्यान दिया, उनके पिता उन्हें वकील बनाना चाहते थे परन्तु कानून पढ़ते हुए उनका रुझान धर्म की ओर अधिक होने लगा। अतः 1505 ई० में उन्होंने संत बनने का फैसला किया, और पिता के न चाहते हुए भी उन्होंने एरफर्ट से अपने मठ–जीवन का आरम्भ किया। 1511 ई० में लूथर ने रोम की यात्रा की जहाँ पोप एवं पोपतंत्र में भ्रष्टाचार को देखकर उन्हें बहुत निराशा हुई। धर्म एवं धार्मिक आस्था में लूथर को पूर्ण विश्वास था, परन्तु क्षमा पत्रों की बिक्री ने उन्हें चर्च विरोधी बना दिया। लूथर ने इन क्षमा पत्रों के विरोध में 95 आक्षेप लिखकर विटेंबर्ग के चर्च के द्वार पर चिपका दिए, चर्च एवं भ्रष्ट पोपतंत्र के खिलाफ तीन लघु पुस्तके लिखी, जिनमें उनकी शिक्षाओं एवं विचारों कि जानकारी प्राप्त होती है, ये पुस्तिकाए निम्न हैं–

1. जर्मन सामंत वर्ग को संबोधन (An Address to the Nobility of the German Nation)
2. ईश्वर के चर्च की कैद (On the Babylonian captivity of the church of God)
3. ईसाई मनुष्य की मुक्ति (On the freedom of Christian man)

अपने विचारों के द्वारा लूथर ने चर्च एवं समाज व्याप्त बुराईयों को समाप्त करने का सफल प्रयास किया।

5.6.1 मार्टिन लूथर के विचार

1. उसने ईसा और बाइबिल को आदर्श माना तथा चर्च की संस्था एवं पोप की निरंकुशता का बहिष्कार किया।
2. मोक्ष की प्राप्ति केवल ईश्वर की दया व प्रेम पर निर्भर है जो केवल ईश्वर में आस्था से ही मिल सकती है।
3. क्षमा के लिए प्रायश्चित को आवश्यक बताया परन्तु वह भी केवल ईश्वर की अनुकम्पा से ही मिल सकती है।
4. चर्च द्वारा प्रदत्त विभिन्न संस्कारों में से उसने केवल दो बप्तिज्मा, युखारिस्त को ही महत्वपूर्ण बताया।
5. उसने रुढ़िवादी कर्मकांडों, चमत्कारों एवं मूर्ति– पूजा का विरोध किया।
6. बाइबिल एवं अन्य धर्मग्रंथों को पढने और समझने के लिए उसने जर्मन भाषा में उनका अनुवाद करवाया ताकि सभी लोग इसका अध्ययन कर सकें।
7. शिक्षा को महत्वपूर्ण बताया तथा राज्य की ओर से सभी के लिए नैतिक एवं धार्मिक शिक्षा अनिवार्य करने की बात कही।
8. पादरियों के लिए उसने ब्रह्मचर्य से बेहतर गृहस्थ जीवन को बताया।
9. उसने राष्ट्रीय राज्यों के उत्थान को आवश्यक बताया तथा चर्च को राज्य के अधीन करने की बात कही।

इन विचारों के साथ लूथर ने धर्मसुधार आन्दोलन का प्रचार–प्रसार किया। 1525 ई० में लूथर ने किसान आंदोलनों का समर्थन किया, परन्तु उसे इस बात का एहसास हो गया था कि उसे इन गरीब किसानों से कोई सहायता नहीं मिल पायेगी, तथा केवल शासक और मध्यम वर्ग के सहयोग से अपने विचारों का प्रसार कर सकता था। अब लूथर ने स्वतंत्र चर्च की स्थापना की बात कही जिस पर राज्य का नियंत्रण आवश्यक बताया, उसने मठ जीवन को भी समाप्त करने की बात की। सारांशतः हम यह कह सकते हैं कि वह धर्म के सरलीकरण के प्रयत्न में लगा हुआ था।

5.6.2 प्रोटेस्टेंट चर्च

मार्टिन लूथर के विचारों से जर्मनी में धर्म सुधार को लेकर आन्दोलन शुरू हो गया। इस धार्मिक विवाद को समाप्त करने के लिए 1526 में स्पीयर की धर्म सभा बुलाई गयी परन्तु इस सभा का कोई परिणाम नहीं निकला, इसके पश्चात् 1529 में स्पीयर में ही दूसरी सभा का आयोजन किया गया, इसमें धर्म सुधार आन्दोलन के खिलाफ अनेक कठोर निर्णय लिए गए, जिसके तहत लूथर की पुस्तकों एवं उसके विचारों पर प्रतिबंध लगाया गया। ये प्रतिबन्ध एक पक्षीय था जिसमें लूथर एवं उसके समर्थकों से कोई राय नही ली गयी। जिसका विरोध (प्रोटेस्ट) किया गया इसी कारण इस धर्म सुधार आन्दोलन को प्रोटेस्टेंट कहा गया। वास्तव में यह विरोध 19 अप्रैल 1529 को हुआ अतः इसी दिन से प्रोटेस्टेंट शब्द का जन्म माना जाता है। कैथोलिक्स और प्रोटेस्टेंट समर्थकों के बीच चली इस लड़ाई का अंत 1555 में आग्सबर्ग शांति समझौते के साथ हुआ जिसके द्वारा प्रोटेस्टेंट धर्म को मान्यता मिल गयी और 300 से भी अधिक जर्मन राजकुमारों को अपना धर्म चुनने की स्वीकृति मिल गयी और उन राजकुमारों की प्रजा को उनके द्वारा चुने गए धर्म का पालन करना पड़ता था। लूथर की भाँति यूरोप के अन्य भागों में प्रोटेस्टेंट आन्दोलन चल रहे थे, स्विट्ज़रलैंड में इसका नेतृत्व ज्विंगली द्वारा किया गया, उसने भी कैथोलिक धर्म की रुढ़िवादी परम्पराओं को छोड़ कर केवल बाइबिल की सर्वोच्चता का समर्थन किया। उसने कोपल की संधि के द्वारा स्विट्ज़रलैंड में रिफोर्मेड चर्च कि स्थापना की। इसी प्रकार यूरोप के अन्य देशों में भी धर्म सुधार आन्दोलन होते रहे और किसी न किसी रूप में प्रोटेस्टेंटवाद को समर्थन मिलता रहा।

5.7 ज्विंगली (1484–1531)

कैथोलिक चर्च का विरोध करने वाले मार्टिन लूथर के अलावा अन्य सुधारक भी थे जिनमे जॉन केल्विन और ज्विंगली का नाम प्रमुख है। ज्विंगली लूथर का समकालीन था। उसने ज्यूरिक के स्विस परिसंघ में धर्म सुधार चलाया, उसका यह धर्म सुधार मानववादी (इरैस्मस) विचारों से प्रेरित था। जॉन वर्थ के अनुसार ज्विंगली सांस्कृतिक सुधार को अधिक महत्व देते थे। उन्होंने धर्म सुधार के साधारण रूप से विकास करने की बात कही। उनके उपदेश सरल और सीधी भाषा में होने के कारण लोगों को समझने में आसानी होती थी। ज्विंगली ने लूथर के समान ही परम संस्कारों की आलोचना की, परन्तु बाइबिल को महत्वपूर्ण बताया। बच्चों के बप्तिस्मा की परंपरा को अपनाया, युखारिस्त (प्रभु–भोज) को भी आवश्यक बताया। उनका मानना था कि ईसा लोगों के दिलों में रहते हैं परन्तु लूथर प्रभुभोज में ईसा की उपस्थिति मानते थे। ज्विंगली ने धर्मसुधार के लिए चर्च में पवित्र समुदाय का निर्माण किया, जिसने पादरी वर्ग और आम प्रजा को एक स्तर पर ला दिया। इस प्रवित्र समुदाय ने बप्तिस्मा, युखारिस्त और अंतिम संस्कार के लिए कर वसूलने की प्रथा को समाप्त कर दिया। पादरी वर्ग का कार्य केवल बाइबिल एवं धर्म ग्रंथों का उपदेश देना भर रह गया। मूर्ति पूजा एवं जुलूसों पर प्रतिबन्ध लगा दिया गया। ज्विंगली ने लूथर कि अपेक्षा धर्म और राज्य को जोड़ कर देखा। अतः ज्विंगली के विचारों और शिक्षाओं का प्रभाव हमें ज्युरिक में देखने को मिलता है जहाँ मठों को समाप्त कर के उसे अनाथालयों और अस्पतालों में तब्दील कर दिया गया और मठों की संपत्ति का उपयोग गरीबों की मदद में किया गया। यहाँ चर्च और राज्य द्वारा मिलकर नैतिक अनुशासन देखा जाने लगा, मजिस्ट्रेट और पादरी वर्ग को अर्थात चर्च और राज्यों द्वारा मिलाकर अनेक दंड प्रावधानों में सुधार किया गया।

5.8 केल्विन्वाद

जॉन कैल्विन (1509–1564) फ्रांस के नेयो शहर का रहने वाला था। उसके माता–पिता उसे पादरी बनाना चाहते थे। धर्म और साहित्य में उसकी गहरी रूचि थी, जिसका उसने अध्ययन भी किया परन्तु चर्च की दशा को देखते हुए उसके पिता ने उसे वकील बनने की सलाह दी। कैथोलिक चर्च के भ्रष्ट माहौल को देखकर उसने एक अलग इसाई सम्प्रदाय की स्थापना में रूचि ली, उसने चर्च से सम्बन्ध तोड़कर लोगों के समक्ष अपने विचार प्रस्तुत किये, केल्विन पर इरेस्मस जैसे मानववादियों का गहरा प्रभाव था। आमतौर पर माना जाता है कि 1533–34 में कैल्विन नरम मानववादी से क्रान्तिकारी सुधारक बन गया। उनका विचार था कि

मोक्ष केवल ईश्वर की आस्था में मिल सकता है, जो कि बाइबिल में निहित है। यह आस्था का सबसे बड़ा स्त्रोत है और सभी को इसपर अमल करना चाहिए। केल्विन ने अलग–अलग देशों में प्रोटेस्टेंट सुधारकों की जमात तैयार की, इसके लिए उन्हें तीन परीक्षणों से गुजरना पड़ता था। धर्म की खुली स्वीकृति, मर्यादित एवं धर्मपरायण जीवन तथा बप्तिज्मा और प्रभुभोज में शामिल होना आवश्यक था। उन्होंने जेनेवा को अंतरराष्ट्रीय प्रोटेस्टेंटवादी का मुख्य केंद्र बना दिया और केल्विन की पुस्तक इंस्टिट्यूट ऑफ़ द क्रिश्चियन रिलिजन को प्रोटेस्टेंट धर्मशास्त्र की सबसे प्रभावशाली पुस्तक माना गया। केल्विन के विचारों और शिक्षाओं का आंकलन करें तो हम पातें है कि उसका धर्मसुधार लूथर से बहुत सरल था उसने परम संस्कारों को उचित ढंग से कराने में बल दिया, केल्विन ने धर्म सुधार के लिए चर्च की संरचना और अनुशासन पर अपना ध्यान केन्द्रित किया। चर्च की संरचना को चार प्रमुख संस्थाओं में बांटकर चर्च के भ्रष्ट माहौल को ख़त्म किया। यद्यपि केल्विन पर चर्च के सम्बन्ध में अत्यधिक खर्च करने का आरोप लगाया जाता है फिर भी हम देखते हैं कि समकालीन व्यापारियों दुकानदारों एवं बुर्जुआ वर्ग उसके द्वारा स्थापित अनुशासन से प्रसन्न थे। जेनेवा में सम्पन्नता बढ़ी और भ्रष्ट लोगों पर नियंत्रण किया जा सका। केल्विन समाज के लिए धन को बुराई नहीं बल्कि आवश्यकता समझते थे, उनके अनुसार उत्पादन के लिए मामूली ब्याज पर ऋण दिया जा सकता था परन्तु वे सूदखोरी के खिलाफ भी थे। वास्तव में यदि देखा जाए तो केल्विन समाज की जरूरतों को आर्थिक गतिविधियों से जोड़कर देखते थे; उनके इन विचारों का प्रसार यूरोप के अनेक भागों में हुआ जिनमें फ्रांस, नीदरलैंड और स्कॉटलैंड प्रमुख हैं, जहाँ इन्होंने अपने सुधारों को स्थापित करने के लिए मिशनरियों को भेजा। केल्विन्वाद मध्य और पश्चिमी यूरोप में भी फ़ैल गया तथा पोलैंड, लिथुवानिया, हंगरी और बोहेमिया में भी लोकप्रिय हुआ यहाँ तक कि हंगरी का डेब्रिसेन नगर 'द केवेल्निस्ट रोम' कहा जाने लगा।

5.9 एंग्लिकन चर्च

जर्मनी और स्विट्ज़रलैंड की अपेक्षा इंग्लैंड में धर्मसुधार का स्वरुप राजनीतिक था। यहाँ ट्युडर वंश का शासक हेनरी अष्टम (1509–1547) अपनी पत्नी कैथरीन को तलाक देकर दूसरा विवाह करना चाहता था, परन्तु पोप इसके लिए तैयार नहीं था, जिससे हेनरी ने कैथोलिक चर्च एवं पोप से अपने सम्बन्ध 1534 ई० में तोड़ कर स्वयं को अर्थात इंग्लैण्ड के शासक को इंग्लैण्ड के चर्च का सर्वोच्च अधिकारी घोषित कर दिया। उसके बाद उसके उत्तराधिकारी ने भी अपने पिता के विचारों को आगे बढाया। उसने 42 सिद्धांतों के घोषणापत्र की एक प्रार्थना पुस्तक प्रकाशित कर प्रोटेस्टेंट विचारधारा का समर्थन किया। एलिज़ाबेथ के काल में इस विचारधारा को और समर्थन प्राप्त हुआ, और 42 सिद्धान्तों को संशोधित कर 39 सिद्धान्त स्थापित किये गये, इंग्लैण्ड में जिस राष्ट्रीय चर्च की स्थापना हुई, वह कर्मकाण्डों से रोमन और धर्मशास्त्रीय रूप से कैल्विनवादी था। इस प्रकार मार्टिन लूथर ज्विंगली, केल्विन और हेनरी अष्टम के प्रयत्नों से यूरोप के अधिकांश देशों में धर्मसुधार की भावना जागृत होने लगी, और विकसित भी हुई।

5.10 धर्मसुधार आन्दोलन के परिणाम

यूरोप में होने वाले इस धर्मसुधार आन्दोलन से मानव जीवन में आमूल परिवर्तन हुए। मध्यकाल से धर्म ही उनके जीवन का केंद्र बिंदु हुआ करता था, परन्तु मानववादी सुधारकों के द्वारा जो प्रयास किये गए उसने यूरोपीय मानव के प्रत्येक समुदाय के आतंरिक एवं बाह्य जीवन को झकझोर कर रख दिया। अब लोग धर्म की वास्तविक महत्ता से रूबरू होने लगे। यदि हम धर्म सुधार का आंकलन करें तो हम पाते हैं कि अन्य आंदोलनों की भांति इसके भी परिणाम बहुत स्पष्ट हैं, जोकि निम्न हैं–

5.10.1 कैथोलिक चर्च का विभाजन

धर्म सुधार आन्दोलन का पहला परिणाम कैथोलिक चर्च का विभाजन था। कैथोलिक चर्च कई भागों में विभक्त हो गया था, और प्रत्येक समुदाय की अपनी अलग पहचान थी, इनके अपने अलग राजनैतिक, व्यवहारिक और नैतिक कायदे कानून थे, हर समूह की अपनी अलग सख्त पहचान थी, जिनके विचारों में काफी संघर्ष था।

5.10.2 राजनैतिक परिवर्तन

मध्यकाल से ही हमें चर्च का प्रभाव राज्य एवं शासकों के जीवन पर साफ़ दिखाई देता है। 15वीं सदी में तो चर्च ने राजनीति में भी भाग लेना आरम्भ कर दिया था। धर्मसुधार आंदोलनों ने राज्य एवं शासकों के जीवन को बदल कर रख दिया। अब राज्य चर्च के बंधन से मुक्त हो गया था, और अनेक धर्मनिरपेक्ष राष्ट्रीय राज्यों की स्थापना को बल मिला। निरंकुश शासकों द्वारा अपने राज्यों का विस्तार किया जाने लगा। अब वे इस बात को समझ चुके थे, राज्य का जितना अधिक विस्तार होगा करों के द्वारा उतना ही उनकी आय में वृद्धि होगी, जिससे वे अपने राज्य का विकास स्वतंत्र होकर कर सकेंगे। चर्च एवं उसकी संपत्ति पर भी राज्य का अधिकार हो गया था, और धार्मिक कर अब रोम नहीं जा रहे थे। पोप एवं धर्माचार्यों का कार्य केवल धार्मिक उपदेशों तक सीमित कर दिया गया। लूथर का मानना था कि शासकों के आदेशों का पालन करना प्रजा का कर्तव्य है जबकि केल्विन धार्मिक राज्य की स्थापना पर जोर देते थे।

5.10.3 गृहस्थ जीवन और स्त्री दशा

ईसाई धर्म में विवाह को एक संस्कार माना जाता है, परन्तु कैथोलिक चर्च के धर्माचार्यों को अविवाहित रहकर आजीवन चर्च कि सेवा करनी होती थी। अपनी काम इच्छाओं पर नियंत्रण ना रख पाने के कारण उनमे व्यभिचार बढ़ता गया, जिससे उनका नैतिक पतन भी हुआ। धर्म सुधार आन्दोलन के तहत गृहस्थ जीवन को आवश्यक समझा जाने लगा। लूथर के अनुसार यदि कोई अपनी काम इच्छाओं पर नियंत्रण रख सकता है, तो ही ब्रह्मचर्य का पालन करे अन्यथा उसे विवाह कर लेना चाहिए। धर्म सुधार ने ब्रह्मचर्य एवं मठ जीवन की पवित्रता को नकार दिया। पहले मठ जीवन को स्वर्ग का मार्ग समझा जाता था, परन्तु अब उसका स्थान परिवार ने ले लिया, अब पारिवारिक जीवन को अधिक महत्वपूर्ण समझा जाने लगा।

धर्मसुधार का प्रभाव यदि स्त्रियों की दशा के सन्दर्भ में देखा जाए तो अब उनकी शिक्षा की आवश्यकता को समझा जाने लगा, अब वे भी बाइबिल एवं अन्य धार्मिक साहित्यों का अध्ययन कर सकती थीं। उनके लिए प्राथमिक स्कूलों और महाविद्यालयों स्थापित होने लगे, परन्तु इनका उद्देश्य स्त्रियों की नैतिक शिक्षा से था न कि उनके बौद्धिक विकास की बात सोची जा रही थी। लूथर ने उनके घरेलु काम काज और घर की देखभाल पर अधिक जोर दिया। मठों को समाप्त करने का एक उद्देश्य यह भी था कि वे महिलाओं के धार्मिक संघों को समाप्त करना चाहते थे। उनके अनुसार महिलाएं ही पाप का केंद्र थीं। कुलीन महिलाओं की स्थिति फिर भी बेहतर थी, परन्तु साधारण महिलाओं की स्थिति में कोई खास परिवर्तन नहीं आया।

5.10.4 शिक्षा एवं संस्कृति

प्रोटेस्टेंटवादियों एवं जेसुइट मिशनरियों ने शिक्षा के महत्व को समझते हुए उसके प्रोत्साहन के लिए अनेक कार्य किये। पुनर्जागरण एवं मानववादी विचारों ने शिक्षा के प्रति लोगों को जागृत अवश्य किया था, परन्तु इन धर्मसुधारकों ने इसे और आगे बढ़ाया। मानववादी विचारकों से प्रेरित होकर अनेक स्कूलों की स्थापना का कार्य हुआ, और यह मानववादियों की अपेक्षा आम जन के बच्चों के लिए भी था। लूथर के अनुसार शिक्षा सभी के लिए अनिवार्य होनी चाहिए, और इसकी व्यवस्था राज्य द्वारा की जानी चाहिए। इन विद्यालयों में धार्मिक शिक्षा के साथ मानववादी शिक्षा भी दी जाने लगी। लूथर शिक्षा के लिए लोकप्रिय माध्यम जैसे– नृत्य, संगीत एवं नाटकों को आवश्यक बताते थे।

धर्म सुधार आन्दोलन का प्रभाव लोक संस्कृति पर भी दिखाई देता है– धर्म सुधारकों ने यूरोप में व्याप्त रुढ़िवादी कर्मकांडों की आलोचना की, उनके अनुसार संतों के नाम पर छुट्टी, धार्मिक जुलुस, उपवास इत्यादि को मानने से इंकार किया। इस सम्बन्ध में कैल्विन और ज्विंगली के विचार लूथर से अधिक आक्रामक दिखते हैं। इन्होंने संतों की मूर्ति, मेरी की मूर्ति रखने तथा मूर्ति पूजा की आलोचना की, तथा पूजा को सामूहिक या पारिवारिक स्तर पर सरल रूप में अपनाने की सलाह दी। धर्मसुधार आन्दोलन ने लोक भाषाओं को भी लोकप्रिय बनाने का कार्य किया। अब लोक भाषाओँ में साहित्य की रचना की जाने लगी, जिसके कारण लोगों में पढने की रूचि भी विकसित हो सकी। सुधार के द्वारा यूरोप में व्याप्त जादू–टोना कर्मकांडों एवं डाइनों को

मारने इत्यादि को समाप्त करने की पहल भी हो सकी, जोकि लगभग 17वीं सदी के अंत तक ही संभव हो सका।

5.10.5 प्रति धर्म सुधार आन्दोलन

कैथोलिक चर्च एवं पोप के भ्रष्ट आचरण एवं संरचनात्मक दोष के कारण उन्हें विरोध का सामना करना पड़ रहा था, जिससे कैथोलिक चर्च से टूटकर अनेक सम्प्रदायों की स्थापना भी हुई। कैथोलिक चर्च में बुराईयों की जड़ें इतनी गहरी थी कि सुधार भी आंतरिक रूप से ही किया जा सकता था। जिसके लिए चर्च में संगठनात्मक परिवर्तन, पोप के आचरण व्यवहार को बदलकर ही नयी स्फूर्ति पैदा की जा सकती थी। जिसमें प्रमुख रूप से इग्नेशियस लोयोला (1491–1556) ने महत्वपूर्ण कार्य किये हैं। अपने आरम्भिक जीवन में ये स्पेन के निवासी और बहादुर सैनिक थे, युद्ध में घायल हो जाने के पश्चात उन्होंने आध्यात्म की ओर अपना घ्यान आकर्षित किया। कैथोलिक चर्च में व्याप्त बुराईयों को समाप्त करने के लिए उसने कठोर अनुशासन लागू किये, और उनका पालन करने पर जोर दिया। उसने शिक्षा के विभिन्न पहलुओं पर ध्यान दिया और खेल–कूद, नृत्य, नाटक और अभिनय के द्वारा लोगों तक नैतिक उपदेश पहुंचाने का कार्य किया। लोयोला अपने शिष्यों को केवल पवित्र जीवन की ही शिक्षा नहीं देता था बल्कि उसने चर्च की रक्षा एवं उसके प्रसार पर भी बल दिया। लोयोला के अनुयायियों का संघ जेसुइट संघ कहलाया, जिन्होंने सुधारों के साथ कैथोलिक चर्च का पुनः प्रसार किया और पोपतंत्र के अधिकारों को पुनः स्थापित किया। विद्रोहों के दमन के लिए ट्रेंट की धर्म सभा का भी आयोजन किया गया जिसके द्वारा कैथोलिकवाद को पुनः जीवित करना था, तथा उन दोषों को दूर करना था जिसके कारण प्रोटेस्टेंटवाद का जन्म संभव हो सका था। इस सभा द्वारा यह भी निर्णय लिया गया कि उन क्षेत्रों में कैथोलिकवाद का प्रचार करना था जहाँ प्रोटेस्टेंटवादी सफल नहीं हो सके थे।

5.10.6 पूंजीवादी अर्थव्यवस्था का विकास

पूंजीवादी समाज का जन्म पुनर्जागरण के साथ ही ही गया था, परन्तु इसका विकास धर्मसुधार आन्दोलन के साथ दिखाई देता है। समाज में नए माध्यम वर्ग की उत्पत्ति एवं राष्ट्रीयता की भावना को धर्मसुधारकों ने बढ़ावा दिया जिससे चर्च को जाने वाले धन (जिनका उत्पादन में कोई योगदान नहीं होता था) को रोककर उसे उत्पादन में लगाने की भावना का विकास हुआ, इससे पूंजीवादी अर्थव्यवस्था का विकास हुआ। मैक्स वेबर ने भी पूंजीवाद के विकास का सम्बन्ध प्रोटेस्टेंट आन्दोलन से बताया है, उनके अनुसार पूंजीवादी भावना का विकास आर्थिक कारकों से नहीं बल्कि सामाजिक आवश्यकताओं का परिणाम था। पूंजीवादी उद्यम धर्मसुधार से पहले भी कार्यरत थे परंतु पूंजीवादी भावना का विकास प्रोटेस्टेंट आन्दोलन का परिणाम था। वेबर के अनुसार प्रोटेस्टेंट सुधारकों ने खासकर कैल्विन के अनुशासनात्मक विचारों ने लोगों को उद्यमशीलता का पाठ पढ़ाया, जिससे पूंजीवादी भावना का विकास हुआ, यह भावना सत्ता या किसी अन्य लालच के लिए नहीं बल्कि काफी सूझ–बुझ से कमाया गया लाभ था, जिससे उन्हें व्यवसायिक सफलता भी मिली, अब धन कमाना गलत नहीं माना जाता था, क्योंकि कैल्विनवादी अपने कार्य को मेहनत और लगन से करना पवित्र उत्तरदायित्व मानते थे। अतः वेबर के अनुसार उन क्षेत्रों में पूंजीवाद का उदय अधिक तेज़ी से हुआ जहाँ केल्विन के विचारों को समर्थन मिला और अपनाया गया।

वेबर का यह सिद्धांत मार्क्सवादी विचारों से अलग था। मार्क्स के अनुसार पूंजीवाद का विकास आर्थिक एवं भौतिक कारकों में ही निहित है जबकि वेबर ने विचारों और वातावरण को अधिक महत्व दिया है। अनेक विद्वान वेबर के इन सिद्धांतों को नहीं मानते, क्योंकि उनका मानना है कि वेबर के विचार विकसित अर्थव्यवस्था के लिए तो सही हो सकते है पर आरंभिक दौर के लिए नहीं। अनेक विद्वानों जिनमें ई. ज्योफरी भी हैं, जिनका मानना है कि अर्थव्यवस्था में विकास एवं पूंजीवादी भावना के विस्तार के कारण धर्मसुधार की भावना उत्पन्न हो सकी।

5.11 अभ्यास एवं बोध प्रश्न

प्र०1– प्रेस्बिटेरियन कौन है?

प्र०2– इन्डल्जेंस से आप क्या समझते है?

प्र०3– एंग्लिकन चर्च कि स्थापना कहाँ और किसने की थी?

प्र०4– मार्टिन लूथर द्वारा लिखित तीन प्रमुख पुस्तकों का नाम लिखे?

5.12 अध्ययन सामग्री

जे० ई० स्वेन –– ए हिस्ट्री ऑफ़ दि वर्ल्ड सिविलाईजेसन

एच० एल० फिशर – हिस्ट्री ऑफ़ यूरोप खंड ८

एल० बि० वर्मा – यूरोप का इतिहास

पार्थसारथि गुप्ता – आधुनिक पश्चिम का उदय

अरविन्द सिन्हा – संक्रांतिकालीन यूरोप

5.13 शब्दावली

जेसुइट संघ– प्रति धर्म सुधार आन्दोलन में इग्नेशियस लोयोला के अनुयायियों द्वारा स्थापित संघ को जेसुइट संघ कहते हैं।

इन्डलजेंस – पाप मोचन पत्र या क्षमा–पत्र जो पोप के आदेश पर यूरोप के विभिन्न शहरों में बेचे जा रहे थे।

बप्तिस्मा – ईसाई धर्म में जन्म संस्कार या ईसाई धर्म में परिवर्तन के समय कराया संस्कार।

युखारिस्त – ईसा मसीह के अंतिम प्रभु–भोज की याद में किया जाने वाला संस्कार। इस सम्बन्ध में लूथर का मानना था कि स्वयं ईसा इस भोज में उपस्थित होते हैं, जबकि केल्विन इसे प्रतीक मात्र मानते थे।

5.14 निबंधात्मक प्रश्न

प्र०1– धर्मसुधार के सम्बन्ध में लूथर ज्विंगली और कैल्विन के विचारों का विशलेषण करें?

प्र०2– धर्मसुधार आन्दोलन तथा पूंजीवाद के सम्बन्ध में मैक्स वेबर के विचारों का आलोचनात्मक परीक्षण करें?

5.15 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

उ०1– कैल्विन्वाद के समर्थक प्रेस्बिटेरियंस कहलाते थे, क्योंकि उसने प्रौढ़ लोगों (प्रेस्बीटायर्स) को अधिक महत्व दिया था।

उ०2– क्षमा पत्रों को इन्डल्जेंस कहा जाता था।

उ०3– हेनरी अष्टम ने इंग्लैण्ड में एंग्लिकन चर्च की स्थापना की।

उ०4–

1. जर्मन सामंत वर्ग को संबोधन (An Address to the Nobility of the German Nation)
2. ईश्वर के चर्च कि कैद (On the Babylonian captivity of the church of God)
3. ईसाई मनुष्य की मुक्ति (On the freedom of Christian man)

इकाई छह – वैज्ञानिक क्रांति

6.1 प्रस्तावना

6.2 उदेश्य

6.3 वैज्ञानिक क्रांति की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

6.3.1 पुनर्जागरण से पहले का काल

6.3.2 पुनर्जागरण का काल

6.4 वैज्ञानिक क्रांति का आधुनिक विज्ञान

6.4.1 कॉपरनिकस

6.4.2 डॉ पारसेल्स्स

6.4.3 जियोदार्नो ब्रूनो

6.4.4 टाइको ब्राहे

6.4.5 फ़रन्कोइस वियेटा, साइमन स्टेविन, जॉन नेपियर

6.4.6 केप्लर

6.4.7 गैलीलियो गैलीली

6.4.8 विलियम गिलबर्ट

6.4.9 विलियम हार्वे

6.4.10 फ्रांसिस बेकन

6.4.11 रेने देकार्त

6.4.12 रोबर्ट बॉयल

6.4.13 एंटोनी वॉन ल्यूवेन्हॉक

6.4.14 रोबर्ट हुक

6.4.15 आइजक न्यूटन

6.5 वैज्ञानिक क्रांति और महिलायें

6.6 वैज्ञानिक क्रांति दृ अनेक विचारधारायें

6.7 वैज्ञानिक क्रांति के कुछ दूरगामी परिणाम

6.8 सारांश

6.9 तकनीकी शब्दावली

6.10 स्वमूल्यांकित प्रश्नों के उत्तर

6.11 संदर्भ ग्रन्थ सूची

6.12 सहायक / उपयोगी पाठ्य सामग्री

6.13 निबंधात्मक प्रश्न

6.1 प्रस्तावना

वैज्ञानिक क्रांति से तात्पर्य है यूरोपी इतिहास की वह समयावधि जिसमें आधुनिक विज्ञान की क्रियाविधि, वैचारिक और संस्थागत नींव रखी गयी। यह प्रगति थी भौतिकी, खगोलशास्त्र, जीवविज्ञान, रसायन विज्ञान, मानव रचना व विज्ञान के कई अन्य क्षेत्रों में। इसके लिए एक विशेष रूप से समय सुनिश्चित कर पाना कठिन होगा। यह माना जाता है कि वैज्ञानिक क्रांति का आरंभ 15वीं शताब्दी के अंतिम चरण में हुआ और 17वीं शताब्दी तक इसने लोगों का चीजों को देखने और समझने का नजरिया बदला। इसका विकास यूरोप के पुनर्जागरण (Renaissance) और धर्म–सुधारक आन्दोलन (Reformation) से प्रभावित था जिसने मुख्य रूप से वैज्ञानिक नजरिया व धर्मनिरपेक्ष होने पर बल दिया। यह परिवर्तन का दौर था जिसमे आधुनिकता ने परम्परागत तरिकों का स्थान ले लिया था व चिंतन और समीक्षात्मक मूल्यांकन ने विज्ञान को बढ़ावा दिया गया।

वैज्ञानिक क्रांति को पूरी तरह से समझने के लिए, तथा समाज में उसका प्रभाव मूल्यांकन करने के लिये यह जानना अनिवार्य होगा कि मध्ययुगीन विश्व का नजरिया तीसरी सदी के यूनानी दार्शनिक अरस्तू, दूसरी सदी के मिस्र के दार्शनिक, टॉलेमी एवं कई अन्य धर्मशास्त्रियों पर निर्भर था। मध्य युग में जब पश्चिमी यूरोप पूर्व के साथ व्यापार करने लगा तब इन दार्शनिको के विचारो से परिचित हुआ। सेंट थामस एक्विनास जो की एक मध्ययुगीन धर्मशास्त्री, उन्होंने ईसाई सिद्धांतों के साथ इन लेखों को लीन कर दिया। पुनर्जागरण के दौरान 1300 से 1500 शताब्दी के शुरुआती दौर तक विज्ञान को धर्म की एक शाखा माना जाता था, जिसके अनुसार पृथ्वी ब्रह्मांड के केंद्र में एक स्थिर वस्तु थी। यह सिर्फ कॉपरनिकस के सैद्धांतिक खोज के बाद माना जाने लगा कि पृथ्वी सूर्य के चारों ओर घूमती है। यह यूरोपीय अरस्तू–मध्ययुगीन वैज्ञानिक सोच को अस्वीकार करने की शुरुआत थी। कोपरनिकस, गैलीलियो और न्यूटन ने प्राकृतिक कानूनों के आधार पर ब्रह्मांड की एक नई अवधारणा विकसित की।

6.2 उदेश्य

- वैज्ञानिक क्रांति की पृष्ठभूमि की जानकारी देना।
- आधुनिक विज्ञान के संस्थापकों व उनके योगदान का उल्लेख करना ।
- वैज्ञानिक क्रांति के प्रभाव को समझना।

6.3 वैज्ञानिक क्रांति की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

वैज्ञानिक क्रांति को आसानी से समझने के लिए उसे दो भागों में बाँट लिया गया है| पहले भाग में हम पुनर्जागरण से पहले के काल में विज्ञान को जानेगें और दूसरे भाग में पुनर्जागरण काल की परिस्थितियों में आधुनिक विज्ञान का उदय समझेंगे|

6.3.1 पुनर्जागरण से पहले का काल

आधुनिक विज्ञान और प्राचीन यूनानी दर्शन के मध्य एक महत्वपूर्ण सम्बन्ध है| पूर्व यूनानी दर्शन के नियमों के विरुद्ध प्रतिक्रिया के रूप में हीं आधुनिक विज्ञान का जन्म हुआ और इसी प्राचीन दर्शन ने आगे होने वाली वैज्ञानिक खोजों को एक आधार प्रदान किया|

बारहवीं शताब्दी में पाइथागोरस का गणित,प्लेटो और अरस्तु का दर्शन, युक्लिड की ज्यामिति, आर्किमिडिज के अनेक सिधांत, टॉलमी के खगोलीय ज्ञान, गेलैन का चिकित्साशास्त्र, आदि की फिर से खोज हुई और अनेक शताब्दियों के पुनर्वेशन की प्रक्रियाओं के बाद मान्यता प्राप्त हुई| पूरे मध्यकाल में यूरोप के ईसाई गिरजाघर एवं विद्वान, रोमन और यूनानी विद्वानों की रचनाओं से परिचित थे परन्तु उनको प्रचारित नहीं किया गया| चौदहवीं शताब्दी में प्लेटो और अरस्तु के दर्शनशास्त्र को पढ़ना शुरु किया गया और पंद्रहवी शताब्दी तक इनके विचारों को अपना लिया गया| इन कृतियों के अनुवाद के लिए श्रेय जाता है उन अरबी भाषा के अनुवादकों को जिन्होंने इन पांडुलिपियों का संरक्षण किया और अनुवाद कर प्रसार के काबिल बनाया| ईसाई धर्म ने भी इन विचारों को स्वीकारा और अपने साथ जोड़ा| अरस्तू प्रणाली ने भौतिक विज्ञान के कई नीयम दिए| उन्होंने यह दावा किया है कि एक वस्तु के गिरने की दर उसके अपने वजन पर निर्धारित करता है, यूनानी खगोलशास्त्री टॉलेमी के अनुसार पृथ्वी ब्रह्माण्ड के केंद्र में स्थिर स्थान पर हैं, चिकित्सकों ने माना जाता कि मानव शरीर में चार अलग–अलग प्रकार के तरल पदार्थ शीनउवतेश हैं और उनके असंतुलन की वजह से बीमारी होती है| इन सब बातों को सत्य मानकर चर्च की शिक्षाओं और युग की शैक्षणिक संस्थाओं ने निर्विवादित रूप से अपनाया| हालांकि, जल्द ही इन विश्व सम्बन्धी पारंपरिक और धार्मिक सिधांन्तों का विरोध होने लगा|

6.3.2 पुनर्जागरण का काल

1300 और 1400 के दशक में इटली ने यूरोपीय व्यापार और विनिर्माण पर जोर दिया। इन व्यापारी जहाजों के साथ आये चूहे जिन्होंने महावारी फैला दी जिसको काली मृत्यु के रूप में जाना जाता है| काली मृत्यु (Black death, a kind of plague in 1347–1350) व इंग्लैंड और फ्रांस के युद्धों (1337–1453) के परिणामस्वरूप जनसंख्या में भारी गिरावट आयी| किसानों और मजदूरों की कमी के कारण उनके श्रम के लिए पहले से बेहतर भुगतान हुआ और सर्फ़डम (serfdom) की कुप्रथा का भी अंत हुआ| आर्थिक तनाव के चलते व्यापार के द्वार भी बंद हो गए| हालांकि जल्द ही स्थियाँ बदली और जैसे ही जनसंख्या बढ़ी, भोजन की मांग भी बढ़ गयी। इन घटनाओं ने वस्तुओं मूल्य में वृद्धि कर पूरे यूरोप में मुद्रास्फ़ीति की स्थिति पैदा कर दी। बढ़ती कीमतें, माल और सेवाओं की अधिक मात्रा में आवशयकता ने व्यापारियों को अपने व्यवसायों का विस्तार करने के लिए प्रोत्साहित किया।

आर्थिक व्यवस्था जल्द ही अपनी जगह पर वापिस आ गयी जिसके फलस्वरूप राष्ट्रीय व अंतर्राष्ट्रीय व्यापार, खनन, बैंकिंग उद्योग, व्यापार मार्गों के विस्तार और नई विनिर्माण प्रणालियों के कारण वाणिज्यिक गतिविधि प्रगति पथ पर आ गयी। 1500 के प्रारंभिक दशक में दक्षिणी जर्मनी में

खनन एक महत्वपूर्ण आर्थिक गतिविधि के रूप में सामने आया अथवा समुद्री खोज ने 1500 के दशक में स्पेनिश और पुर्तगाली व्यापार को शीघ्रता से बढ़ावा दिया।

इस समय कला के क्षेत्र में बहुत विकास हुआ और यथार्थवाद (realism) पर बल दिया गया। मूर्तिकारों की मूल आकृति जैसा चित्र बनाने की इच्छा को वैज्ञनिकों के अध्यन से सहायता प्राप्त हुई तथा नर– कंकालों व शरीर–क्रिया विज्ञान का शोध कर उन्हें सटीक आकृति की प्राप्ति हुई। चित्रकारों ने भी मूर्तिकारों की तरह यथार्त चित्र बनाने की कोशिश की । रेखागणित (geometry) के ज्ञान से चित्रकार परिदृश्य को समझ पाए और प्रकाश के बदलते गुणों का अध्ययन कर त्रि–आयामी (three–dimensional) चित्र बना पायें।

जोहानेस गूटेनबर्ग (1400–1458) ने पहले छापेखाने (Printing Press) का निर्माण किया और पहली बार में बाइबिल की 150 प्रतियाँ छापी गयी। इस छापेखाने के फलस्वरूप ज्ञान के प्रचार एवं प्रसार में तेज़ी आयी और लोगों ने पुस्तकों को पढ़कर अनेक विचार, मत एवं जानकारी एकत्रित की।

पंद्रहवी शताब्दी के अंत में यूरोप के कई विद्वान एवं ईसाई मानवतावादी विचारों से प्रभावित हुए। उन्होंने एक सरल धर्म की बात की एवं अनावश्यक कर्मकांडों की आलोचना की। ईसाई मानवतावादी, जैसे की थॉमस मोर (1478–1536) और इरेस्मस (1466–1536) का विचार था की गिरिजाघर एक लालची और धन लूटने वाली संस्था थी जो की लोगों को पाप के नाम पर डराती थीं। लोगों को 'पाप–स्वीकारोक्ति' (indulgences) नामक दस्तावेज़, जिससे पापों का निवारण हो सके के माध्यम से धर्माधिकारियों ने खूब लूटा। यूरोप के किसान चर्च के लगाये करों से दुखी थे व राजा हर बार के हस्तक्षेप से। मानवतावादियों ने यह भी साबित किया 'Constantine Will' नामक दस्तावेज़, जिससे पादरी अपनी न्यायिक और वित्तीय शक्ति का दावा करते है वह परिवर्ती काल में नकली बनाया गया था।

मार्टिन लुथेर (1483–1546) ने 1517 में कैथोलिक चर्च के विरुद्ध धर्मसुधारक अभियान (Reformation या जिसे प्रोटेस्टेंट सुधारवाद भी कहा जाता है) शुरू कर दिया और रोमन कैथोलिक चर्च की शिक्षाओं और प्रथाओं को अस्वीकारा। उन्होंने दृढ़ता से पाप–स्वीकारोक्ति' (indulgences) नामक दस्तावेज़ पर अपनी आपत्ति जताई क्योंकि वह मानते थे की पापों से और भगवान की सजा से मुक्ति रूपये–पैसे से नहीं खरीदी जा सकती। उन्होंने अपने इन विचारों को अपने शोध 'नाइंटी–फाइव थीसिस' (Ninety–Five Thesis) में प्रकाशित किया। लूथर के अनुसार मोक्ष और अनन्त जीवन की प्राप्ति अच्छे कर्मों के द्वारा अर्जित नहीं की जाती, बल्कि ईश्वर की आराधना और विश्वास कर यीशु मसीह से उपहार स्वरूप प्राप्त होती है। उन्होंने पोप के अधिकार एवं कार्यालय को चुनौती दी और सिर्फ बाइबिल को ही परमेश्वर की दैवीय शक्ति का एकमात्र स्रोत माना। इस कारण उन्होंने बाइबल का लैटिन के बजाय स्थानीय भाषा में अनुवाद कर आम लोगों को भी बाइबिल की शिक्षाओं से अवगत कराया।

धर्मसुधार के प्रति चर्च की विरोधी प्रतिक्रिया प्रति–धर्मसुधार(Counter–Reformation) रोमन कैथोलिक चर्च में आंतरिक और बाह्य संगठन में बदलाव लाने की कोशिश थी जिसका प्रमुख उद्देश्य था धर्म से अलग हुए लोगों को चर्च में दोबारा आस्था दिलाना। हालांकि ट्रेंट परिषद् (Council of Trent), धर्म विद्रोह के लिये धर्म समीक्षण (Inquisition) एवं कैथोलिक ईसाई दल (Society of Jesus)

का कैथोलिक शिक्षाओं पर दबाव व चर्च के पुराने सिद्धांतों की सुरक्षा से लोगों का कैथोलिक चर्च पर से विश्वास और भी हट गया| इन सामाजिक, आर्थिक व धार्मिक माहौल में अरिस्टोटेलियन प्रणाली की पकड़ तोड़ते हुए वैज्ञानिक क्रांति का उदय हुआ और सोलहवीं और सत्तरहवीं शताब्दी के दौरान हुए शोध ने आधुनिक विज्ञान को नींव प्रदान की|

स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न:

1. वैज्ञानिक क्रांति का एतिहासिक पृष्ठभूमि पर टिपण्णी कीजिये|
2. प्राचीन यूनानी ज्ञान ने धर्म को किस प्रकार प्रभावित किया?

6.4 वैज्ञानिक क्रांति का आधुनिक विज्ञान

इस खंड में हम वैज्ञानिक क्रांति के दौरान विज्ञान के अनेक क्षेत्रों में हुए विकास एवं कुछ महत्वपूर्ण संस्थापकों के योगदान को पढ़ेंगे|

6.4.1 कॉपरनिकस

ईसाई धारणा के अनुसार मनुष्य को एक पापी के रूप में देखा जाता था, हालांकि वैज्ञानिकों ने इस पर हमेशा आपत्ती जतायी| यूरोपीय विज्ञान के क्षेत्र में कॉपरनिकस (जो की मार्टिन लूथरके समकालीन थे) ने एक नया मोड़ दिया| ईसाई धर्म में यह समझा जाता था की पृथ्वी पापियों की जगह है और पाप के भारी बोझ के कारण वह स्थिर है। पृथ्वी ब्रह्मांड के केंद्र में स्थिर है व जिसके चारों ओर ग्रह घूमते हैं |

कॉपरनिकस की खोज के गहरे वैज्ञानिक और धार्मिक परिणाम हुए| अरस्तू और टॉलेमी के विचार, निकोलस कॉपरनिकस (1473–1543) के नए सिधान्तों द्वारा बिखर गए थे| वह एक पक्के ईसाई थे और समझते थे की उनके नए सिद्धांत से परंपरावादी ईसाई धर्माधिकारियों की आलोचनात्मक प्रतिक्रिया उत्पन होंगी जिस कारण से उन्होंने अपनी पांडुलिपि को अपनी मृत्यु के बाद समाज के सामने लाने का फैसला किया। अपनी पुस्तक On the Revolutions of the Heavenly Spheres (1543 में जो कि उनकी मृत्यु के बाद प्रकाशित हुई) कॉपरनिकस ने एक क्रांतिकारी सुझाव दिया कि सूर्य ब्रह्मांड का केंद्र था और पृथ्वी, अन्य ग्रहों की भांति परिपत्र कक्षाओं में घूमती है ।इस सूर्य केंद्रीय सिद्धांत ने जिसमे ब्रह्मांड का केंद्र सूर्य था न की पृथ्वी, ने समकालीन वैज्ञानिक सोच का खण्डन किया और सैकड़ों वर्ष के पारंपरिक शिक्षाओं को चुनौती दी। अब यह बात स्पष्ठ थी कि पृथ्वी एक अन्य ग्रह के ही भांति थी|

6.4.2 डॉ पारसेल्स्स

पारसेल्स्स(1493–1547) स्विस–जर्मन मूल के दार्शनिक, चिकित्सक, ज्योतिष और कई अन्य प्रतिभाओं से लैस क्यक्ति थे| पेरासेलसस ने चिकित्सा के क्षेत्र में रासायनिक औषधियों के अध्यन पर बल दिया| उनके अनुसार शरीर में रोग बहार से आते हैं और हर रोग का उपचार अलग तरह से होता है| प्राचीन मान्यता थी की रोग चार तरल पदार्थ (humors) :रक्त, कफ, काले रंग और पीले रंग के पित्त (Blood, Phelgm, Black Bile and Yellow Bile) के असंतुलन से होते हैं| परन्तु पेरासेलसस ने इस बात का खंडन किया और बताया की बीमारियाँ सल्फर, पारा, और नमक के जहर से होती हैं| आधुनिक मनोविज्ञान उन्हें इस बात का श्रेय देता है की कुछ बीमारियों मनोवैज्ञानिक परिस्थितियों से उत्पन्न होती हैं| उन्हें विष विज्ञान का संस्थापक भी माना जाता है|

उनके कार्य में कीमियागिरी, जादू–टोना तथा रहस्य का प्रभाव दिखता है, जिससे हम यह सकते हैं की पुनर्जागरण के समय में समाज एकदम विवेकशील नहीं हो गया था और अभी भी लोग विज्ञान को धर्म और जादू से जोड़ते थे।

6.4.3 जियोदार्नो ब्रूनो

जिओरडनो ब्रूनो (1548–1600) एक इतालवी डोमिनिकन तपस्वी, दार्शनिक, गणितज्ञ, कवि, और ब्रह्माण्ड संबंधी विचारक था। उन्होंने कोपर्निकस मॉडल को बढ़ावा दिया और उस पर निर्भर करके ब्रह्माण्ड संबंधी सिद्धांत दीये है। उन्होंने ब्रह्मांडीय बहुलवाद (cosmic pluralism) के प्रस्ताव को आगे बढ़ाया जिसके अनुसार पृथ्वी के अलावा अनेक दुनिया हैं जिनमें जीवन की सम्भावना है। उन्होंने इस बात पर भी जोर दिया की ब्रह्मांड अनंत है और यह भी संभव है की उसके श्केंद्रश में कोई आकाशीय पिंड (celestial body) न हो।

ब्रूनो के ब्रह्माण्ड विज्ञान के अनुसार कुछ ऐसे सूर्य हैं जो अपने आप से प्रकाश और गर्मी का उत्पादन करते हैं और कुछ ऐसी "पृथ्वी" हैं जो सूर्य से प्रकाश और ऊष्मा प्राप्त करती हैं। ब्रूनो के अनुसार आकाश में स्तिथ कई प्रतिष्ठित सितारों असल में सूर्य हैं।

1593 की शुरुआत में ब्रूनो को रोमन कैथोलिक न्यायिक जांच ने धर्म के विरुद्ध पाया और न्यायिक जांच में दोषी पाकर उन्हें 1600 में रोम के कैंपो डे फिओरी में जला दिया गया। उनकी मृत्यु के बाद उन्हें काफी प्रसिद्धि प्राप्त हुई और 19वीं और 20वीं सदी के टिप्पणीकारों ने उन्हें विज्ञान के लिए एक शहीद के रूप में माना।

6.4.4 टाइको ब्राहे

कॉपरनिकस के विचारों से प्रभावित होकर एक डेनिश खगोल विज्ञानी, टाइको ब्राहे (1546–1601), ने एक वेधशाला का निर्माण किया और तारों और ग्रहों की स्थिति पर बीस साल का डाटा इकट्ठा करके आधुनिक खगोल विज्ञान के अध्ययन के लिए मंच तैयार है।

उन्होंने यह तो सही समझा की चंद्रमा पृथ्वी की परिक्रमा लेती है और ग्रह सूर्य की परिक्रमा करतें है, परन्तु उनसे चूक तब हुई जब उन्होंने यह माना कि सूर्य कर भी पृथ्वी की परिक्रमा करता है। टाइको ने चंद्रमा की देशांतर के बदलाव की खोज कर कर चन्द्र सिधांत में विशिष्ट योगदान किया।

अपने कार्य डी नोवा स्टेला (On the New Star) De Nova Stella 1573 में उन्होंने एक अरस्तू की अपरिवर्तनीय आकाशीय दायरे की धारणा का खंडन किया। 11 नवंबर 1572, टाइको ने एक बहुत ही उज्ज्वल सितारा को नक्षत्र कैसियोपेइया में देखा। उन्होंने इस पुचल तारे का परिक्षण करते हुए इस नक्षत्र का लंबन जाना और यह प्रमाणित करने में सफल हुए की यह नक्षत्र चंद्रमा से भी भुत दूर है। क्योंकि यह प्राचीन काल से मान्यता थी कि चंद्रमा की कक्षा से परे दुनिया सदा अपरिवर्तनीय रहती है इसलिए इस नजारे को सबने चंद्रमा के नीचे स्थलीय क्षेत्र का माना था । ब्राहे के अनुसार इस पुचल तारे का मार्ग गोल की बजाय लम्बा भी हो सकता है।

6.4.5 फ़रन्कोइस वियेटा, साइमन स्टेविन, जॉन नेपियर

फ़रन्कोइस वियेटा(1540–1603) ने बीजगणित (Algebra) व त्रिकोणमिति (Trigonometry) का योगदान दिया। साइमन स्टेविन(1548–1620) ने 1585 में दशमलव (Decimal) का प्रयोग किया और जॉन नेपियर (1550–1617) ने लघुगणक (Logarithm) की खोज कर कठिन समस्याओं को सुलझाने का आसान तरीका प्रदान किया।

6.4.6 केप्लर

केप्लर (1571–1630), एक जर्मन खगोलशास्त्री व गणितग्य थे एवं ब्राहे के सहायक होने के कारण वे उनके कार्यों से भी परिचित थे| उनकी खोज़े विश्व के गुप्त रहस्यों से पर्दा उठाने की ओर निर्देषित थी| उन्होंने ब्राहे के डेटा और कॉपरनिकस के विचारो का समर्थन किया व उनको अपने प्रयोगों में इस्तेमाल किया। केपलर की पहली बड़ी खगोलीय खोज, Mysterium Cosmographian (1596) के रूप में प्रकशित हुई जिसमे उन्होंने जम के कोपर्निकस प्रणाली का समर्थन किया | केपलर ने ग्रहों की दीर्घवृत्ताकार कक्षा की परिकल्पना की, ग्रहों की गति के गणितीय संबंधों पर आधारित नीयम दिए तथा सही ढंग से एक सूर्य केन्द्रित ब्रह्मांड में ग्रहों की परिक्रमा की भविष्यवाणी की। इसका प्रभाव यह हुआ कि कॉपरनिकस द्वारा प्रस्तावित सिद्धान्तों को मान्यता प्राप्त हुई अथवा प्लेटो एवं पाइथागोरस के नक्षत्रों की वर्तुल गति सम्बन्धी धारणाओं को नष्ट किया जा सका|

6.4.7 गैलीलियो गैलीली

गैलीलियो गैलीली (1564–1642) एक इतालवी बहुश्रुत थे जिन्होंने विज्ञान के पारंपरिक विचारों की कटु निंदा करी और परिकल्पना के बजाय अवलोकन का उपयोग किया| गैलीलियो गैलीली ष्आधुनिक अवलोकन खगोल विज्ञान के जनक, आधुनिक भौतिकी के जनक, विज्ञान के जनक, और आधुनिक विज्ञान के भी जनक माने जाते है। गैलीलियो पहले आधुनिक विचारकों में से एक हैं जिन्होंने स्पष्ट रूप से प्रकृति के नियमों को गणितीय से जोड़ा हैं| उनके अनुसार ब्रह्मांड को भी गणित की भाषा में लिखा गया था जिसके अक्षर त्रिकोण, हलकों, और अन्य ज्यामितीय आंकड़े हैं|

उनकी खोज ने पहले की यह धारणा कि ग्रह क्रिस्टल की गेंदों की तरह है को नष्ट कर दिया और पारंपरिक पृथ्वी और चंद्रमा के बीच के सम्बंधित विचारों को चुनौती दी| उन्होंने दूरबीन के नए आविष्कार का उपयोग करके खगोल विज्ञान में प्रयोगात्मक विधियों को लागू किया। इस यंत्र का उपयोग करके यह ज्ञात हुआ कि बृहस्पति की परिक्रमा 3 चंद्र अथवा नक्षत्र करते हैं, चंद्रमा गोलाकार नहीं था बल्कि पृथ्वी की ही तरह उसकी सतह एक पहाड़ी थी जिसमे थोडा पानी भी था|

गैलिलियो की नई खोजो ने कॉपरनिकस के सिद्धांतों को प्रबल बनाया एवं पुष्टि प्रदान की। अपनी पुस्तक Dialogue Concerning the Two Chief World Systems (1632) के प्रकाशन के बाद, जिसमें उन्होंने अरस्तू और टॉलेमी के काम की आलोचना की, गैलीलियो को गिरफ्तार कर लिया गया, जेल में डाला गया, मतों के विरुद्ध जाने की कोशिश के लिए उनपे पोप न्यायिक जांच बिठाई गयी और सार्वजनिक रूप से अपने विचार को वापिस लेने के लिए मजबूर करा गया| उनको कारावास में डाला गया और बाद में गृहबंदी कर दिया गया जहाँ उन्होंने टू न्यू साइंसेज (Two New Sciences) नामक किताब लिखी जिसमें उन्होंने विज्ञान की दो शाखांए शुद्धगति विज्ञान (Kinematics) और सामग्री की ताकत (Strength of Material) के बारे में जानकारी दी|

6.4.8 विलियम गिलबर्ट

विलियम गिलबर्ट प्रयोगात्मक विधि का एक प्रारंभिक समर्थक थे। उन्होंने प्रचलित अरस्तू के दर्शन और विश्वविद्यालय शिक्षण के शैक्षिक विधि की आलोचना की। उनकी पुस्तक डी मैगनेट (De Magnete) 1600 में लिखी गयी जिसमें अपने मॉडल पृथ्वी जिसको उन्होंने terrella कहा, और इसमें अनेक प्रयोगों का वर्णन किया| इन प्रयोगों से उन्होंने निष्कर्ष निकाला कि पृथ्वी चुंबकीय है और इस चुम्बकीय बल के कारण नक्षत्र अपने मार्गों में स्थिर रहते हैं| संतुलित सुई के माध्यम से की वह हमेशा

उत्तर दिशा की तरफ प्वाइंट करती है उन्होंने यह निष्कर्ष निकाला| हालांकि हार्टमेन और राबर्ट नॉर्मन ने संतुलित सुई की जानकारी और प्रयोग पहले किये हुए थे|

6.4.9 विलियम हार्वे

विलियम हार्वे (1578–1657) एक अंग्रेज़ी चिकित्सक थे जिन्होंने शरीर में रुधिर के परिसंचारण की तर्कपूर्ण जानकारी दी| हार्वे ने हज़ारों वर्षों तक अपनाए गेलैन के सिद्धांत की आलोचना की| गेलैन ने दूसरी शताब्दी में यह सिधांत दिया था की शिरापरक रक्त जिगर में उत्पन्न होता था और वहाँ से पूरे शरीर में वितरित होता था और धमनियों का रक्त हृदय में उत्पन्न होता था और वहाँ से उसका संचारण पूरे शरीर में होते था| और पूरा चक्र करके रुधिर जिगर या हृदय में पुनर्जीवित होता है |

हार्वे ने 1628 में अपने शोध De Motu Cordis में शरीर रचना–शास्त्र एवं शरीर क्रिया–शास्त्र का ज्ञान देकर चिकित्सा के क्षेत्र में नये युग का आरंभ किया| उनके अनुसार हृदय एक पम्प समान था और हृदय से रक्त धमनियों में पहुँचता है और शिराओं के द्वारा वापस हृदय में जाता है| अतरू इस प्रकार से रक्त का परिसंचरण पूरे शरीर में होते रहता है| हालांकि वह इसका कारण नहीं समझ पाए क्योंकि धमनी और शिरा आपस में किस तरह से कोशिकाओं द्वारा जुड़े हैं यह स्पष्ट नहीं हो पाया था| हार्वे की इस खोज के चिकित्सा जगत में तुरंत प्रभाव नहीं पढ़ा लेकिन यह निश्चित रूप से कह सकता हैं कि उनके शोध ने चिकित्सा क्षेत्र को दिशा प्रदान की|

6.4.10 फ्रांसिस बेकन

फ्रांसिस बेकन (1561–1626) एक अंग्रेज़ी राजनीतिज्ञ और लेखक थे जिनके अनुसार नए ज्ञान को एक प्रेरक, प्रयोगात्मक एवं तर्क की प्रक्रिया के माध्यम से प्राप्त किया जा सकता है| अपने प्रकाशन नोवम आग्रेनम (Novum Organum) में बेकन ने मध्ययुगीन परंपरा पर आधारित ज्ञान को खारिज कर दिया व प्रयोग एवं परेक्षण पर जोर दिया| उनका विचार था की डेटा एकत्र करके व निरीक्षण करके जो निष्कर्ष प्राप्त होता है वही वैज्ञानिक पद्धति का आधार बनता है | हालांकि उनका वैज्ञानिक या दार्शनिक क्षेत्र में कोई ख़ास योगदान नहीं है, परन्तु वह एक प्रमुख व्यक्ति के रूप में इसलिए जाने जाते है क्योंकि उन्होंने वैज्ञनिक अन्वेषण पर बल दिया|

6.4.11 रेने देकार्त

रेने देकार्त (1596–1650) एक फ्रांसीसी गणितज्ञ और दार्शनिक थे। बेकन की ही तरह वह पारंपरिक विज्ञान के विरुद्ध थे| दर्शनशास्त्र के क्षेत्र में देकार्त को पहले आधुनिक चिन्तक के रूप में देखा जाता है| उनको विश्लेषक ज्यामिति के आविष्कार का श्रेय दिया जाता है|

उन्होंने अपने कार्य डिस्कोर्स ऑन मैथोड (Discourse on the Method) (1637) में लैटिन भाषा (जो की मध्य युग की बौद्धिक भाषा मानी जाती थी) का प्रयोग न करके फ्रेंच में लिखा और इस प्रकार अतीत के साथ नाता तोड़ दिया| देकार्त ने निगमनात्मक तर्क पर बल दिया।

हर वस्तु पर शंका की दृष्टि रखते हुए उन्होंने अपने प्रसिद्ध वाक्य में कहा "cognito ergo sum" (I think therefore I am) जिसका अर्थ है की "मैं सोचता हूँ, इसलिए मैं हूँ| इस तरह उन्होंने अपने अस्तित्व पर भरोसा रखने के तरफ प्रेरित करता है| उनके अनुसार मनुष्य अपने से भी अधिक पूर्ण अस्तित्व की परिकल्पना कर सकता है| अपने अधूरे कार्य द डिस्क्रिप्शन ऑफ़ द ह्यूमन बॉडी (The

Description of the Human Body) में उन्होंने विश्व और मानव शरीर दोनों को एक यंत्र के भांति क्रिया करते हुए बताया है ।

6.4.12 रोबर्ट बॉयल

रोबर्ट बॉयल (1627–1691) आधुनिक रसायनशास्त्र के समर्थक थे। वे लंदन की की रॉयल सोसाइटी के एक संस्थापक थे। उनको गैसीय नियमों, द्रव्य के कर्णवाद, वायु पम्प पर प्रयोग, पदार्थों पर ऊष्मा का प्रभाव को प्रदान करने का श्रेय जाता है । बॉयल के नियम (1662) के अनुसार स्थिर तापमान और बंद व्यवस्था में एक गैस के निरपेक्ष दबाव और मात्रा के बीच विपरीत आनुपातिक रिश्ता होता है। हालांकि उनको इस नीयम की खोज का श्रेय नही जाता परन्तु फिर भी इसे बॉयल नीयम के रूप में जाना जाता है। उन्होंने रासयांकारों से नए प्रोयोगों को करने का अनुरोध किया और रासायनिक तत्वों को केवल चार क्लासिक तत्व : पृथ्वी, अग्नि, वायु, और पानी तक सिमित करने के लिए मना किया । बॉयल ने अरस्तु और क़ीमियाईगरों के बताये गये तत्वों का खंडन किया और तत्वो प्रथम वैज्ञानिक परिभाषा दी।

6.4.13 एंटोनी वॉन ल्यूवेन्हॉक

एंटोनी वॉन ल्यूवेन्हॉक (1632–1723) एक डच व्यापारी और वैज्ञानिक थे जिन्होंने माइक्रोस्कोपी के क्षेत्र में शक्तिशाली सूक्ष्मदर्शी एकल लेंस का निर्माण किया। वे पहले थे जिन्होंने पेशी तंतुओं, बैक्टीरिया, शुक्राणु, और केशिकाओं में रक्त के प्रवाह का सूक्ष्म रूप से निरीक्षण किया। उनकी व्यापक टिप्पणियों 1660 के आसपास रॉयल सोसाइटी के साथ पत्राचार के माध्यम से प्रकाशित हुई जिससे जीव विज्ञान की सूक्ष्म दुनिया को समझने के द्वार खुल गये।

6.4.14 रोबर्ट हुक

रोबर्ट हुक (1635–1703) एक अंग्रेजी प्राकृतिक दार्शनिक थे। वह रॉयल सोसाइटी एक सदस्य थे। हुक ने भौतिकी का नीयम दिया जिसके अनुसार एक लोचदार सीमा के भीतर, ठोस वस्तु में खिचांव बल का समानुपाती है। इस नीयम को हुक लोच का नीयम (Hooke's Law of Elasticity) कहा जाता है। उन्होंने संतुलन–चक्र का अविष्कार किया जिसके आधार पर उचित सटीकता के साथ समय बताने वाली घड़ी व क्रोनोमीटर का निर्माण हो सका।

उन्होंने अपवर्तन की घटना की जांच की और प्रकाश की तरंगों को भी समझा। उन्होंने शुरवाती ग्रेगोरियन दूरबीन का निर्माण किया और मंगल और बृहस्पति का नियमित आवर्तन देखा। अपनी पुस्तक मिक्रोग्राफिया (Micrographia) में उन्होंने वैज्ञानिक अन्वेषण के लिए माइक्रोस्कोप का प्रयोग किया। इस माइक्रोस्कोप से उन्होंने कोशिकाओं और जीवाश्म को सूक्ष्म रूप से जाना और आने विचार प्रस्तुत किये जिस कारण हुक को जैविक विकास का अधिवक्ता माना जाता है।

6.4.15 आइजक न्यूटन

वैज्ञानिक क्रांति में आइजक न्यूटन (1642–1727) का बहुत बड़ा योगदान है। अपनी पुस्तक प्रिन्सिपिया मतेमातिका (Principia Mathematica) (1687) में उन्होंने कोपरनिकस, केपलर और गैलिलियो के विचारों को इकठ्ठा करके अत्यणु–कलन (infinitesimal calculus) की गणितीय नीयम की प्रणाली बनाई जिससे ग्रहओं के सूर्य के चारों ओर घूमने के व्यवस्थित तरीको को समझा जा सका। उनके शोध की प्रमुख विशेषता सार्वत्रिक गुरुत्वाकर्षण का नीयम (law of universal gravitation)

था। इस नीयम के अनुसार यह पता चला की ब्रह्मांड में हर वस्तु एक दूसरी वस्तु को सटीक गणितीय संबंधों में आकर्षित करती है। न्यूटन के गणितीय नीयम ने यह साबित कर दिया है कि सूर्य, चंद्रमा, पृथ्वी, ग्रह, आदि गुरुत्व के एक ही मूल बल के अनुसार चलते हैं| इस तरह से यह ज्ञात हुआ की ब्रह्मांड के नियमों का संचालन गणित के माध्यम से समझा जा सकता है और यह भी पता चला कि प्रकृति की शक्तियों को समझने के लिए धार्मिक व्याख्या एकमात्र साधन नहीं है |

स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न:

1. वैज्ञानिक क्रांति के दौरान खगोल विज्ञान के क्षेत्र में हुई प्रगति पर प्रकाश डालिए|
2. चिकित्सा जगत में हुए परिवर्तनों की व्याख्या कीजिये|

6.5 वैज्ञानिक क्रांति और महिलायें

वैज्ञानिक क्रांति में केवल पुरुषों ने ही नहीं, बल्कि कुछ महिलाओं का भी योगदान रहा जैसे लेडी रानेलाघ,क्रिस्टीना ऑफ़ स्वीडन, कारोलिंन ऑफ़ अन्स्पा, कैथरीन बार्टन, कैरलाइन हेर्स्चेल, ममे लेपौते, ऐडा काउंटेस ऑफ़ लोवेला, आदि| हालांकि यह समझना भी आवश्यक है की यह संख्या बहुत ही कम थी| सोलहवी और सतरहवी शताब्दियों में पुरुषों ने पारंपरिक धारणाओं को चुनौती दी और उनके खोकलेपन को साबित किया|उन्होंने ब्रह्माण का निरिक्षण किया, मानव शरीर की संरचना को समझा, टेलिस्कोप से चाँद देखा, पृथ्वी और अन्य ग्रहों की परिक्रमा को समझा, सूर्य और पृथ्वी के सम्बन्ध को समझा, आदि|

परन्तु बोनी एस. एंडरसन एवं जूडिथ पी. ज़िन्स्सेर के अनुसार महिलाओं के लिए कोई वैज्ञानिक क्रांति नहीं हुई| उनके विचार से जब पुरुषों ने स्त्रियों के शरीर की संरचना को पढ़ा, स्त्रियों के शरीर के क्रिया विज्ञान को समझा, महिलाओं के प्रजनन के अंगों और प्रसव में उनकी भूमिका को भी जाना तब उन्होंने किसी भी तरह के बदलाव के नजरिये से अपने हाथ पीछे खींच लिए|

महिलाओं के संधर्भ में पुरुष अब भी अपने निष्कर्ष परंपरा, रुड़ीवादी व कल्पना पर आधारित कर रहे थे न की वैज्ञानिक अवलोकन पे| जहाँ अरिस्तु और अन्य दार्शनिको के सिद्धांतों का खंडन हो चुका था, वहाँ महिला वर्ग के लिए वे अभी भी उतनी ही मान्यता रखते थे जितना की वह जब लिखे गए होंगे| पुरुषों ने नये विज्ञान के नाम पे पुरानी द्क्यानुसी मान्यताओं को सामने रखा जिसमें उन्होंने महिलाओं के शरीर को पारम्परिक तरीकों से महिलाओं की प्रकृति और भूमिका से जोड़ दिया| इस तरह तर्कपूर्ण तरीके से पुरुष अपने उदेश्य में सफल हुए और प्राचीन पारम्परिक निष्कर्षरू 'पुरुषों की सहज श्रेष्टता और महिला की न्यायोचित अधीनता' को बलपूर्वक सामने लाये|

हालांकि यह भी नकारा जा सकता की कुछ महिलाओं का वैज्ञानिक क्रांति में अमूल्य युगदान था और उन्होंने पुरुष वर्ग को उनके वैज्ञानिक प्रयोगों में अनेक प्रकार से साथ दिया|

6.6 वैज्ञानिक क्रांति – अनेक विचारधारायें

वैज्ञानिक क्रांति की एक सटीक अवधि तय कर पाना मुश्किल है और हर इतिहासकार का मत इस पर अलग है, लेकिन आम तौर पर इसका केंद्र सत्रहवीं सदी माना जाता है जो की सोलहवीं से शुरू हुई और अठारहवी में स्थापित हुई । इस वैज्ञानिक बदलाव को एक क्रांति के रूप में लेने में एक महत्वपूर्ण ऐतिहासिक बहस को जन्म दिया जो आज भी जारी है| अनेक इतिहासकारों का मानना है की यह अवधारणा बनाना कि आधुनिक विज्ञान के क्षेत्र में एक ऐसी क्रांति उत्पन्न हुई जिसने अतीत को बिलकुल पीछे छोड़ दिया, गलत होगा। हालांकि इस बात से सब सहमति रखते हैं की आधुनिक

विज्ञान का उदय पुनर्जागरण, धर्मसुधार, व्यापारिक उन्नति एवं पूंजीवाद के विकास के दौरान ही हुआ। परन्तु इन सब सामाजिक परिवर्तनों और विज्ञान की नई खोजों में क्या सम्बन्ध है यह निर्धारित कर पाना कठिन है। इसी प्रकार से क्रांति की सटीक प्रकृति, उसका मूल एवं कारण और परिणाम स्पष्ट रूप से बता पाना कठिन होगा।

विज्ञान के इतिहासकारों का मानना है की वैज्ञानिक क्रांति स्वतः प्रेरित थी। जो इतिहासकार सातत्य सिधांत (continuist) में आस्था रखते है, उनके अनुसार ऐसी कोई क्रान्ति नहीं हुई, बल्कि प्राचीन और मध्य काल से वैज्ञानिक विकास की जो धारा चली थी वही अपनी सहज गति से आगे बढती रही। वर्तमान में इस 'continuist' वैज्ञानिक विकास की दृष्टि को पूरी तरह से सही नहीं ठहराया जा सकता परन्तु यह भी नकारा नही जा सकता की मध्ययुगीन प्राकृतिक दर्शन ने वैज्ञानिक क्रांति को नींव प्रदान की। वे उस समय में हुई ऐतिहासिक घटनाओं का सम्बन्ध विज्ञान से जोड़ने के पक्ष में नहीं हैं। दूसरी विचारधारा के अनुसार यह क्रांति धर्म निरपेक्षता से प्रेरित थी।

कुछ इतिहासकार जैसे एच. बटरफील्ड, ऐ. कैस्लेर एवं ऐ. कोयरे के अनुसार विज्ञान की प्रगति में व्यक्तिगत प्रतिभा का नतीजा है। बटरफील्ड ने वैज्ञानिक क्रांति के संधर्भ में व्यक्तिगत व्यक्तित्व को महत्व दिया है। उनके अनुसार पुरानी परम्परागत सोच व आदतों को तोड़ना, लालन–पालन के समय से सुनती हुई बातें व व्यावहारिक अनुभव का त्याग करना बहुत कठिन कार्य रहा होगा इसलिए वैज्ञानिक क्रांति की सही व्याख्या कर पाना कठिन है।

कोयरे ने इस क्रांति का पूरा दायित्व गैलेलियो को ही सौंपा। ऐ. कैस्लेर ने व्यक्तिगत प्रतिभा, नई सोच एवं गलतियाँ करते हुए सफलता प्राप्त करने वालों को इस आधुनिक बिज्ञान का श्रेय दिया। इन सब ने अंतर्दृष्टि को ही एक महत्वपूर्ण स्थान दिया।

चार्ल्स वेबस्टर के अनुसार विज्ञान के क्षेत्र में प्रगति को अन्य घटनाओं, जैसे प्रमुख राजनैतिक, आर्थिक, सामाजिक, धार्मिक व बौद्धिक आंदोलनों से जोड़ना आवश्यक है, अन्यथा वह एक 'सीमित इतिहास' होगा।

क्राम्बी और क्लेगेट के अनुसार विज्ञान का विकास धीरे–धीरे प्रगति के पथ पर बढ़ा और नये विचारों के संस्थापक पुराने दार्शनिकों के चिंतन के ही फलस्वरूप आगे बढ़ पाए थे। उन्होंने अरस्तु को विज्ञान की तरक्की में एक रोड़ा नहीं बल्कि एक सफल सूत्रधार माना।

1930 के दशक में मार्क्सवादी और नव–मार्क्सवादी लेखन कार्य में विज्ञान की सामाजिक जांच करने की कोशिश की। इतिहासकार जैसे बोरिस हेसन का मानना है की आधुनिक विज्ञान का विकास नये बुर्जुआ वर्ग की आवश्यकताओं को पूरा करना के लिए हुआ। एडगर ज़िल्सेल के अनुसार वैज्ञानिकों, चित्रकारों और शिल्पकारों के बीच वर्गों की सीमा पुनर्जागरण काल में मिट गयी और इन सब के संयोगवश आधुनिक विज्ञान का उदय हो पाया। फ़्रेडरिक एंगेल्स का यह मानना है की समाज की एक तकनीकी आवश्यकता का विज्ञान की प्रगति पर उतना प्रभाव होता है जितना दस विश्विद्यालय भी नही डाल सकते। क्रिस्टोफर हिल ने हार्वे के विचोरों में बदलाव (हार्वे ने पहले शरीर में प्रमुख स्थान हृदय को दिया था पर बाद में रुधिर को महत्व दे दिया) का अध्यन करके यह बताया कि "हमें किसी विचारक के विचारों को उसके सामाजिक वातावरण से अलग करके नही देखने चाहियें"। इससे स्पष्ठ

रूप से पता चलता है कि विज्ञान को किसी व्यक्ति की प्रतिभा से जोड़ने में क्या कठिनाई सामने आती है|

यह सब इतिहासकारों में चर्चा का विषय है और विवादित मुद्दा है| व्याख्या के इस तरह के लचीलेपन से यह स्पष्ट रूप से इंगित होता है कि वैज्ञानिक क्रांति मुख्य रूप से एक इतिहासकार का वैचारिक वर्ग है। वैज्ञानिक क्रांति उन्नीसवीं सदी से पहले दैनिक जीवन पर खास असर नहीं कर पायी| हम यह कह सकते हैं कि सोलहवीं और सत्रहवीं शताब्दी में विज्ञान के क्षेत्र में हुई क्रांति मुख्य रूप से एक बौद्धिक प्रतिक्रिया थी|

6.7 वैज्ञानिक क्रांति के कुछ दूरगामी परिणाम

- एक वैज्ञानिक समुदाय का जन्म हुआ जिनका प्राथमिक लक्ष्य था ज्ञान का विस्तार करना| फ्रेंच एकेडमी ऑफ साइंसेज और रॉयल सोसाइटी ऑफ लंदन जैसी संस्थाओं की स्थापना हुई जिनका उद्देश्य था वैज्ञानिक विचारों को बढ़ावा देना।

- एक आधुनिक वैज्ञानिक पद्दति का विकास हुआ जो की सैद्धांतिक और प्रायोगिक प्रणाली पर आधारित थी और जिसने पारंपरिक और स्थापित स्रोतों या प्राचीन ग्रंथों के आधार पर अपने निष्कर्ष देने को माना किया| समाज पर धर्म के प्रभुत्व समाप्त होता हुआ नजर आया। आगे चलके इस तर्कसंगिक सोच ने ही प्रबोधन युग या ज्ञानोदय युग (Enlightenment) के लिए पृष्ठभूमि प्रदान करी| प्रबोधन युग में सामाजिक और राजनीतिक जीवन में धर्म और पदानुक्रम केन्द्रीयता को विस्थापित करने का प्रयास किया गया जिसमे वॉल्टेयर, एडम फर्ग्यूसन, एडम स्मिथ, डेविड हयूम, क्रिस्चियन वोल्फ, इम्मानुअल कांत, मर्चेसे दी बच्कारियाइन जैसे महान व्यक्तियों का विशेष योगदान रहा|

6.8 सारांश

मध्य युग (500–1350 ईस्वी) वैज्ञानिक ज्ञान के कैनन ने थोड़े ही परिवर्तन का अनुभव किया, और कैथोलिक चर्च ने प्राचीन यूनानी और रोमन की शिक्षाओं पर आधारित मान्यताओं की एक प्रणाली को स्वीकृति दी और सदियों के लिए धार्मिक सिद्धांत में शामिल किया। इस अवधि के दौरान वैज्ञानिक जांचो और प्रयोग का प्रचलन ज्यादा नहीं था। विज्ञान के छात्र प्राचीन कथित अधिकारियों के कार्यो को पढ़ते थे और उनके शब्दों को सच के रूप में स्वीकार करते थे।

हालांकि, पुनर्जागरण के दौरान यह सैद्धांतिक निष्क्रियता बदलने लगी और प्राकृतिक दुनिया को धर्म निरपेक्ष तरीकों से समझने के लिए प्रयास होने लगा| नये वैज्ञानिक तथ्य सामने आये जो की स्वीकारित सत्य के साथ मेल नहीं खाते थे और इन निष्कर्षो ने उन्हें दुनिया के अध्ययन के लिए प्रेरित किया। निकोलस कोपरनिकस ने आकाशीय पिंडों की जांच करके पुराने भू सिद्धांत जिसमे पृथ्वी सौर मंडल का केंद्र बताया गया उसे खारिज कर दिया गया और एक सूर्य केंद्रीय सिद्धांत की स्थापना की के साथ बदल दिया जिसमें पृथ्वी बस सूरज की परिक्रमा ग्रहों के एक नंबर से एक था। प्रारंभिक सत्रहवी शताब्दी के दौरान गणित, बीजगणित, त्रिकोणमिति, ज्यामिति के क्षेत्र में अग्रिम विकास हुआ| इस वैज्ञानिक प्रगति को आगे बढ़ाते हुए रेने देकार्त और गैलीलियो गैलीली ने भौतिकी के क्षेत्र में नये नियमों की ख़ोज की| जीव विज्ञान की प्रगति से मानव शरीर के रहस्यों को सुलझाया जा सका| सर आइजैक न्यूटन ने केपलर के ग्रहों की गति के नियमों और गैलिलियो के नियमों को एकीकृत कर विश्वसंबंदी गुरुत्वाकर्षण का नीयम दिया। इस प्रकार यह कहा जा सकता है की इस पूरे कार्यकाल में

यूरोप में सामाजिक, धार्मिक और आर्थिक आन्दोलन साथ–साथ चल रहे थे जिनका आपसी सम्बन्ध था की नहीं यह कह पाना कठिन होगा| हालांकि, यह सत्य है की इन सब अन्दलोनों के साथ ही विज्ञान प्रगति की ओर बढ़ा|जैसा की आप को ज्ञात हो चुका है की इस वैज्ञानिक बदलाव को क्रांति के रूप में समझने पर कई विवाद उठे हैं, इसलिए एक सुनिश्ति निष्कर्ष पर पहुच पाना मुश्किल होगा| अतरू हम विज्ञान के क्षेत्र में हुए इस परिवर्तन को क्रांति माने या न माने, इस बात को नकारा नहीं जा सकता की इस वैज्ञानिक बदलाव ने लोगों के विचारों और सृजनात्मकता को उन्मुक्त बनाया|

6.9 तकनीकी शब्दावली

पुनर्जागरण: मध्यकाल में यूरोप में हुए सांस्कृतिक आन्दोलन

मानवतावाद : पुनर्जागरण से जुड़ा मानव मूल्यों, नैतिकता, न्याय एवं धर्म निरपेक्ष पर केन्द्रित आन्दोलन

धर्म–सुधारक आन्दोलन: सोलहवी शताब्दी का वह आन्दोलन जिसने चर्च के धार्मिक सिधान्तों का खंडन हुआ और प्रोटोस्टेंट धर्म का उदय हुआ

प्रति–धर्मसुधार आन्दोलन: धर्म–सुधारक विरोधी आन्दोलन जिसका उदेश्य था चर्च की पवित्रता और आदर्शों को पुनरूस्थापित करना

सर्फ़डम: मध्य युगी यूरोप में कृषि दासत्व की प्रथा

6.10 स्वमूल्यांकित प्रश्नों के उत्तर

इकाई 6.3

(1) देखिये 6.3.1 और 6.3.2

(2) देखिये 6.3.2

इकाई 6.4

(1) देखिये 6.4.1, 6.4.3, 6.4.4, 6.4.6, 6.4.7 और 6.4.15

(2) देखिये 6.4.2 और 6.4.9

6.11 संदर्भ ग्रन्थ सूची

- Anderson, Bonnie S. and Judith P.Zinsser, A History of their Own: Women in Europe from Pre&History to the Present, Vol. 2, Revised Ed. , Oxford University Press, 2000.
- Butterfield, Herbert.] The Origins of Modern Science: 1300&1800, G. Bell and Sons Ltd., 1968.
- Crombie, Alistair.Cameron. , The History of Science from Augustine to Galileo, Falcon Press Limited, London, 1952.
- Henry, John, The Scientific Revolution and the Origin of Modern Science, 2nd Edition, Palgrave, 2002.
- Hill, Christopher., William Harvey and the Idea of Monarchy, Past and Present, No.27, April, 1964.
- Kearney, Hugh. F.(ed.), Origins of the Scientific Revolution, Longmans, London, 1966.
- Koestler, A. , The Sleepwalkers: A History of Man's Changing Vision of the Universe, Macmillian, 1968.

- Osler, Margaret J. (ed.) Rethinking the scientific Revolution, Cambridge University Press, 2000.
- Shapin, Steven, The Scientific Revolution, The University of Chicago Press, London, 1996.
- Webster, Charles. The authorship and significance of Macaria, Past and Present, No. 56, Aug, 1972.
- गुप्ता, पार्थसारथी, (मक.), आधुनिक पश्चिम का उदय , हिंदी माध्यम कार्यन्वय निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, 2000.

6.12 सहायक / उपयोगी पाठ्य सामग्री

- Sherman, Dennis, (ed.) Western Civilization: Images and Interpretations, Vol. II: Since 1660, 3rd Edition, McGraw&Hill, Inc., US, 1991.
- Themas, Keith. Religion and Decline of Magic, Penguin Book,] London, 1971.
- Wernham, R.B., (ed.), The New Cambridge Modern History, Vol. III, Cambridge University Press, Britain, 1968.

6.13 निबंधात्मक प्रश्न

1. आप किस प्रकार कह सकते हैं की वैज्ञानिक क्रांति ने पुरानी विचारधाराओं को बदल दिया?
2. आपके अनुसार वैज्ञानिक क्रांति ने किन–किन कारणों के परिणामस्वरूप जन्म लिया?
3. क्या विज्ञान के क्षेत्र में हुए उपरोक्त लिखे परिवर्तनों को क्रांति के रूप में देखा जा सकता है? अपने विचार व्यक्त कीजिये|

इकाई सातः यूरोपीय निरंकुश राष्ट्रीय राज्य

7.1 प्रस्तावना

7.2 उद्देश्य

7.3 निरंकुशवाद की विशेषताएं

7.4 नवीन निरंकुश राजतंत्रों के उदय के कारण

7.5 प्रमुख निरंकुश राष्ट्र–राज्यों का उदय

7.5.1 इंग्लैण्ड

7.5.2 फ्रांस

7.5.3 स्पेन

7.5.4 रूस

7.5.5 प्रशा

7.6 समीक्षा

7.7 निरंकुशता का पतन

7.8 स्वमूल्यांकित प्रश्न

7.9 सारांश

7.10 सन्दर्भ ग्रन्थ

7.11 स्वमूल्यांकित प्रश्नों के उत्तर

7.12 निबंधात्मक प्रश्न

7.1 प्रस्तावना

राष्ट्रीय राज्यों का उत्कर्ष आधुनिक युग की एक बहुत बड़ी विशेषता है। आधुनिक सन्दर्भ में राष्ट्रीयता यूरोप की ही देन है, किन्तु यूरोप में यह राष्ट्रीयता लम्बे संघर्ष (मध्यकालीन प्रवृत्तियों) के फलस्वरूप प्राप्त हुई। यूरोपीय मध्ययुग में सर्वत्र सामन्तवाद का वर्चस्च था। सामन्त, राजा की ही तरह अनेक शक्तियों का उपयोग करते हुए स्वयं को लगभग स्वतंत्र मानते थे। किन्तु पन्द्रहवीं शताब्दी में इस व्यवस्था के विरूद्ध घोर प्रतिक्रिया हुई। इसका एक प्रमुख कारण था, पन्द्रहवी–सोलहवीं शताब्दी में राष्ट्रीयता की भावना का उदय। देश–प्रेम एवं देश–भक्ति की भावना ने मध्य युग का अन्त कर आधुनिक युग की घोषणा की। इसने

सामंतकाल की अत्यधिक अव्यवस्था व अराजकता को समाप्त कर दिया। सामन्तवाद को नष्ट करने के साथ–साथ राष्ट्र–राज्यों ने आर्थिक विकास में बड़ा योग दिया।

उत्पादन के लिए सुधरे हुए तरीकों का इस्तेमाल हुआ और तरीकों में सुधार हुए। राष्ट्रीय राज्यों के उदय के कारण राष्ट्रीय सीमाएं और अधिक तर्क संगत हो गयी। राष्ट्रीय राज्य एक संस्कृति के व्यक्तियों को संगठित करने में बहुत सहायक सिद्ध हुए। अपने राष्ट्र के प्रति निष्ठा का विकास हुआ।

1589 ई0 से 1715 ई0 के मध्य नये एवं सबल राजतंत्रीय राष्ट्रीय राज्यों का उत्थान तेजी से हो रहा था। इंग्लैण्ड, फ्रांस, स्पेन, आदि पश्चिमी यूरोपीय राष्ट्रों में राजनीतिक संगठन, राष्ट्रीय एकता, देशभक्ति तथा सुदृढ़ राजतंत्रों की प्रगति हो रही थी। परन्तु मध्य, दक्षिण एवं पूर्वी यूरोप के राज्य अभी भी उतने संगठित एवं सशक्त न हो पाए जितने पश्चिमी यूरोप के राष्ट्र। ये राष्ट्र राजनीतिक अनैक्यता, अराजकता तथा अविकसित व्यवस्थाओं के कारण असम्बद्ध राज्य बने हुए थे।

7.2 उद्देश्य

इस इकाई में हम यूरोप में नवीन निरंकुश राज्यों के उदय एवं उसके कारणों की चर्चा करेंगें।

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप –

1–निरंकुश राज्य का अर्थ एवं उसकी विशेषताओं से परिचित हो सकेंगे।

2–इस इकाई के अध्ययन से हम निरंकुश राज्यों के उदय के कारणों से परिचित हो पायेंगे।

3–यूरोप में नये निरंकुश राज्यों एवं उनके शासकों के कार्य एवं योगदान जान सकेंगे।

4–नवीन राष्ट्रीय राज्यों की सीमाओं एवं इसकी प्रगति को समझ पायेंगें।

7.3 निरंकुशवाद की विशेषताएं

1–राजा ही सर्वोच्च होता है। वह सेना तथा अन्य बड़े–बड़े अफसरों की सहायता से शासन कार्य चलाता है। किन्तु उस पर किसी का अंकुश नहीं होता है। राजा ही अन्तिम रूप से कानून का निर्माण करने वाला होता है।

2–सेना निरंकुश राज्य की मूलभूत विशेषता है।

3–नौकरी–पेशा वर्ग की स्थापना शासकों द्वारा की गयी। इस वर्ग में दो प्रकार के पद थे – (क) प्रशासनिक, (ख) सैनिक, कुछ देशों में नौकरी पेशा वर्ग के सदस्य कुलीन न होकर साधारण जनता में से भी लिए जाते थे, ताकि वे राजा का विरोध न कर सकें

4–निरंकुशवाद की एक विशेषता वाणिज्यवाद भी थी, वाणिज्यवाद एक प्रकार का आर्थिक युद्ध था, जिसमें एक राज्य स्वयं आत्मनिर्भर होकर, दूसरे देशों को अपने ऊपर आर्थिक रूप से निर्भर होने के लिए प्रेरित करता था।

7.4 यूरोपीय नवीन निरंकुश राजतंत्रों के उदय के कारण

यूरोप में नवीन निरंकुश राज्यों के उदय के कई प्रत्यक्ष एवं परोक्ष कारण हैं किन्तु तीन सर्वाधिक महत्वपूर्ण हैं। पहला सामन्तवाद का पतन, दूसरा धार्मिक उथल पुथल एवं चर्च की शक्ति का ह्रास और तीसरा व्यापारिक उन्नति एवं नये मध्यम वर्ग का उदय।

मध्ययुगीन यूरोप की व्यवस्था सामन्तों पर टिकी थी। सामन्तों ने धीरे–धीरे शक्ति में वृद्धि करते हुए राजाओं जैसा व्यवहार आरम्भ कर दिया। ये सामन्तों ने अपने निवास को दुर्गीकृत करते हुए नियमित सेना के सहारे कृषकों का शोषण करते हुए विलासिता का जीवन व्यतीत कर रहे थे। यूरोप की इस समान्तवादी व्यवस्था से कृषकों एवं श्रमिकों की स्थिति अत्यन्त दयनीय होती जा रही थी। सामन्तों के निरन्तर युद्धों एवं लगान की बढ़ती मात्रा से प्रजा का जीवन कष्टमय था। इन सामन्तों ने राजाओं की शक्ति को भी सीमित कर रखा था। किन्तु यूरोप में नवीन विचारोंके प्रस्फुटन, बारूदों एवं तोपों के प्रयोग तथा सैन्य क्षेत्र में प्रगति ने राजाओं को सामन्तों को नष्ट करने के लिये प्रेरित किया तथा प्रजा एवं किसानों ने अपनी हीन स्थिति का

कारण सामन्तों का मानते हुए राजाओं का सहयोग किया। यूरोप के विभिन्न क्षेत्रों अथवा देशों में सामन्तवाद का पतन अलग–अलग समय पर हुआ, किन्तु निःसन्देह सामन्तों के पतन ने राजाओं की शाक्ति में अभूतपूर्व वृद्धि की।

चौदहवीं सदी में यूरोप में बारूद के आविष्कार एवं तद्जनित बारूद के प्रयोग के नये साधनों (बन्दूकों, तोपों एवं गोलों के निर्माण) ने युद्ध प्रणाली में आमूल परिवर्तन कर दिया। इन नवीन साधनों ने ही सामन्तों की शक्ति क्षीण करते हुए उनके दुर्गो को व्यर्थ सिद्ध किया। तोपों एवं बन्दूकों के गोलों के सामने सामन्तों के दुर्ग धराशायी हो गये और सामन्तों का पतन सुनिश्चित हो गया। सामन्तों के पतन ने राजाओं की शक्ति को बढ़ाया अब ये राजा अपनी बढ़ी सैनिक शक्ति एवं मध्यम वर्ग के सहयोग के बल पर सुदृढ़ एवं केन्द्रित तथा सार्वभौम सरकारें कायम कर ली।

व्यापारिक क्रांति ने निरंकुश राजतंत्र के उदय में महती भूमिका निभाई। वाणिज्यवादी नीतियों के उपयोग ने राजाओं को प्रचुर धनराशि प्रदान की, जिसका प्रयोग वे सेना को संगठित करने तथा अपनी राजनीतिक सत्ता के विस्तार के लिए कर सकते थे। व्यापार के विस्तार ने भी सुदृढ़ सरकार की अनिवार्यता को बढ़ावा दिया। व्यापार–वाणिज्य की उन्नति के साथ–साथ मध्यम वर्ग की सामाजिक–आर्थिक स्थिति सुदृढ़ होती गयी एवं मध्यम वर्ग ने अपने व्यापार–वाणिज्य के उत्थान तथा सुरक्षा हेतु सबल राजतंत्र के स्थापना में बड़ा सक्रिय सहयोग दिया। मध्यम वर्ग ने सामन्तो के विरूद्ध राजतंत्रों की बड़ी सेवाएं की एवं राष्ट्रीयता की भावना का सृजन किया। इसके बदले में राजाओं ने व्यापार–वाणिज्य को संरक्षण प्रदान किया।

मध्ययुगीन धर्मयुद्धों ने सामन्त–तन्त्र को दुर्बल कर राजाओं की शक्ति को बढ़ाया। कुछ यूरोपीय देशों में प्रोटेस्टेट आन्दोलन ने राजकीय सत्ता के विकास में सहयोग किया। इसने कैथोलिक चर्च की एकता को भंग कर दिया, शासकों के ऊपर पोप की प्रमुखता को समाप्त कर दिया और राष्ट्रीयता की भावना को बल दिया।

मध्ययुगीन धार्मिक अव्यवस्था चर्च में व्याप्त कुरीतियों एवं पादरियों के नैतिक पतन के विरूद्ध युरोप में धार्मिक उथल पुथल शुरू हुई। यूरोपीय जनता के समस्त जीवन पर चर्च एवं पोप का नियन्त्रण था। पोप एवं चर्च की इस शक्ति के कारण ही राजा धर्मभीरू अथवा पोप का आदेश मानने के लिये प्रतिबद्ध था। किन्तु जब यूरोप में धर्म सुधार आन्दोलन से ईसाई एकता टूटने लगी तो राजाओं ने चर्च एवं पोप के चंगुल से छूटने के लिये धर्म सुधारकों का साथ दिया। फलतः यूरोपीय ईसाई एकता टूट गयी एवं अनेक नवीन सम्प्रदायों ने जन्म लिया। आने वाले कई वर्षो तक इन नवीन सम्प्रदायों (प्रोटेस्टेंट) एवं कैथोलिकों के मध्य संघर्ष होता रहा। इस धार्मिक संघर्ष का लाभ प्रत्यक्षतः राजतन्त्र को प्राप्त हुआ। पोप की शक्ति कमजोर हुई तथा राजाओं की शक्ति का विस्तार तथा राष्ट्रीयता की भावना को बल मिला।

राष्ट्रीयता का उत्थान राजतंत्रों के उत्कर्ष का एक अन्य कारण था। धर्म सुधार ने राष्ट्रीयता की भावना को जागत किया। सभ्यता पहले धर्म–प्रधान थी, अब वह राष्ट्र–प्रधान बन गयी। मठों के टूटने से राष्ट्रीय राज्यों की आय तथा शक्ति में वृद्धि हुई। निरंकुश राजतंत्र के विकास में राज्य के दैवीय उत्पत्ति के सिद्धान्त ने बड़ा योगदान दिया।

पुनरूत्थान एवं धर्म सुधार काल के कुछ विद्वान लेखकों ने भी राजाओं के हाथों को सुदृढ़ करने में सहयोग दिया। इटालियन लेखक मैकिया वेली फ्रांसीसी लेखक बोडिन और अंग्रेज लेखक हाब्स ने क्रमशः दी प्रिंस, दी स्टेट, और लेवियाथन नामक पुस्तके लिखीं। इन लेखकों ने शक्तिशाली निरंकुश राजतंत्र का पूर्ण समर्थन किया।

7.5 प्रमुख यूरोपीय निरंकुश राष्ट्रीय राज्य

7.5.1 इंग्लैण्ड

इंग्लिश चैनल द्वारा विभाजित यूरोप महाद्वीप से अलग द्वीप समूह को हम ग्रेट ब्रिटेन कहते हैं। वास्तव में यहां दो बड़े द्वीप हैं – एक द्वीप जो दूसरे बड़े द्वीप से अलग है, उसे हम आयर लैण्ड कहते हैं तथा दूसरा

बड़ा द्वीप जिस पर वेल्स, स्काटलैण्ड एवं इंग्लैण्ड तीन अलग–अलग राज्य थे। इनकी भाषाएं परम्पराएं और शासन तन्त्र भी अलग थे। इनमें इंग्लैण्ड सबसे सक्षम और सम्भावना सम्पन्न देश था।

राष्ट्रीय एकता स्थापित करने वाला पहला राज्य इंग्लैण्ड था। इंग्लैण्ड में राष्ट्रीय एकता एवं राष्ट्रीय सरकार की स्थापना का कार्य पश्चिमी यूरोप के अन्य राज्यों की अपेक्षा अधिक तेजी से हुआ। सन् 1337 से 1453 तक फ्रांस और इंग्लैण्ड के बीच हुए दीर्घकालीन सामन्तीय एवं राजवंशीय युद्धों (शतवर्षीय युद्ध) के परिणाम बड़े महत्वपूर्ण सिद्ध हुए। शतवर्षीय युद्ध की समाप्ति के तुरन्त बाद ही इंग्लैण्ड में व्यापक सामंतीय युद्ध का प्रारम्भ हुआ। इसमें प्रायः सभी सामन्तों ने भाग लिया। यह सामन्तीय युद्ध ''गुलाबों का युद्ध'' (1455–1485) कहलाता है, जिसमें यार्क राजवंश (श्वेत गुलाब) एवं लंकास्टर राजवंश (लाल गुलाब) के परस्पर विरोधी सामन्तों एवं समर्थकों के बीच दीर्घकालीन ध्वंसात्मक युद्ध हुआ। यह युद्ध 1485 में बासवर्थ में रिचर्ड–।।। की पराजय एवं मृत्यु तथा हेनरी ट्यूडर की विजय से समाप्त हुआ।

हेनरी ट्यूडर (हेनरी सप्तम्) के सिंहासन पर बैठने के साथ ही एक नये राजवंश ''ट्यूडर वंश'' (1485–1603 ई0) का उदय हुआ। इसी वंश को इंग्लैण्ड में राष्ट्रीय राज्य के रूप में निर्मित करने का श्रेय दिया जाता है। इंग्लैण्ड के इतिहास में एक नये युग की शुरूआत हुई। गद्दी पर बैठने के बाद हेनरी सप्तम ने गृह कलह को समाप्त करने एवं शान्ति व्यवस्था की स्थापना हेतु यार्क वंश की उत्तराधिकारी राजकुमारी एलिजाबेथ के साथ विवाह कर लिया, इस विवाह से देश में शान्ति, सुरक्षा एवं सुदृढ़ शासन व्यवस्था की स्थापना हुई। हेनरी सप्तम् (1485–1509 ई0) ने सर्वप्रथम देश में शान्ति–व्यवस्था एवं सुरक्षा की स्थापना के उद्देश्य से शक्शिाली राजतंत्र स्थापित करने की चेष्टा की। गुलाबों के युद्ध के परिणामस्वरूप हेनरी सप्तम् को दो बड़े लाभ हुए –

1–इस युद्ध के परिणामस्वरूप इंग्लैण्ड में अनेक शक्तिशाली तथा प्रभावशाली सामन्तगण मारे गये, या अशक्त हो गये। अतः राजा ने उनके अधिकारों को कुचल दिया एवं उनकी जागीरे जब्त कर ली।

2– इस युद्ध ने एक नये वर्ग अर्थात् मध्यवर्ग को जन्म दिया, जिसने अपने हितों के लिए राजा का साथ दिया। इसी जन समर्थन के आधार पर ट्यूडर राजाओं ने सोलहवीं शताब्दी में निरंकुश राजतन्त्र स्थापित किया। उसने विभिन्न अधिनियमों के द्वारा सामन्तों का दमन किया, उनसे सैन्य अधिकार छीन लिये तथा सामन्तों के स्थान पर मध्य वर्ग के लोगों को ऊँचे पदों पर नियुक्त किया। इस प्रकार उसने इंग्लैण्ड में सामन्त तन्त्र को हमेशा के लिए समाप्त करके निरंकुशता को परिपुष्ट किया।

हेनरी सप्तम ने 1520 में अपनी पुत्री मारग्रेट का विवाह स्काटलैण्ड के राजा जेम्स–चतुर्थ से कर दिया। इस विवाह का सुदूरगामी प्रभाव एक सदी बाद दिखा जब 1603 में स्काटलैण्ड एवं इंग्लैण्ड का एकीकरण हो गया व इंग्लैण्ड में स्टुअर्ट राजवंश का शासन आरम्भ हुआ।

हेनरी सप्तम् के बाद हेनरी अष्टम् (1509–1547 ई0) के शासनकाल में इंग्लैण्ड में धर्म सुधार आन्दोलन हुआ, जिसके महत्वपूर्ण संवैधानिक एवं धार्मिक प्रभाव पड़े। इस आन्दोलन ने राजा और पार्लियामेन्ट को देश के धार्मिक जीवन पर नियन्त्रण का अधिकार दे दिया। इसके कुछ वर्षो बाद मठों एवं समर्पित पूजागृहों के विसर्जन ने राजा को धन एवं समर्थन दोनो ही प्रदान किये। ट्यूडर वंश की अन्तिम शासिका ने भी राजा की शक्ति में वृद्धि की। एलिजाबेथ का शासन काल इंग्लैण्ड के लिये स्वर्ण युग था क्योंकि उसके समय में ही इंग्लैण्ड में राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक और धार्मिक उन्नति हुई। जनता सुखी और सम्पन्न थी। इंग्लैण्ड को विदेशी युद्धों से शान्ति मिली और अन्तराष्ट्रीय व्यापार वाणिज्य से इंग्लैण्ड आर्थिक रूप से समृद्ध हुआ। उसने इंग्लैण्ड को समुद्रों का स्वामी और संसार का सबसे प्रमुख व्यापारिक राष्ट्र बनाने में सहायता दी।

सोलहवीं शताब्दी में राष्ट्रीय शक्तियों के प्रादुर्भाव और विकास में सबसे अधिक और स्पष्ट सफलता इंग्लैण्ड के ट्यूडर वंश को मिली। एलिजाबेथ ने पार्लियामेट ने कहा था–''यद्यपि ईश्वर ने मुझे इतना ऊँचा उठाया है फिर भी मैं इसे अपना गौरव मानती हूँ कि मैंने आपके स्नेह के सहारे शासन किया है। इसीलिये मैं

इस बात से इतनी खुश नहीं हूँ कि ईश्वर ने मुझे रानी बनाया है। मुझे तो इसकी खुशी है कि मैं एक कृतज्ञ प्रजा की रानी हूँ।'' इसी रास्ते पर संभल कर चलते शासक अपने को दृढ़ बनाये रख सकते थे।

ट्यूडर शासकों के शासनकाल में संसद सशक्त राजाओं के प्रभाव में रही। ट्यूडर काल में इंग्लैण्ड की व्यापारिक प्रगति तो हुई ही, दुनिया के देशों में उसका महत्व भी बढ़ा। अंग्रेजों को अपने देश पर गर्व था और ट्यूडर लोग दुनिया में इंग्लैण्ड की शक्ति और गौरव के प्रतीक थे। ट्यूडर शासनकाल में राजाओं ने बड़ी बुद्धिमता एवं समन्वय की दृष्टि अपनाते हुए पोप से स्वतन्त्र होकर संसद की सहायता से अनेक महत्वपूर्ण सुधार किये। इन्होंने संसद से टकराव की जगह संसद की सहायता से तत्कालीन आवश्यकताओं के अनुरूप शासन में सुधार किया। ट्यूडर सम्राटों ने संसद के द्वारा जनता पर शासन किया तथा जनता को अपने पक्ष में रखा, परन्तु स्टुअर्ट वंश (1603–1719) के शासकों में यह सूझ–बूझ नहीं थी। फलतः राजा एवं संसद के मध्य संघर्ष एवं टकराव हुआ। मेरियट के मतानुसार – ''ट्यूडर सम्राटों के सुदृढ़ एवं अनुशासन पूर्ण प्रशासन के काल में इंग्लैण्ड की संसद को विश्राम और शक्ति संचय का अवसर प्राप्त हुआ। इसी के बल पर सत्रहवीं सदी में सम्राट के विरूद्ध अधिकार व सत्ता प्राप्त करने के लिये वैधानिक संघर्ष करने में संसद समर्थ हुई।'' परन्तु स्टुअर्ट शासनकाल (1603–1688 ई0) के अन्तिम शासक जेम्स द्वितीय के समय इंग्लैण्ड में रक्तहीन गौरवपूर्ण क्रांति (1688 ई0) हुई। जिसमें पार्लियामेन्ट की जीत हुई तथा वह अंग्रेज शासकों पर सर्वोच्च बन गयी। इस प्रकार लोकतंत्र ने निरंकुशता पर विजय पाना आरम्भ कर दिया।

7.5.2 फ्रांस

फ्रांस यूरोप का ऐसा प्रथम देश था, जिसमें सबसे पहले राजनीतिक एकता स्थापित हुई। फ्रांस के दो प्रसिद्ध राजवंशों वैलय राजवंश (1422–1589) एवं बूर्वो राजवंश (1589–1793) ने फ्रांस को एक राष्ट्रीय राज्य के रूप में परिवर्तित किया।

वैलय राजवंश के प्रमुख शासकों लुई ग्यारहवें, बारहवें एवं फ्रांसिस ने फ्रांस में निरंकुश राजसत्ता की स्थापना का सुदृढ़ प्रयास किया। इन शासकों ने विशेषतः लुई ग्यारहवें ने व्यावहारिक बुद्धि, कुशलता तथा सफल कूटनीति द्वारा सामंतों की शक्तियों एवं जागीरों को छीन लिया। साथ ही, उसने सामन्तीय न्यायालयों को समाप्त कर राजकीय न्यायालयों की प्रभुता कायम की। उसने चर्च पर भी अंकुश लगाया। लुई ने कई ऐसे कदम उठाये जिनमें फ्रांस शक्तिशाली बना। इन कदमों में उद्योग धन्धों के विकास हेतु संरक्षण प्रदान करना, जहाजों का निर्माण, बन्दरगाहों को विकसित करना, समस्त राज्य में एक सी मुद्रा, नाप–तौल कानून इत्यादि व्यवस्थाएं शामिल थी। फ्रांस के इतिहास में लुई ग्यारहवें का शासनकाल एक युगान्तकारी घटना समझी जाती है, क्योंकि उसने फ्रांसीसी राज्य की सीमाएं विस्तृत की एवं निरंकुश राजतंत्र तथा सुदृढ़ राष्ट्र की नींव डाली। जब लुई मरा तब फ्रांस का मानचित्र बहुत कुछ वैसा ही था, जैसा आज दिखायी पड़ता है। सोलहवीं शताब्दी में धार्मिक युद्ध से उत्पन्न अव्यवस्था ने निरंकुश राजतंत्र को और अधिक मान्यता, समर्थन एवं बल प्रदान किया।

फ्रांसिस की मृत्यु के पश्चात् (1559–89) के तीस वर्षो में यूरोप में धर्म सुधार आन्दोलनों के परिणाम स्वरूप हो रहे धार्मिक परिवर्तन से फ्रांस के राष्ट्रीय एकता पर संकटों का बादल घिर आया। यूरोप में व्याप्त इस धार्मिक अशान्ति से फ्रांस अपने को बचा नहीं सका। फ्रांस के मध्यमवर्ग में प्रोटेस्टेंटो जिन्हें वहां ह्यूगनाट कहा जाता था, का प्रभाव तेजी से बढ़ रहा था और धीरे–धीरे इनकी संख्या एवं शक्ति में अत्यधिक वृद्धि हो गयी, जिससे फ्रांस में धार्मिक युद्धों ने गृह युद्ध का रूप धारण कर लिया। फ्रांसिस की मृत्यु के पश्चात् 1559 से 1989 के बीच यह गृह कलह अपने चरम पर पहुंच गया तथा फ्रांस में तीन हेनरी (फ्रांस का राजा हेनरी–।।।, गीजा का ड्यूक हेनरी एवं नवारे का युवराज हेनरी) के मध्य शक्ति प्राप्त करने अथवा बनाये रखने का प्रयास किया जा रहा था, जहां गीजा का हेनरी कैथोलिकों का समर्थक एवं नेता था। वहीं प्रोटेस्टेन्टों का समर्थक एवं नेता नेवारे का हेनरी था। राजा हेनरी ने अपने शक्ति को बनाये रखने के लिये समय–समय पर दोनो हेनरियों की सहायता लेता रहा। अन्ततः नवारे के हेनरी को राजा हेनरी की मृत्यु 1589 के बाद फ्रांस

की गद्दी मिली। नवारे का हेनरी फ्रांस के प्रसिद्ध बूर्वो राजवंश का संस्थापक एवं फ्रांस के प्रसिद्ध राजा हेनरी चतुर्थ के रूप में विख्यात हुआ।

नवारे का हेनरी जब हेनरी–चतुर्थ के नाम से फ्रांस की गद्दी पर बैठा तो अन्य कोई विकल्प न होने के कारण उसे स्वीकार तो किया गया किन्तु उसकी स्थिति बहुत डांवाडोल थी। उसे एक बुरा प्रोटेस्टेंट समझा जा रहा था क्योंकि वह कैथोलिक हो गया था। उसे एक बुरा कैथोलिक समझा जा रहा था क्योंकि वह प्रोटेस्टेंट लोगों के प्रति सहिष्णु था। किन्तु अपनी नुकीली दाढ़ी, चमकती आंखों, फुर्ती एवं तत्काल निर्णय लेने की आदत से वह शीघ्र ही लोकप्रिय होने लगा और जल्दी ही उसे गुड किंग हेनरी कहा जाने लगा।

हेनरी चतुर्थ (1589–1610) का उल्लेख फ्रांसीसी राजाओं के इतिहास में महान राजा के रूप में ही नहीं, लोकप्रिय राजा के रूप में भी होता है। उसने एक नये राजवंश की शुरूआत की जो दो सौ वर्षो तक फ्रांस पर शासन करता रहा। वह बूर्वो वंश का संस्थापक था, जिसने फ्रांस को ही नहीं यूरोप को भी सबसे शक्तिशाली राजा प्रदान किये। उसके सबसे महत्वपूर्ण कार्यो में एक था – राजाओं की शक्ति की प्रभुता को पुनः स्थापित करना।

हेनरी चतुर्थ के बाद 1617 ई0 में बालिग होने पर उसके पुत्र लुई तेरहवें ने राज्य की बागडोर अपने हाथ में ले ली। लुई तेरहवें में प्रशासकीय क्षमता एंव योग्यता का अभाव था, किन्तु सौभाग्य से उसे कार्डिनल रिशलू नामक एक असाधारण व्यक्ति की अमूल्य सेवाएं प्राप्त थी, जिसे उसने 1624 ई0 में प्रधानमंत्री बनाया। वह मृत्यु पर्यन्त (1642 ई0) इस पद पर बना रहा। उसने लुई के सामने यह शपथ ली कि – ''मुझे जो भी अधिकार दिये जायेंगे उनका उपयोग मैं ह्यूगनटों और सामन्तों का दमन करने, प्रजा को अनुशासित एवं कर्तव्यपरायण बनाने और राजपरिवारों में उचित स्थान दिलाने में करूॅगा।'' योग्य और ओजस्वी रिशलू के अपनी सरकार के सम्बन्ध में दो लक्ष्य थे–

1– राजा को फ्रांस में सम्प्रभु बनाना।

2– फ्रांस को यूरोप में सर्वश्रेष्ठ बनाना।

रिशलू ने ऐसी तमाम सामन्तों की गढ़ियों को बर्बाद कर दिया जो राष्ट्र के लिए आवश्यक नही थी तथा चालबाजों को गुप्तचरों द्वारा ठिकाने लगा दिया। राजा की शक्ति का विरोध करने वाला दूसरा वर्ग काल्विनवादी प्रोस्टेन्टों का था, जिन्हें ''ह्यूगनाट'' कहा जाता था। रिशलू ने ह्यूगनाटों को दबा दिया। रिशलू ने एस्टेट्स जनरल की बैठकें बुलाने से इंकार कर दिया। इस बात से राजा मनमाना काम करने को स्वतंत्र हो गया। राजा कानून बनाने और उन्हें लागू करने लगा। वह कर लगाने और उन्हें खर्च करने लगा। इस तरह रिशलू निरंकुश राजतंत्र का प्रमुख निर्माता था।

रिशलू की मृत्यु के बाद अगले राजा लुई चौदहवें (1643–1715 ई0) की अल्प– वयस्कता के समय, कार्डिनल मेजारिन ने सन् 1661 तक फ्रांस का कार्यभार संभाला। उसने रिशलू की नीतियों को जारी रखा और जन विरोध (फ्रोंदे) के बावजूद लुई के निरंकुश राजतंत्र को दृढ़ किया। उसने विरोध को दबा दिया तथा राजनीतिक एवं वित्तीय मामलों में न्यायिक संस्था पार्लेमा के हस्तक्षेप के अधिकार को छीन लिया। इस तरह राजतंत्र शक्तिशाली हो गया। रिशलू एवं मेजारिन के कार्यो ने ही लुई चौदहवें के निरंकुश राजतंत्र को सम्भव बनाया।

संक्षेप में यह कह सकते हैं कि फ्रांस में राष्ट्रीय एकता का विकास इंग्लैण्ड के राष्ट्रीय विकास से भिन्न तरीके से हुआ। फ्रांस की भौगोलिक स्थिति ऐसी नहीं थी कि इस पर आसानी से आक्रमण न हो सके, क्योंकि यह चारो ओर से समुद्र द्वारा उस तरह नहीं सुरक्षित था, जैसे इंग्लैण्ड। इसी कारण शक्ति एवं अधिकार एक व्यक्ति को सौंपे गये न कि पार्लियामेंट को, जिससे शक्तिशाली राजा आपातकाल में तत्काल कार्यवाही कर सके। फ्रांस में राष्ट्रीय राज्य के उदय में बाधक सामन्तवर्ग एवं धार्मिक कलह थी। किन्तु राजा

एवं उनके मन्त्रियों सल्ली, रिशलू, मेजारिन और कोल्वर्ट ने फ्रांस को एक निरंकुश राष्ट्रीय राज्य के रूप में परिवर्तित कर दिया।

लुई 16वें (1774–1793 ई0) के समय फ्रांसीसी क्रांति ने फ्रांस में निरंकुशता का अन्त किया। परन्तु तब तक फ्रांस एक शक्तिशाली राष्ट्र–राज्य बन चुका था।

7.5.3 स्पेन

पिरेनीज पहाड़ के दक्षिण में भूमध्य सागर, अटलांटिक सागर और पुर्तगाल से घिरा पठारी इलाका स्पेन है। स्पेन आधुनिक काल के प्रारम्भ में यूरोप के सबसे शक्शिाली एवं उन्नत देशों में से एक था। स्पेन का अतीत स्वर्णिम रहा, किन्तु यह अल्पकालीन ही रहा, क्योकि स्पेन की महानता के भौतिक स्त्रोत उस देश में नहीं थे। दीर्घकालीन एकीकरण के प्रयासों के पश्चात् सोलहवीं सदी के प्रारम्भ में स्पेन में राष्ट्रीय राजतंत्र का उत्कर्ष सम्भव हुआ।

अरबों की जब शक्ति बढ़ी तो उत्तरी अफ्रीका विजय करते–करते वे स्पेन आये फिर फ्रांस बढ़ गये। फ्रांस से तो उन्हें जल्दी खदेड़ दिया गया किन्तु स्पेन में वे सदियों तक बने रहे। अरबों ने स्पेन में खूबसूरत नगर बसाए, मस्जिद बनवाई तथा इस्लाम का प्रसार किया। कालान्तर में इनकी शक्ति क्षीण होती गयी फलतः स्पेन में इनका प्रभाव समाप्त हो गया। पन्द्रहवीं शताब्दी में स्पेन में चार विभाजित क्षेत्र दिखाई देते हैं। फ्रांसीसी सीमा के निकट नेवारे, पुर्तगाल की तरफ कास्तील, दक्षिण पूर्व में अरागान तथा दक्षिण में ग्रेनेडा। इन चार क्षेत्रों में कास्तील एवं अरागान प्रमुख राज्य थे, जबकि ग्रेनेडा में मुस्लिम मूरों का अधिकार था। इन चारों क्षेत्रों में शासन, परम्परा एवं सांस्कृतिक भिन्नता का चिन्ह स्पष्ट था। पुर्नजागरण के साथ यूरोप में भावात्मक स्तर पर राष्ट्रीयता की चेतना पनप रही थी, जिससे स्पेन भी अछूता नहीं था। पन्द्रहवीं शब्दाती में स्पेन के दो प्रमुख राज्यों कास्तील एवं अरागान के मध्य वैवाहिक सम्बन्ध (1469) ने स्पेन में राष्ट्रीय राज्य के उदय का मार्ग प्रशस्त किया। कास्तील की उत्तराधिकारी ईसाबेला एवं अरागान के उत्तराधिकारी फर्डिनेंड के वैवाहिक सम्बन्ध से कास्तील एवं अरागान का एकीकरण हो गया। 1492 में फर्डिनेंड एवं ईसाबेला की संयुक्त सेनाओं ने मूरों को पूर्णरूपेण परास्त करते हुए ग्रेनेडा पर अधिकार स्थापित कर लिया। ग्रेनेडा पर अधिकार के फलस्वरूप स्पेन को पूर्ण धार्मिक एवं राष्ट्रीय एकता प्राप्त हुई।

फर्डिनेंड एवं ईसाबेला की गृह नीति स्पष्टतः दो तत्वों पर निर्भर थी – पहली राज्य के समस्त राजनीतिक अधिकारों को अपने अधीन केन्द्रित करना तथा दूसरा सम्पूर्ण राज्य में धार्मिक एकता स्थापित करना। इन्होंने राजपद की गरिमा वृद्धि हेतु एक शक्तिशाली केन्द्रिय शासन स्थापित किया, उदण्ड एवं स्वतन्त्र सामन्तों को दबाकर राज्य में शान्ति एवं सुव्यवस्था स्थापित की एवं लुटेरों का दमन कर व्यापार व वाणिज्य तथा आवागमन के साधनों का विकास किया। फर्डिनेंड एवं ईसाबेला ने एक निरंकुश राज्य की स्थापना के लिये बड़े सामन्तों की शक्ति घटा दी, कास्तील की प्रतिनिधि सभा की महत्ता सीमित कर दी गयी, अमीरों के पेंशन एवं अनुदान समाप्त कर दिये तथा शक्ति से सभी वर्गो से कर वसूल किया जाने लगा। व्यापार एवं वाणिज्य को राजकीय संरक्षण दिया गया, जिससे मध्यम वर्ग राजतन्त्र का समर्थक हो गया।

फर्डिनेंड एवं ईसाबेला ने धार्मिक एकता के आधार पर सम्पूर्ण राज्य में राजनीतिक एकता स्थापित करने की नीति अपनाई। उन्होंने रोमन कैथोलिक चर्च एवं पोप के प्रति अगाध श्रद्धा एवं निष्ठा दिखाई जिससे पोप ने इनको 'कैथोलिक सम्राट' की उपाधि प्रदान की। वस्तुतः राजशक्ति की वृद्धि एवं पुष्टि हेतु इन्होंने चर्च को अपना मुख्य अस्त्र बनाया। राज्य के धर्म विरोधियों का पता लगाने, उन्हें दण्ड देने, नास्तिकता का दमन करने, कैथोलिक धर्म की रक्षा करने तथा राजा की शक्ति की वृद्धि हेतु 1480 मे इन्क्वीजीशन (Inquisition) नामक धार्मिक न्यायालय की स्थापना की, जिससे मूरों एवं यहूदियों का समूल नाश सम्भव हो सका।

यूरोप के मध्य स्पेन को महत्वपूर्ण स्थान दिलाने के लिये फर्डिनेंड ने अपनी पुत्रियों के विवाह का सफल उपयोग किया, इसने अपनी बड़ी पुत्री जोआना का विवाह पवित्र रोमन साम्राज्य के युवराज फिलिप से कर दिया, दूसरी पुत्री मेरिया की शादी पुर्तगाल के शासक से कर दी तथा छोटी पुत्री कैथरिन की शादी

इंग्लैण्ड के युवराज आर्थर एवं आर्थर की मृत्यु के पश्चात् हेनरी अष्टम से कर दी। इस वैवाहिक सम्बन्ध से स्पेन का सम्बन्ध आस्ट्रिया, इंग्लैण्ड एवं पुर्तगाल से मधुर हो गया तथा देश के गौरव में अभूतपूर्व वृद्धि हुई।

स्पेन के एकीकरण व राष्ट्रीयकरण के मार्ग में अन्तिम महत्वपूर्ण कदम सन् 1512 ई0 में उठाया गया, जब स्पेन ने फ्रांस को परास्त कर नैवारे पर अधिकार स्थापित कर लिया। ईसाबेला और फर्डिनेन्ड के संयुक्त प्रयासों के परिणामस्वरूप आधुनिक एवं शक्तिशाली स्पेन राष्ट्र का निर्माण संभव हुआ। किन्तु आने वाले समय में स्पेन के राजा अपनी राजवंशी महात्वाकांक्षाओं में फंस गये, जिसने अगली दो शताब्दियों तक थका देने वाले संघर्षो में स्पेन को व्यस्त रखा।

फर्डिनेंड एवं ईसाबेला ने यूरोपीय राजनीति में अपनी महत्वपूर्ण स्थिति बनाने के लिए अपना ध्यान वैदेशिक तथा औपनिवेशिक विस्तार की ओर आकृष्ट किया। कोलम्बस की खोज ने अमेरिका में वृहत्तर स्पेनिस साम्राज्य स्थापित करने का मार्ग प्रशस्त किया। शीघ्र ही अमेरिका के अधिकांश भाग पर स्पेन का प्रभुत्व स्थापित हो गया। इन प्रदेशों में सोने–चाँदी की बहुलता थी। इस प्रकार स्पेन को एक ऐसा कल्पवृक्ष प्राप्त हुआ जिसने उसको आधुनिक काल के प्रारम्भ में यूरोप के सबसे शक्तिशाली एवं उन्नति देशों की श्रेणी में ला खड़ा करने में उल्लेखनीय योगदान दिया।

फर्डिनेन्ट एवं ईसाबेला ने राज्य के समस्त राजनीतिक अधिकारों को केन्द्रित करने तथा समस्त राज्य में धार्मिक एकता स्थापित करने की नीति अपनायी। उन्होंने राजपद की गौरव वृद्धि के लिए एक शक्तिशाली केन्द्रित शासन स्थापित किया। उदण्ड स्वतन्त्र सामन्तों को दबाकर राज्य में शान्ति एवं सुव्यवस्था स्थापित की एवं लुटेरों का दमन कर व्यापार वाणिज्य तथा आवागमन के साधनों में वृद्धि की।

यह उल्लेखनीय तथ्य है कि 14वीं एवं 15वीं शताब्दी में तुर्को के बढ़ते प्रभाव से आक्रान्त ईसाई जगत में जहाँ पूर्व में मुसलमानों का प्रभाव बढ़ता जा रहा था और साम्राज्य की राजधानी वियना भी सुरक्षित नहीं थी, वहाँ पश्चिम में स्पेन के सैनिकों ने मुसलमानों के सदियों पुराने प्रभाव का अन्त कर दिया और ईसाई प्रभाव की पुर्नस्थापना की। कोई भी अन्य वस्तु स्पेनिस राजतन्त्र के लिए इससे बढ़कर गौरव और उन्नति नहीं ला सकती थी। पोप अलेक्जेण्डर षष्ठ ने फर्डिनेन्ड एवं ईसाबेला को कैथोलिक राजाओं की उपाधि प्रदान की।

फर्डिनेंड की मृत्यु के बाद उसकी बड़ी पुत्री का पुत्र चार्ल्स प्रथम (1516–1556 ई0) के नाम से स्पेन की गद्दी पर बैठा। 1519 ई0 में चार्ल्स–। पवित्र रोमन साम्राज्य का सम्राट चुना गया। पवित्र सम्राट के रूप में वह चार्ल्स पंचम कहलाया। उसने स्पेन के अतिरिक्त पवित्र रोमन साम्राज्य, नीदरलैण्ड्स, बर्गडी, नेपल्स, सिसली, सार्डीनिया, सम्पूर्ण स्पेनिश अमेरिका, फिलिपाइन्स और अफ्रीका के कुछ भागों पर शासन किया। निःसन्देह उसने दुनिया के सबसे बड़े भू–भाग पर शासन किया। चार्ल्स के शासनकाल में स्पेन अपने गौरव की पराकष्ठा पर पहुँचा। किन्तु यह पराकष्ठा स्थायी नहीं रह सकी।

चार्ल्स पंचम को सौभाग्य से जो दैत्याकार राज्य उत्तराधिकार में प्राप्त हुआ वह फूलों की सेज नहीं अपितु कांटों से भरा ताज था, य़द्यपि उसमें समस्याओं से जूझने की क्षमता एवं इच्छा दोनो थी, किन्तु जीवन भर जूझने के बावजूद वह अपनी समस्याओं को घटा नहीं सका। अन्ततः उसने साम्राज्य का विभाजन कर स्वयं गद्दी छोड़ दी। स्पेन, नीदरलैण्ड, इटालियन राज्य एवं अमेरिकी साम्राज्य अपने पुत्र फिलिप तथा मध्य यूरोप का क्षेत्र अपने अनुज फर्डिनेंड को दे दिया। फिलिप की मृत्यु के बाद स्पेन लगातार पतनोन्मुख होता गया। फिलिपि–चतुर्थ के निःसन्तान मरने से स्पेन की गद्दी पर छिड़े उत्तराधिकार का लाभ फ्रांस के सम्राट लुई चौदहवें ने उठाया। उसने अपने वंश के आजू को स्पेन का शासक बनाया। इस प्रकार स्पेन में भी बूर्वो वंश की स्थापना हुई एवं स्पेन में चार्ल्स एवं फिलिप का राज वंश समाप्त हो गया।

स्पेन जिस तेजी से यूरोप के आसमान में चमका उसी तेजी से वह यूरोप से विलीन भी हो गया। वास्तविकता यह है कि स्पेन में महानता का आधार ही नहीं बना। किसी देश की वास्तविक महानता वहां की स्थायी आर्थिक उपलब्धियों पर निर्भर करती है। प्रकृति ने ही स्पेन को गरीब बनाया किन्तु वहां के निवासियों

ने भी अपने कर्म से इस कमी को पूरी करने का प्रयास नहीं किया। ऐसा लगता है कि सोलहवीं शताब्दी में स्पेन यूरोप का सबसे शक्तिशाली देश हो गया किन्तु अचानक प्राप्त महानता के बोझ से ऐसा दबा कि इस भार से कभी भी मुक्त न हो सका और आज भी यूरोप का कमजोर एवं पिछड़ा देश बना हुआ है।

7.5.4 रूस

आज का रूस दुनिया का सबसे बड़ा देश है। केवल भूक्षेत्र की दृष्टि से ही नहीं अपितु शक्ति की दृष्टि से भी। आधुनिक काल का आरम्भ होने से पहले यही रूस मस्कोबी का छोटा सा राज्य था जो प्रायः मंगालों से त्रस्त रहता था। यूरोप व एशिया को विभाजित करने वाले यूराल पर्वत के पश्चिम में तथा पश्चिमी यूरोप से कटा हुआ यूरोप के सुदूर उत्तर पूर्व में स्थित यह राज्य प्रारम्भ में यूरोपीय राजनीति एवं संस्कृति में अत्यन्त हीन अथवा महत्वहीन समझा जाता था।

रूस में एरिक या रूरिक वंश के शासकों के पांच शताब्दियों के शासन के पश्चात् रूस का विस्तार एवं ईसाईकरण हुआ। किन्तु तेरहवीं सदी में एशिया के बर्बर मुगल तातारियों ने रूस पर भयंकर आक्रमण किये। मुगल तातारियों ने प्रायः एक सदी तक पश्चिमी रूस, तो दो सदियों तक पूर्वी रूस पर अपना अधिपत्य कायम रखा। अन्त में पन्द्रहवीं सदी के उत्तरार्द्ध में इवान महान (1462–1505) ने मुगल तातारियों को रूस से खदेड़ कर रूस को इनकी दासता से मुक्त किया। इवान महान ने अन्तिम रोमन सम्राट कान्स्टेन्टाइन ग्यारहवां की भतीजी के साथ शादी की और जार अथवा सम्पूर्ण रूस के सम्राट की पदवी धारण की। जार शाही की स्थापना के अतिरिक्त ईवान महान ने पश्चिमी योरप के देशों से घनिष्ठता बढ़ाने का प्रयास किया, साथ ही रूस में एक केन्द्रिय तथा शक्तिशाली जारशाही की स्थापना हेतु रूसी सामन्तों व रूढ़िवादी चर्च को अपने नियन्त्रण में कर लिया। इवान महान की भांति इवान चतुर्थ अथवा ईवान भयंकर (1533–1584) ने भी अपने दीर्घकालीन शासन में रूस के साम्राज्य विस्तार के साथ निरंकुश जार शाही की स्थापना एवं दृढ़ता का अथक प्रयास किया। निरंकुश एवं सुदृढ़ जार शाही की स्थापना के उद्देश्य से उसने रूसी रूढ़िवादी चर्च को कुस्तुतुनिया के धर्माध्यक्ष के नियन्त्रण से मुक्त कर अपने नियन्त्रण में कर लिया।

यद्यपि इवान महान एवं इवान भयंकर के शासन काल में रूसी जारशाही की शक्ति वृद्धि और रूसी सीमा की पर्याप्त वृद्धि हुई तथापि सास्कृतिक विकास में विशेष प्रगति न हो सकी। इवान भयंकर की मृत्यु के बाद 30 वर्षो तक रूस में अराजकता एवं गृह युद्ध की स्थिति रही इस अराजकता को समाप्त करने के लिये सामन्तों ने काफी द्वन्द के बाद 1613 में सोलह वर्षीय माइकल रोमोनोव को रूस का जार बनाया। फलतः रूस में एक नये राजवंश (रोमोनोव) का शासन प्रारम्भ हुआ। इस वंश का शासक पीटर महान ही आधुनिक रूस के जन्मदाता कहलाये।

पीटर महान का शासनकाल (1682–1725 ई0) रूस के लिए महत्वपूर्ण सिद्ध हुआ। इतिहासकार हेजन के शब्दों में पीटर की गणना विश्व इतिहास के अत्यधिक कर्मठ और शक्तिशाली शासकों में है।पीटर रूस को एक बड़ी शक्ति बनाना चाहता था। पीटर का कहना था कि ''पश्चिम के साथ स्वतंत्रता पूर्वक और सरलता से मिलने–जुलने के लिए यह आवश्यक है कि रूस कहीं एक खिड़की खोले, तभी उसमें बाहर से प्रकाश आ सकेगा।'' अर्थात् रूस के पास यूरोपीय समुद्रों में स्थित एक ऐसा बन्दरगाह होना चाहिए जो पूरे वर्ष जहाजों के उपयोग में आ सके। इसलिए पीटर की विदेश नीति का मुख्य उद्देश्य रूस के लिए पश्चिम की ओर ''खुली खिड़की'' या समुद्रतट प्राप्त करना था।

सन् 1697 में पीटर पश्चिमी यूरोप की यात्रा पर गया। इस यात्रा में उसका उद्देश्य तुर्की के विरूद्ध यूरोप के ईसाई राज्यों से सहायता प्राप्त करना था। यात्रा का असर जबरदस्त हुआ, क्योंकि पीटर इस इरादें को मन में भर कर लौटा कि वह अपने देश को पश्चिम प्रणाली के अनुरूप ढालेगा। सदियों से बाकी दुनिया से कटा मस्कवी राज्य अपने द्वार यूरोप के लिए खोल देने की तैयारी में खड़ा था। पीटर ने अनुभव किया कि पश्चिम यूरोप रूस की अपेक्षा कहीं ज्यादा समृद्ध, शिक्षित और शक्तिशाली था। उसने रूसी विचारों एवं प्रथाओं का खण्डन किया। उसने समाज में सभ्य आचार–व्यवहार पर जोर दिया। स्त्रियों को प्रेरित किया कि वे पर्दा

प्रथा छोड़ कर पाश्चात्य वेशभूषा में बाहर आएं। बड़े–बड़े सामन्तों को यूरोपीय सभ्यता सिखाई गयी। उसने अपने दरबारियों को लम्बा रूसी चोंगा पहनने बन्द करने और छोटे यूरोपीय वस्त्र पहनने एवं दाढ़ी साफ करने का हुक्म दिया, जो लोग दाढ़ी रखना चाहते थे, उन्हें कर देने के लिए विवश किया।

पीटर ने रूस में यूरोपीय शिक्षा पद्धति को लागू किया। नगरों में स्कूल खोले गये, इंजीनियरिंग और चिकित्सा विद्यालयों की स्थापना की गयी और फ्रेंच को शिक्षा का माध्यम बनाया गया। पीटर के द्वारा एक विज्ञान अकादमी की स्थापना के लिए 1724 ई0 में निर्देश दिये गये थे, जिन्हें उसकी मृत्यु के बाद पूरा किया गया। उसके शासनकाल में ही सर्वप्रथम रूसी समाचार–पत्र का प्रकाशन शुरू हुआ और सार्वजनिक थियेटर खोला गया। देश में यूरोपीय पंचाग लागू किया गया। पीटर रूस का ऐसा पहला शासक था, जिसने आर्थिक श्रोत में एक संगठित नीति अपनायी। उसने कृषि का महत्व समझा और उसे प्रोत्साहित किया। उसके प्रोत्साहन से उद्योगों का विकास हुआ।

पीटर ने नियमित सेना की स्थापना की और उसके समुचित प्रशिक्षण की व्यवस्था की। किसानों के हष्ट–पुष्ट लड़के रूस की स्थायी सेना में भर्ती किये जाने लगे। सैनिकों के लिए यूनीफार्म की व्यवस्था की गयी, जर्मनी का अनुसरण करके उसने सेना एवं नौसेना में वृद्धि की, उसे अस्त्र–शस्त्रों से सुसज्जित किया और नये ढंग की शिक्षा दी।

इसी सैनिक शक्ति के बल पर पीटर ने यूरोप की ओर खिड़की खोलने का प्रयत्न किया। पीटर यह खिड़की काला सागर अथवा वाल्टिक सागर की ओर खोलना चाहता था। प्रारम्भ उसने काला सागर की ओर से करते हुए तुर्की से आजोव का बन्दरगाह छीन लिया किन्तु काला सागर एवं भूमध्य सागर को जोड़ने वाले क्षेत्रों पर टर्की का अधिकार था, जिससे रूसी सेना भूमध्य सागर में नहीं जा सकती थी। इसीलिये तुर्को ने आजोव पर पुनः कब्जा करते हुए पीटर के काला सागर में खिड़की खोलने के अभियान को पूरा नहीं होने दिया। काला सागर की ओर से असफल होने पर उसने पश्चिम में वाल्टिक सागर की ओर अपना ध्यान लगाया तथा अपूर्व धैर्य, साहस और वीरता के बल पर स्वीडन को परास्त कर वाल्टिक सागर के पूर्वी तट का अधिकांश हिस्सा जीत लिया। स्वीडन के स्थान पर अब रूस उत्तर की महान शक्ति के रूप में प्रतिष्ठित हो गया।

इतिहासकार हेज ने लिखा है – ''रूस के सैन्यवादी शासन का निर्माण, रूसी चर्च की स्वतन्त्रता व सत्ता का अन्त, रूसी समाज का कायाकल्प, रूसी रहन–सहन, व्यवहार एवं परम्पराओं का यूरोपीयकरण, सुदृढ़, निरंकुश जारशाही की स्थापना, साम्राज्यवादी विस्तार, इत्यादि कार्यो का श्रेय पीटर महान को ही प्राप्त है।

पीटर की मृत्यु के बाद के 40 वर्षो में रूस में पुनः गतिरोध खड़ा हो गया ऐसा लगता था कि पीटर की देन समाप्त हो जायेगी सुधारों की गति रूक गयी थी, किन्तु रूस के भाग्य में नियति ने अप्रत्याशित रूप से कैथरिन जिसे कैथरिन द्वितीय महान (1762–96) भी कहा जाता है, को गद्दी दिला दी। एक जर्मन राजकुमारी होते हुए भी जरीना की तरह 30 वर्षो तक रूस पर निरंकुश शासन किया। जीवन में किसी नैतिकता की परवाह किये बिना उसने रूस को इतना बदल दिया कि इतिहासकारों ने उसे कैथरिन महान कहना शुरू कर दिया। विदेश नीति में कैथरिन को सर्वाधिक सफलता प्राप्त हुई। उसने पीटर महान के अधूरे कार्यो को पूर्ण करते हुए काला सागर व भूमध्य सागर की ओर खुली खिड़की प्राप्त की। पोलैण्ड के तीनो विभाजनों में मुख्य भूमिका निभाते हुए कैथरिन ने पोलैण्ड का विस्तृत भाग हड़प लिया। अब योरोपीय मामलों में रूस का प्रभाव सुस्पष्ट हो गया। कैथरिन का कथन ''मैं एक गरीब लड़की की भांति तीन चार वस्त्रों के साथ रूस आयी और रूस ने मुझे बहुमूल्य उपहार प्रदान किया, परन्तु अब मैं उसे आजोव, क्रीमिया और यूक्रेन देकर उस ऋण से मुक्त हूँ।'' संक्षेप में पीटर महान ने रूस को एक यूरोपीय राज्य बनाया और कैथरिन ने उसे एक शक्तिशाली और प्रभावशाली निरंकुश यूरोपीय राज्य बना दिया।

7.5.5 प्रशा

पन्द्रहवी शताब्दी के उत्तरार्द्ध में जर्मनी एवं पवित्र रोमन साम्राज्य समानार्थी थे। यह तथ्य जर्मनी के राष्ट्रीयकरण व एकीकरण में बड़ा घातक सिद्ध हुआ। आधुनिक युग के प्रारम्भ में जर्मनी में लगभग 300 छोटी बड़ी परस्पर विरोधी स्वतन्त्र रियासतें थी, जिनका नाम मात्र का प्रधान पवित्र रोमन सम्राट था। कालान्तर में कुछ जर्मन सामान्तों अथवा राजाओं ने अपनी शक्ति इतनी बढ़ा ली कि वे सम्राट का निर्वाचन करने लगे तथा निर्वाचक कहलाये। इन निर्वाचकों में एक बैन्डनवर्ग का राजा भी था। ब्रैन्डनवर्ग म्यूज एवं एल्व नदियों के बीच, स्लाव जाति की प्रगति एवं हमलों से रक्षा हेतु दशवीं शताब्दी में बनाया गया छोटा सा सुरक्षा चौकी राज्य था। इसी ब्रैन्डनवर्ग की डची (जो आगे प्रशा कहलाया) के नेतृत्व में जर्मनी का एकीकरण सम्पन्न हुआ।

1415 में पवित्र रोमन सम्राट ने ब्रैन्डनवर्ग का शासनाधिकार होहेलजोलर्न राजकुमार फ्रेडरिक को सौंपा, जिससे ब्रैन्डनवर्ग में होहेलजोलर्न वंश की स्थापना हुई। इस वंश के फ्रेडरिक विलियम (1640–88) ने (जो इतिहास में महान निर्वाचक के नाम से प्रसिद्ध है) सम्पूर्ण जर्मनी में अपने राज्य तथा वंश की मर्यादा में बड़ी वृद्धि की। वस्तुतः फ्रेडरिक विलियम ब्रैन्डनवर्ग की प्रभुसत्ता का वास्तविक संस्थापक था। फ्रेडरिक जब गद्दी पर बैठा तो उसके राज्य में तीन अलग–अलग ईकाईयां (ब्रैन्डनवर्ग क्लीव्स और पूर्वी प्रशा) थी। इन इकाईयों का अलगाव एक गम्भीर समस्या थी। दूरदर्शी फ्रेडरिक विलियम ने सर्वप्रथम इन इकाईयों के केन्द्रियकरण एवं प्रशासनिक संगठन को एक करने की अथक चेष्ठा की। इसने स्थानीय निकायों, सामन्तों का दमन कर एक केन्द्रिय सेना का निर्माण किया। तीस वर्षीय युद्ध से ब्रैन्डनवर्ग को अपार क्षति पहुंची थी। अतः आवश्यकतानुकूल फ्रेडरिक विलियम ने आर्थिक क्षेत्र में बड़े प्रशंसनीय सुधार किये।

उसने कृषि एवं उद्योग को प्रोत्साहन देने के लिये नहरों का निर्माण, दलदल सुखाने तथा पशुपालन की शिक्षा की व्यवस्था की, स्थानीय चुंगियों को हटाकर तथा यातायात के साधनों का विकास कर देश के उद्योग धन्धों एवं व्यापार वाणिज्य को प्रोत्साहित किया। फ्रेडरिक विलियम अपने समकालीन लुई चौदहवें से ज्यादा दूरदर्शी था, धार्मिक रूप से उदार एवं प्रोटेस्टेंट होते हुए भी उसने कैथोलिकों, विदेशी प्रोटेस्टेंटों एवं यहूदियों को बर्लिन में बसने की अनुमति इस कारण दी कि ये लोग मेहनती एवं कुशल कारीगर थे, इनके सहयोग से ही वैण्डनवर्ग के उद्योग धन्धों एवं व्यापार वाणिज्य की आशातीत उन्नति सम्भव होगी।

फ्रेडरिक विलियम ने अपने शासन काल में सैन्य शक्ति में भी अपूर्व वृद्धि की। इसके पास 30 हजार सुशिक्षित एवं दक्ष सैनिक थे, यह क्षेत्र जर्मनी का राजपूताना था, जहां के योद्धा सारे यूरोप में विख्यात थे। इसी सेना के बल पर फ्रेडरिक विलियम ने यूरोपीय युद्धों में बड़ी सफलता एवं प्रसिद्धि प्राप्त की। फ्रेडरिक विलियम के पुत्र फ्रेडरिक–।।। (1688–1713) अपने पिता के समान योग्य नहीं था, किन्तु 1701 में सम्राट लियोपोल्ड ने विवश होकर इसे 'प्रशा का राजा' स्वीकार कर लिया। 1713 में यूट्रेक्ट की संधि से यूरोप ने प्रशा के राजतन्त्र को मान्यता दे दी। अब ब्रैन्डनवर्ग प्रशा राज्य के नाम से जाना जाने लगा। यही फ्रेडरिक–।।। की सबसे बड़ी सफलता थी।

फ्रेडरिक–।।। के पश्चात् इसका पुत्र फ्रेडरिक विलियम प्रथम (1713–1740) राजा बना। जिस प्रकार फ्रेडरिक महान निर्वाचक ने प्रशा के गौरव की नींव डाली, उसी प्रकार फ्रेडरिक विलियम–। ने प्रशा की राजनीतिक संस्थाओं एवं सेना का निर्माण किया। यह प्रबुद्ध निरंकुश राजतन्त्र का प्रबल समर्थक था। इस हेतु उसका प्रथम उद्देश्य एक विशाल शक्तिशाली तथा सुसंगठित सेना का निर्माण करना था, जिसके लिये उसने राजकीय मितव्ययता करते हुए अपनी सेना की संख्या 83 हजार कर दी। उसके सैन्य सुधारों के परिणामस्वरूप कार्य कुशलता की दृष्टि से यह सेना यूरोप की सर्वश्रेष्ठ सेना हो गयी।

फ्रेडरिक विलियम–। की मृत्यु के उपरान्त उसका पुत्र फ्रेडरिक–।। अर्थात फ्रेडरिक महान (1740–1786) प्रशा का शासक बना। यह एक ऐसा राजकुमार था जिसे तलवार से अधिक बांसुरी पसंद थी, जो शिकार खेलने की जगह जंगलों और खेतों में प्रकृति के लुभावने रहस्यों में खोया रहता था, इसे कविता

संगीत और दर्शन से प्रेम था और पिता के कट्टर अनुशासन एवं नियंत्रण से घृणा थी। अपने पिता के कठोर अनुशासन एवं नियंत्रण से ऊब कर फ्रेडरिक महान ने अपने मित्र के साथ प्रशा से भाग निकलने की योजना बनाई, परन्तु योजना असफल हुई और दोनो को करावास में बन्द कर दिया गया। कुछ दिन बाद इसके मित्र को मृत्यु दण्ड दिया गया तथा इस दण्ड को देखने के लिये फ्रेडरिक को बाध्य किया गया। राजकुमार फ्रेडरिक को विवश होकर एक सेवक प्रजा व पुत्र के रूप में कर्तव्यपालन की शपथ लेनी पड़ी। इसी शर्त पर उसे कारावास से मुक्ति मिली। 1740 में जब उसका पिता मरा और वह शासक बना तो कोई आश्वस्त नहीं था कि वह क्या करेगा लेकिन लगभग 50 वर्षो के शासन के बाद जब फ्रेडरिक महान की मृत्यु हुई तो प्रशा की गणना यूरोप के सबसे शक्तिशाली राज्यों में होनी लगी।

प्रशा के इतिहास में फ्रेडरिक महान का स्थान अत्यन्त ऊँचा है। इसके शासन काल का पूर्वाद्ध युद्धों से परिपूर्ण है, परन्तु उसका उत्तरार्द्ध प्रजा के हित में किये गये सुधारों से पूर्ण है वह लुई चौदहवें के विपरीत स्वयं को 'प्रजा का प्रथम सेवक' समझता था तथा उसकी नीति धार्मिक सहिष्णुता की थी।

फ्रेडरिक महान के समय प्रशा का विकास चरम सीमा पर पहुँच गया। अपने शासन के प्रारम्भ से ही वह युद्धरत हो गया था, लेकिन उसने कृषि एवं उद्योग को भुलाया नहीं। किसानों और जमींदारों को वैज्ञानिक ढंग से खेती करने के लिए प्रोत्साहित किया। पहली बार आलू की खेती बड़े पैमाने पर शुरू की, जो आज भी जर्मन लोगों का मुख्य भोजन है। पशुपालन को बढ़ावा दिया गया। वह कर वसूल करने वाले कर्मचारियों पर कड़ी नजर रखता था। वह स्वयं एक–एक पैसे का हिसाब रखता था, चाहे उसका निजी खर्चा हो या राज्य का, इसलिए दूसरे भी अपव्यय करने से डरते थे। सांस्कृतिक विषयों में उसकी सहज रूचि थी। उसके अनुरोध पर ही बाल्तेयर उसके दरबार में मित्र की भाँति रहने लगा, यद्यपि बाद में दोनो में बन न सकी। खाने की मेज पर वह राजनीति से अधिक साहित्य की चर्चा करना पसन्द करता था। राजधानी बर्लिन में अकादमियाँ स्थापित हुई, और लेखकों, कलाकारों को संरक्षण दिया जाने लगा। विज्ञान में उसकी विशेष रूचि थी, इसलिए ऐसी परम्पराएं डाली गयी जिनका विकास होने पर दुनिया के सबसे बड़े वैज्ञानिक देशों में प्रशा का नाम गिना जाने लगा।

विदेश नीति के मामलों में फेडरिक का उद्देश्य प्रशा की सीमाओं का विस्तार करना था। फ्रेडरिक ने साइलेशिया को आस्ट्रिया से बलात् छीन लिया। प्रशा की समृद्धि के लिए साइलेशिया का प्रदेश बहुत महत्वपूर्ण हो सकता था। सप्तवर्षीय युद्ध की समाप्ति के नौ वर्ष पश्चात् पोलैण्ड का प्रथम विभाजन प्रशा, आस्ट्रिया और रूस के मध्य हो गया। फेडरिक को इस विभाजन से पश्चिमी पोलैण्ड का क्षेत्र मिला और प्रशा की सीमाएं पूर्व में रूस के करीब पहुँच गयी।

यह तथ्य है कि फ्रेडरिक दुनिया के कुछ सबसे प्रसिद्ध शासकों में है। जर्मनी को एक राष्ट्रीय शक्ति के रूप में विकसित करने के कारण जर्मन इतिहासकारों ने इसकी अत्यधिक प्रशंसा की है। वह एक कुशल सैनिक, दक्ष सेनानायक, चतुर राजनीतिज्ञ, महान् सुधारक और प्रबद्ध निरंकुश शासक था। फेडरिक ने सबसे महत्वपूर्ण कार्य यह किया कि उसने यह सिद्ध कर दिया कि जर्मनी में आस्ट्रिया का एकाधिकार नहीं चल सकता।

प्रशा को पराजित करने के बाद नेपोलियन सारे जर्मनी के शासकों द्वारा लाये गये उपहारों के बीच घूम रहा था। सारा हाल सजे सजाये व्यक्तियों बहुमूल्य उपहारों से जगमगा रहा था। दुनिया की दौलत उसके कदमों में थी लेकिन नेपोलियन केवल एक वस्तु के सामने रूका और उसने उसे आदर पूर्वक उठाकर अपने कमर में बांध लियां वह वस्तु थी प्रशा के पूर्व शासक फ्रेडरिक महान की तलवार। नेपोलियन महान जैसा असाधारण विजेता ने फ्रेडरिक को अकारण यह सम्मान नहीं दिया था।

एगेल्स ने ठीक ही लिखा है कि– 'विस्मार्क ने फ्रेडरिक से ही सीखा था कि पूरी तरह अनैतिक होते हुए भी कैसे जन्मभूमि के परम्पराओं के प्रति सच्चे लगाव की चेतना से अपने को गौरवान्वित समझा जा सकता है। फ्रेडरिक महान की ही राह पर चलते हुए विस्मार्क ने प्रशा के नेतृत्व में जर्मनी को एक कर दिया।

7.6 समीक्षा

दुर्भाग्य से राष्ट्रीय राज्यों का उदय यूरोप में शांति स्थापित नहीं कर सका। मध्यम वर्ग द्वारा समर्थित राष्ट्रीय राजाओं ने सामन्ती युद्धों को समाप्त करने तथा आंतरिक शान्ति और व्यवस्था के नाम पर युद्ध किया। परन्तु सामन्ती युद्धों के बाद राष्ट्रीय और वंशानुगत युद्धों की शुरूआत हुई। आधुनिक काल के प्रारम्भ में चार शक्तिशाली राष्ट्रीय राजतंत्र– स्पेन, पुर्तगाल, फ्रांस और इंग्लैण्ड का उदय हुआ और इन्होंने यूरोपीय राजनीति पर प्रधान्य कायम किया।

सोलहवीं एवं सत्रहवीं शताब्दियों में यूरोप में उदीयमान राष्ट्रीय शासकों ने राष्ट्रीय चेतना की नींव रखी। यही चेतना राष्ट्रीय राज्यों के निर्माण मे सहायक सिद्ध हुई। युद्धों में बढ़ते व्यय ने सभी देशों में कर को अधिकाधिक बढ़ा दिया था एवं इस प्रश्न को लेकर राजतंत्रीय राज्यों का समाज की नवोदित शक्तियों के साथ संघर्ष आरम्भ हुआ। नवोदित वर्ग कर की सीमा सीमित रखना चाहते थे। करारोपण के प्रश्न को लेकर सभी जगह शासकों का विरोध हो रहा था। किन्तु लगभग सभी स्थानों पर विरोध को संगठित रूप देने की सुविधाएं उपलब्ध न थी। इंग्लैण्ड एक अपवाद था। वहाँ नवोदित वर्ग जिसमें व्यापारी, पढ़ा–लिखा मध्यम वर्ग, कुछ भू–स्वामी आदि थे, ने राजतंत्र पर अन्य देशों की तुलना में शीघ्र ही नियंत्रण स्थापित कर लिया। राष्ट्रीय राज्यों के उदय से कुछ सुपरिणाम भी निकलें। सामन्तवाद समाप्त हुआ। आर्थिक विकास के कारण उत्पादन बढ़ा। तकनीकी क्षेत्र में नवीन प्रणालियाँ खोजी गयी। अब राष्ट्रों की सीमाएं भी अधिकाधिक निश्चित और तर्क संगत हो गयी। अतः हमें यह भी नहीं भूलना चाहिए कि आज की राष्ट्रीय चेतना कल के निरंकुश राष्ट्रीय राज्यों की ही देन है। राष्ट्रीय राज्यों के उदय ने यूरोप में कई परिवर्तनों को जन्म दिया, व्यापारिक क्रान्ति से वाणिज्यिक क्रान्ति और इससे आगे आद्योगिक क्रान्ति। औद्योगिक क्रान्ति के फलस्वरूप उपनिवेशीकरण को अत्यधिक बल मिला और इसी औपनिवेशिक शासन के प्रतिरोध में यूरोप के अतिरिक्त अमेरिका, एशिया, अफ्रीका में भी राष्ट्रीयता की चेतना का उदय हुआ।

7.7 निरंकुशता का पतन

अतः अठारहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में लोकप्रिय सरकारों की माँग ने निरंकुशता की जड़े कमजोर कीं। कालान्तर में जनता ने निरंकुशता पर सीधा प्रहार करना शुरू कर दिया। जनता ने अनुचित कानूनों तथा राजा के असीमित अधिकारों का विरोध करना प्रारम्भ कर दिया। विरोध करने वालों में समाज के वे हिस्से भी शामिल थे, जिन्होंने पहले शक्तिशाली राजाओं का समर्थन किया था। जनता ने शासकों के निरंकुश अधिकारों में कटौती तथा राजसत्ता में हिस्सा देने की माँग शुरू की। शासकों और जनता का परस्पर विराधे सबसे पहले इंग्लैण्ड में सामने आया। इसके बाद अमेरिका की क्रांति एवं फ्रांस की क्रांति ने निरंकुशता को एक जोरदार धक्कता पहुँचाया।

7.8 स्वमूल्यांकित प्रश्न

निम्न प्रश्नों में सही और गलत का निशान लगायें –

प्र01– शतवर्षीय युद्ध इंग्लैण्ड एवं फ्रांस के मध्य हुआ था। ( )

प्र02– ईसाबेला एवं फर्डिनेन्ड स्पेन के शासक थे। ( )

प्र03– लुई ग्यारहवाँ प्रशा का शासक था। ( )

प्र04– पीटर महान को आधुनिक रूस का जन्मदाता कहा जाता है। ( )

प्र05– रिशलू एवं मेजारिन ने फ्रांस में निरंकुश राजतंत्र बनाने में सर्वाधिक भूमिका निभाई ( )

प्र06– सामन्तवाद राष्ट्रीय राज्यों के उदय में बाधक था। ( )

निम्न प्रश्नों के उत्तर दीजिए –

प्र07– निरंकुश वाद की प्रमुख विशेषताएं क्या हैं? टिप्पणी लिखें।

प्र08– निरंकुश राष्ट्रीय राज्य के उदय के कारणों पर प्रकाश डालिये।

प्र09– निरंकुशता का पतन क्यों हुआ?

प्र010– आधुनिक रूस के निर्माण में पीटर महान एवं कैथरिन की भूमिका की जाँच करें?

प्र011– फ्रेडरिक महान की नीतियों एवं कार्यो ने प्रशा को आधुनिक यूरोप का एक शक्तिशाली राष्ट्र बनाया? इस कथन की समीक्षा करें।

प्र012– राष्ट्रीय राज्यों के उदय में मध्यम वर्ग भूमिका पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिये।

7.9 सारांश

रोमन साम्राज्य एवं पोपशाही की अवनति के परिणामस्वरूप यूरोपीय राजनैतिक पटल पर महत्वपूर्ण परिवर्तन हो रहे थे। सामन्तवाद के पतन, पुर्नजागरण एवं धर्म सुधार की कड़ी में ही नवीन निरंकुश राजतन्त्र का बीज भी छुपा है। सामन्तों के पतन एवं धर्म सुधार आन्दोलन में राजाओं की शक्ति को बढ़ाया। राजाओं ने अपनी शक्ति को बढ़ाने के लिए राष्ट्रीयता को साधन के रूप में अपनाया तथा सैनिक शक्ति बढ़ाकर राष्ट्रीय सीमा का विस्तार किया।

7.10 सन्दर्भ ग्रन्थ

1– ए हिस्ट्री आफ वर्ल्ड सिविलाइजेशन – जे0ई0 स्वेन

2– द आउट लाइन आफ हिस्ट्री – एच0जी0 वेल्स

3– विश्व इतिहास – जैन एवं माथुर

4– आधुनिक पश्चिम का उदय – पार्थसारथि गुप्ता

5– फ्रेडरिक द ग्रेट – गूच

6– पीटर द ग्रेट – ग्राहम

7– ए पोलिटिकल एण्ड कल्चरल हिस्ट्री ऑफ यूरोप (वाल्यूम–1) – हेज

7.11 स्वमूल्यांकित प्रश्नों के उत्तर

प्र01– सही (✓)

प्र02– सही (✓)

प्र03– गलत (X)

प्र04– गलत (✓)

प्र05– सही (✓)

प्र06– सही (✓)

प्र07– देखें बिन्दु–1.3

प्र08– देखें बिन्दु–1.4

प्र09– देखें बिन्दु–1.7

प्र010– देखें बिन्दु–1.5.4

प्र011– देखें बिन्दु–1.5.5

प्र012– देखें बिन्दु–1.4

7.12 निबंधात्मक प्रश्न

1. निरंकुश राष्ट्रीय राज्यों के उदय पर विस्तार से चर्चा कीजिए।
2. स्पेन के उत्थान एवं पतन के कारणों की समीक्षा कीजिये।
3. बूर्वो वंश के अधीन फ्रांस के उत्थान पर प्रकाश डालिये।

इकाई आठ – इंग्लैण्ड में संसदीय संस्थाओं का विकास

8.1 प्रस्तावना

8.2 उद्देश्य

8.3.3 इंग्लैंड में संसदीय संस्थाओं के विकास का पहला चरण

8.3.3.1 'चार्टर ऑफ़ लिबर्टीज़

8.3.3.2 'मैग्ना कार्टा' (महान अधिकारपत्र)

8.3.3.3 प्रोविज़ंस ऑफ़ ऑक्सफ़ोर्ड

8.3.4 हाउस ऑफ़ लॉर्ड्स तथा हाउस ऑफ़ कॉमन्स की स्थापना

8.3.4.1 अपर चौम्बर तथा लोअर चौम्बर

8.3.4.2 हाउस ऑफ़ लॉर्ड्स तथा हाउस ऑफ़ कॉमन्स

8.3.5 शासक तथा पार्लियामेंट के मध्य अधिकारों के लिए संघर्ष

8.3.5.1 जेम्स प्रथम का शासनकाल

8.3.5.2 चार्ल्स प्रथम का शासनकाल

8.4 गणतन्त्र युग (1649–1660)

8.4.1 चार्ल्स द्वितीय का शासनकाल

8.5 गौरवपूर्ण क्रान्ति

8.5.1 जेम्स द्वितीय का शासन काल

8.5.2 गौरवपूर्ण क्रान्ति (1688) के कारण

8.5.3 गौरवपूर्ण क्रान्ति

8.5.3.1 गौरवपूर्ण क्रांति के परिणाम

8.6 ब्रिटिश संसदीय संस्था के आधारभूत स्तम्भ

8.6.1 हाउस ऑफ़ कॉमन्स

8.6.2 हाउस ऑफ़ लॉर्ड्स

8.6.3 मताधिकार

8.7 सारांश

8.8 पारिभाषिक शब्दावली

8.9 स्वमूल्यांकित लघु प्रश्नों के उत्तर

8.10 संदर्भ ग्रंथ सूची

8.11 उपयोगी पाठ्य सामग्री

8.12 निबंधात्मक प्रश्न

8.1 प्रस्तावना

विश्व इतिहास में इंग्लैण्ड को संसदीय संस्थाओं की जन्म भूमि कहा जाता है. 1100 में हेनरी प्रथम ने 'चार्टर ऑफ़ लिबर्टीज़' के द्वारा विशिष्ट क्षेत्रों में अपनी शक्तियों को सीमित कर दिया था. ब्रिटिश संसदीय संस्था के विकास में 1215 की 'मैग्ना कार्टा' का ऐतिहासिक महत्त्व है. मैग्ना कार्टा को आजादी का महान चार्टर भी कहा जाता है. 1258 में 7 अग्रणी बैरनों ने तत्कालीन शासक हेनरी तृतीय को 'प्रोविज़न्स ऑफ़ ऑक्सफ़ोर्ड' स्वीकार करने के लिए बाध्य किया. इस व्यवस्था ने निरंकुश एंग्लो–नॉर्मन राजतन्त्र की व्यवस्था समाप्त कर दी. हेनरी तृतीय के पुत्र एडवर्ड (1271–1307) के शासनकाल में इंग्लैंड की पार्लियामेंट का जन्म हुआ. वित्तीय मामलों में अब शासक के लिए पार्लियामेन्ट का अनुमोदन लिया जाना आवश्यक हो गया. एडवर्ड तृतीय के शासनकाल में पार्लियामेन्ट की शक्ति में वृद्धि हुई. 1341 में अपर चौम्बर (आभिजात्य वर्ग तथा पादरी वर्ग) तथा लोअर चौम्बर (नाइट्स तथा बर्जेज़) का गठन किया गया. 1430 में लोअर चौम्बर के लिए सम्पत्ति विषयक न्यूतम योग्यता के आधार पर सदस्यों के चुनाव हेतु नागरिकों को मताधिकार (सीमित मताधिकार) प्रदान किया गया। 1535–42 में वेल्श पर ब्रिटिश अधिकार हो जाने के बाद वेल्श के प्रतिनिधि भी पार्लियामेन्ट में आने लगे. 1544 के बाद पार्लियामेन्ट के दोनों सदनों को क्रमशः हाउस ऑफ़ लॉर्ड्स तथा हाउस ऑफ़ कॉमन्स कहा जाने लगा. किसी बिल को कानून बनाए जाने के लिए पहले उसका दोनों सदनों में बहुमत द्वारा अनुमोदन आवश्यक था. जेम्स प्रथम के सिंहासनारूढ़ (1603) होते ही संसद तथा शासक के मध्य सर्वोच्चता के लिए संघर्ष प्रारम्भ हो गया. 1628 में चार्ल्स प्रथम द्वारा अपनी शक्ति के निरंकुश प्रयोग से सशंकित हाउस ऑफ़ कॉमन्स ने 'पेटीशन ऑफ़ राइट' प्रस्तुत की. चार्ल्स प्रथम के शासन काल में शौर्ट पार्लियामेंट और लॉन्ग पार्लियामेंट के काल में भी उसके तथा पार्लियामेंट के मध्य विवाद पूर्ववत बना रहा. 1642 में ओलिवर क्रामवेल के नेतृत्व में 'बैटिल ऑफ़ एजहिल' से 'इंग्लिश सिविल वार' प्रारम्भ हुई. क्रामवेल के नेतृत्व में 'आइरन साइड्स' कही जाने वाली सेना ने मान्सटनमूर में 1644 में तथा नेजबी में 1645 में चार्ल्स प्रथम की सेना को करारी हार दी. 1649 में पार्लियामेन्ट ने एक न्यायालय गठित किया जिसने चार्ल्स प्रथम को प्राणदण्ड सुनाया.

यद्यपि गणतन्त्र युग (1649–1660) को हम सैनिक तानाशाही का युग मानते हैं पर इसी अवधि में पार्लियामेन्ट के भविष्य का निर्धारण भी हुआ था. निम्न सदन अर्थात् 'हाउस ऑफ़ कॉमन्स' में निर्वाचित सदस्य होते थे जब कि उच्च सदन अर्थात् 'हाउस ऑफ़ लॉर्ड्स के सदस्य – 'लाड्र्स स्प्रिचुअल' तथा लाड्र्स टैम्पोरल' (अधिकांश पीयर्स) होते थे जिनकी कि नियुक्ति प्रधान मन्त्री की अथवा 'हाउस ऑफ़ लॉर्ड्स अपाइन्टमेन्ट कमीशन' की सलाह पर शासक द्वारा की जाती थी.

चार्ल्स द्वितीय का शासनकाल (1660–1685) एक ओर जहां अराजकता का काल था वहीं इस काल में राजा की शक्ति को निरंकुश बनाने में नवीन पार्लियामेन्ट (कैवेलियर पार्लियामेन्ट) में उसके समर्थक सदस्यों ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई. कैथोलिक जेम्स द्वितीय (1685 में राज्यारोहण) ने अपनी वैधानिक शक्ति का दुरूपयोग कर अपने अनेक रोमन कैथोलिक समर्थकों को उच्च सैनिक एवं सरकारी पदों पर नियुक्त किया और उन्हें निजी स्तर पर अपना धर्म–पालन करने स्वतंत्रता भी प्रदान कर दी. इंग्लैण्ड के सिंहासन पर फिर से कैथोलिक शासक के आरूढ़ होने की सम्भावना समाप्त करने के उद्देश्य से पादरी वर्ग, टोरी तथा व्हिग दल ने जेम्स द्वितीय को अपदस्थ कर उसके स्थान पर उसकी बड़ी बेटी मैरी के पति, प्रोटैस्टैन्ट मतावलम्बी विलियम ऑफ़ ऑरेंज (हालैण्ड का शासक) को इंग्लैण्ड के सिंहासन पर अपना अधिकार करने के लिए आमन्त्रित किया.

जेम्स द्वितीय के सैन्य अधिकारी व उसकी अपनी छोटी पुत्री एन भी विद्रोहियों के साथ हो गए. युद्ध से पूर्व ही जेम्स द्वितीय 23 दिसम्बर, 1688 को इंग्लैण्ड छोड़कर फ्रांस भाग गया और बिना रक्त की एक बूंद बहे इंग्लैण्ड में सत्ता परिवर्तन (विलियम ऑफ़ ऑरेंज के सिंहासनारूढ़ होने से) हो गया जिसको हम गौरवपूर्ण क्रान्ति के नाम से जानते हैं. मैरी तथा विलियम ऑफ़ ऑरेंज द्वारा संयुक्त रूप से इंग्लैण्ड की सत्ता सम्भाले जाने से यह स्पष्ट हो गया कि पार्लियामेन्ट के निर्णयों की अवज्ञा करके कोई भी शासक अपने पद पर बना नहीं रह सकता है. इसके साथ ही राजत्व के दैविक सिद्धान्त की अवधारणा, इंग्लैण्ड के सन्दर्भ में अर्थहीन हो गई. इंग्लैंड के इतिहास में संवैधानिक राजतन्त्र का युग प्रारंभ हुआ जो कि आज भी जारी है. ब्रिटिश संवैधानिक राजतन्त्र में सम्राट/साम्राज्ञी की शक्तियां मुख्य रूप से अलंकारिक होती हैं. यूं तो वह प्रधानमंत्री की नियुक्ति करता/करती है और ब्रिटिश सेना का/की कमांडर–इन–चीफ़ भी होता/होती है किन्तु शासन की वास्तविक शक्ति ब्रिटिश पार्लियामेंट में ही निहित होती है.

8.2 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ कर आप इंग्लैंड में संसदीय प्रणाली के क्रमिक विकास के विषय विस्तार से जानकारी प्राप्त कर सकेंगे. इंग्लैंड को संसदीय प्रणाली की जन्मभूमि कहा जाता है. राजतन्त्र होते हुए भी इंग्लैंड में जनमत की महत्ता है. यहाँ का संवैधानिक राजतन्त्र अन्य सभी देशों के राजतन्त्र से उदार और प्रगतिशील है. इंग्लैंड में शासक का पद औपचारिक तथा अलंकारिक शक्ति का प्रतीक है और शासन की वास्तविक बागडोर जनता द्वारा चुने गए प्रतिनिधियों में से बहुमत का समर्थन प्राप्त नेता के हाथ में होती है जिसे प्राइममिनिस्टर (प्रधानमंत्री) कहा जाता है. यद्यपि प्रधानमंत्री की नियुक्ति वैधानिक तौर पर शासक द्वारा की जाती है किन्तु वह पार्लियामेंट और जनता के प्रति उत्तरदायी होता है. इंग्लैंड में संसदीय संस्थाओं का विकास एक लम्बे संघर्ष के बाद संभव हुआ है. इस इकाई को पढ़कर आप इंग्लैंड की संसदीय संस्थाओं के क्रमिक विकास के विषय में जान सकेंगे.

इकाई के

1. प्रथम चरण में आप इंग्लैंड में संवैधानिक विकास के प्रारंभिक चरण के विषय में जान सकेंगे.
2. द्वितीय चरण में आप हाउस ऑफ़ लॉर्ड्स तथा हाउस ऑफ़ कॉमन्स की स्थापना के विषय में जान सकेंगे.
3. तृतीय चरण में आप क्रोमवेल के नेतृत्व में क्रान्ति, चार्ल्स प्रथम को मृत्युदंड दिए जाने तथा गणतंत्र काल की घटनाओं के विषय में जान सकेंगे.
4. चौथे चरण में आप गौरव पूर्ण क्रान्ति के विषय में जान सकेंगे.
5. पांचवें चरण में आप 'हाउस ऑफ़ लॉर्ड्स', 'हाउस ऑफ़ कॉमन्स', मताधिकार आदि के विषय में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे.

8.3.3 इंग्लैंड में संसदीय संस्थाओं के विकास का पहला चरण

8.3.3.1 'चार्टर ऑफ़ लिबर्टीज़

इंग्लैण्ड में सन् 1066 में विलियम ऑफ़ नौर्मंडी ने एक सामन्ती व्यवस्था का प्रचलन किया था जिसमें उसने 'टैनेन्ट–इन–चीफ़' (भू–स्वामी) तथा चर्च के प्रतिनिधियों की एक समिति गठित कर कानून बनाने से पहले उसकी सलाह लेने की व्यवस्था की थी. 1100 में हेनरी प्रथम ने 'चार्टर ऑफ़ लिबर्टीज़' के द्वारा विशिष्ट क्षेत्रों में अपनी शक्तियों को सीमित कर दिया था.

वास्तव में प्रारम्भिक काल में इंग्लैण्ड के शासक के पास अपनी कोई स्थायी सेना नहीं थी और न ही उसके पास पर्याप्त आर्थिक साधन थे. इसलिए राज्य संचालन के लिए उसे आभिजात्य वर्ग और चर्च के प्रतिनिधियों के सहयोग पर निर्भर रहने के लिए बाध्य होना पड़ता था. इंग्लैण्ड में सन् 1066 में विलियम ऑफ़ नौर्मंडी ने एक सामन्ती व्यवस्था का प्रचलन किया था जिसमें उसने 'टैनेन्ट–इन–चीफ़' (भू–स्वामी) तथा चर्च के प्रतिनिधियों की एक समिति गठित कर कानून बनाने से पहले उसकी सलाह लेने की व्यवस्था की थी. सन्

1100 में हेनरी प्रथम ने 'चार्टर ऑफ़ लिबर्टीज़' के द्वारा विशिष्ट क्षेत्रों में अपनी शक्तियों को सीमित कर दिया था.

8.3.3.2 'मैग्ना कार्टा' (महान अधिकार पत्र)

विश्व इतिहास के चर्चित दस्तावेजों में से एक गिने जाने वाले मैग्ना कार्टा ने 800 वर्ष पूरे कर लिए है. मैग्ना कार्टा एक लैटिन शब्द है, जिसका अर्थ श्महान चार्टरश होता है. मैग्ना कार्टा लैटिन भाषा में लिखित एक ऐतिहासिक दस्तावेज है. मैग्ना कार्टा को श्आजादी का महान चार्टरश भी कहा जाता है. मैग्ना कार्टा मानवाधिकारों की बुनियाद रखने वाला दस्तावेज भी माना जाता है.

15 जून, 1215 को मैग्ना कार्टा पर ब्रिटेन के तत्कालीन राजा किंग जॉन ने हस्ताक्षर किए थे.

मैग्ना कार्टा के इस अहम दस्तावेज के तहत ही पहली बार राजा को कानून के दायरे में रखा गया और यह नियम बनाया गया कि कोई भी व्यक्ति, संस्था या राजा कानून से ऊपर नहीं है. करीब 3500 शब्दों की मैग्ना कार्टा संधि चर्म पत्र पर लिखी गई है. इसमें लैटिन भाषा में लिखी एक प्रस्तावना और कुल 63 धाराएं हैं.

मैग्ना कार्टा को ब्रिटेन और अमेरिका (अमेरिका के संविधान का आधार होने के कारण) में वही दर्जा प्राप्त है, जो भारत में संविधान को प्राप्त है. मैग्ना कार्टा ने ब्रिटेन और अमेरिका के साथ – साथ विश्व को भी बदलने का काम किया है. इसमें लिखा गया है कि किसी भी शख्स को कानून के तहत दोषी साबित होने के बाद ही सजा, देश निकाला या पदमुक्त किया जा सकता है. यानी किसी भी व्यक्ति को इसलिए दंडित नहीं किया जा सकता, क्योंकि राजा का मिजाज अच्छा नहीं था. यही वजह है कि इसे आधुनिक कानून और न्याय तंत्र का आधार माना गया है. मैग्ना कार्टा मानवाधिकारों की बुनियाद रखने वाला दस्तावेज भी माना जाता है. मैग्ना कार्टा ने महिला अधिकार कार्यकर्ताओं से लेकर महात्मा गांधी और नेल्सन मंडेला तक को प्रेरित किया. हमारे संविधान में भी मौलिक अधिकार सम्बन्धी प्रावधान को श्भारतीय संविधान का मैग्ना कार्टाश कहा जाता है. ऐतिहासिक दस्तावेज़ 'मैग्ना कार्टा' की पृष्ठभूमि जानना अत्यंत आवश्यक है.

मैग्ना कार्टा की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि जान लेना अत्यंत आवश्यक है –

अत्यधिक करों के बोझ, असफल युद्धों और पोप से विवाद के कारण इंग्लैण्ड के शासक जॉन से क्रुद्ध होकर उसके कुछ महत्वपूर्ण बैरन उसके विरुद्ध विद्रोह करने को तत्पर हो गए. अपनी कमज़ोर स्थिति को सुधारने के उद्देश्य से जॉन ने प्रभावशाली बैरन और अपने फ्रांसीसी व स्काटिश मित्र राज्यों से भेंट की और तत्पश्चात उसने लन्दन के निकट रनीमेड नामक स्थान पर 15 जून, 1215 को 'मैग्ना कार्टा' (महान अधिकारपत्र) पर हस्ताक्षर किए जिसके अनुसार शासक को कर लगाने और कर एकत्र करने से पहले अपनी रॉयल काउन्सिल (जिसमें कि सामन्तवादी व्यवस्था के स्तम्भ – आर्क बिशप, अबाट, बैरन तथा अर्ल सम्मिलित थे) की सहमति लेना आवश्यक हो गया. इसी रॉयल काउन्सिल ने बाद में विकसित होते–होते पार्लियामेन्ट का रूप धारण कर लिया. यह उल्लेख करना आवश्यक है कि नागरिक अधिकार विषयक यह ऐतिहासिक दस्तावेज़ आम आदमी के लिए नहीं अपितु केवल प्रभावशाली वर्ग तक सीमित था. 'मैग्ना कार्टा' में प्रदत्त नागरिक अधिकारों का शासकों ने कभी निष्ठापूर्वक क्रियान्यन नहीं किया किन्तु इसने सामान्य तथा संवैधानिक कानून और साथ ही राजनीतिक प्रतिनिधित्व व संसदीय प्रणाली की विकास–प्रक्रिया को अत्यधिक प्रभावित किया है. 'मैग्ना कार्टा' ने लोकतन्त्र, शासक की सीमित शक्ति और समानता के अधिकार के सिद्धान्तों को विकसित करने में महत्वपूर्ण योगदान दिया है. लैटिन तथा फ्रेंच भाषाओं में विचार–विमर्श तथा भाषण के लिए प्रयुक्त 'पार्लियामेन्ट' शब्द का ब्रिटिश इतिहास में उल्लेख, सर्वप्रथम 13 वीं शताब्दी में हुआ है. यद्यपि 'मैग्नाकार्टा' समग्र रूप से एक सामंती दस्तावेज़ था किन्तु इस ने नागरिक अधिकारों के महत्वपूर्ण सिद्धांतों को पहली बार लेखबद्ध किया था. इसके अंतर्गत शासक को यह स्वीकार करना पड़ा था की वह रॉयल काउंसिल के अनुमोदन के बिना बड़ी धन राशि प्राप्त नहीं कर सकता था. 'मैग्नाकार्टा' से यह भी स्थापित हो गया कि किसी भी स्वतंत्र व्यक्ति को मनमाने ढंग से दण्डित नहीं किया जा सकेगा अपितु क़ानून के अंतर्गत उस पर अभियोग चलाकर उसे दोषी पाए जाने के

बाद ही उसे दण्डित किया जा सकेगा. 'मैग्नाकार्टा' ने निश्चित रूप से शासक की स्वेच्छाचारिता को नियंत्रित किया और साथ ही साथ इसने शासक को भी क़ानून के दायरे के अन्दर ला खड़ा किया. 'मैग्नाकार्टा' ने निरंकुश शासनतंत्र को प्रतिबंधित करने का कार्य किया किन्तु इस से केंद्रीयकृत शासन की प्रक्रिया को नियंत्रित नहीं किया जा सका. हेनरी तृतीय (1216– 77) के शासनकाल में पूर्ण शक्ति प्राप्त प्रशासनिक एवं न्यायिक संस्थाओं की उपस्थिति से इसका खुलासा हो गया. उसी के शासनकाल में स्थाई उच्च न्यायालयों की स्थापना होना प्रारंभ हो गया था.

8.3.3.3 प्रोविज़ंस ऑफ़ ऑक्सफ़ोर्ड

प्रोविज़ंस ऑफ़ ऑक्सफ़ोर्ड को प्रायः इंग्लैंड का प्रथम लिखित संविधान माना जाता है. लीसेस्टर के छठे अर्ल के नेतृत्व में 7 बैरंस के एक समूह ने तत्कालीन शासक हेनरी तृतीय को 1258 में 'प्रोविज़न्स ऑफ़ ऑक्सफ़ोर्ड' स्वीकार करने के लिए बाध्य किया। इस व्यवस्था ने निरंकुश एंग्लो–नॉर्मन राजतन्त्र की व्यवस्था समाप्त कर दी गई और अब राज्य–संचालन की शक्ति 15 बैरनों की एक समिति के हाथ में आ गई. इंग्लैण्ड, वेल्स तथा स्काटलैण्ड के एकीकरण के उद्देश्य से एडवर्ड प्रथम (शासन काल 1272– 1307) ने प्रभावशाली वर्ग का सहयोग प्राप्त करने के लिए और विद्रोहों की सम्भावना को समाप्त करने के लिए पार्लियामेन्ट को एक संस्था के रूप में विकसित होने का अवसर प्रदान किया. उसने समाज के सभी वर्गों को अपनी शिकायतों से सम्बन्धित याचिकाएं प्रस्तुत करने का अधिकार दिया। उसने समाज के सभी वर्गों को अपनी शिकायतों से सम्बन्धित याचिकाएं प्रस्तुत करने का अधिकार दिया.

हेनरी तृतीय के पुत्र एडवर्ड (1271–1307) के शासनकाल में इंग्लैंड की पार्लियामेंट का जन्म हुआ. इस पार्लियामेंट का सम्बन्ध जन–प्रतिनिधियों से नहीं बल्कि सामंतों के बृहद परिवार से था किन्तु इसमें सामंतों के साथ–साथ गावों, कस्बों तथा नगरों के प्रतिनिधि भी सम्मिलित होते थे. एडवर्ड प्रथम के काल से शासक की शक्ति अथवा उसकी दुर्बलता के अनुपात में पार्लियामेन्ट की शक्ति घटती या बढ़ती रही परन्तु वित्तीय मामलों में अब शासक के लिए पार्लियामेन्ट का अनुमोदन लिया जाना आवश्यक हो गया. एडवर्ड द्वितीय को अपदस्थ करने और एडवर्ड तृतीय को सिंहासनारूढ़ करने में पार्लियामेन्ट की निर्णायक भूमिका रही. एडवर्ड तृतीय के शासनकाल में पार्लियामेन्ट की शक्ति में वृद्धि हुई.

8.3.4 हाउस ऑफ़ लॉर्ड्स तथा हाउस ऑफ़ कॉमन्स की स्थापना

8.3.4.1 अपर चौम्बर तथा लोअर चौम्बर

1341 में अपर चौम्बर (आभिजात्य वर्ग तथा पादरी वर्ग) तथा लोअर चौम्बर (नाइट्स तथा बर्जेज़) का गठन किया गया. 1376 में लोअर चौम्बर (तदन्तर हाउस ऑफ़ कामन्स) के प्रिसाइडिंग ऑफिसर (तदन्तर स्पीकर) सर पीटर डी ला मारे ने शाही व्यय का हिसाब मांगा था और शासक की सैनिक नीति की आलोचना की थी, 1430 में लोअर चौम्बर के लिए सम्पत्ति विषयक न्यूतम योग्यता के आधार पर सदस्यों के चुनाव हेतु नागरिकों को मताधिकार (सीमित मताधिकार) प्रदान किया गया. 1535–42 में वेल्श पर ब्रिटिश अधिकार हो जाने के बाद वेल्श के प्रतिनिधि भी पार्लियामेन्ट में आने लगे.

8.3.4.2 हाउस ऑफ़ लॉर्ड्स तथा हाउस ऑफ़ कॉमन्स

1544 के बाद पार्लियामेन्ट के दोनों सदनों को क्रमशः हाउस ऑफ़ लॉर्ड्स तथा हाउस ऑफ़ कॉमन्स कहा जाने लगा. पैलेस ऑफ़ वैस्ट मिनिस्टर में हाउस ऑफ़ लॉर्ड्स तथा सेन्ट स्टीफ़ेन्स चौपल में हाउस ऑफ़ कॉमन्स बनाए गए. किसी भी सदन का कोई भी सदस्य संसद में बिल प्रस्तुत कर सकता था. शासक द्वारा अनुमोदित बिलों को प्रायः प्रिवी काउन्सिल के सदस्य पार्लियामेन्ट में रखते थे. किसी बिल को कानून बनाए जाने के लिए पहले उसका दोनों सदनों में बहुमत द्वारा अनुमोदन आवश्यक था और इसके बाद अन्त में उसे शासक के पास भेज दिया जाता था जिसे उसका अनुमोदन कर उसे कानून बनाने अथवा अपने निषेधाधिकार (वीटो पॉवर) का प्रयोग कर उसे रद्द करने का अधिकार था. 16 वीं तथा 17 वीं शताब्दी में कई बार शासकों ने अपने निषेधाधिकार का प्रयोग कर बिलों को रद्द किया था.

8.3.5 शासक तथा पार्लियामेंट के मध्य अधिकारों के लिए संघर्ष

8.3.5.1 जेम्स प्रथम का शासनकाल

एलिज़ाबेथ प्रथम ने स्वयं शक्तिशाली होते हुए भी पार्लियामेन्ट की महत्ता व उपयोगिता को स्वीकार किया था. ट्यूडर काल में पार्लियामेन्ट ने भी शासक की सर्वोच्चता को स्वीकार करने में संकोच नहीं किया था. महारानी एलिज़ाबेथ प्रथम की मृत्यु के बाद जेम्स प्रथम के सिंहासनारूढ़ होते ही संसद तथा शासक के मध्य सर्वोच्चता के लिए संघर्ष प्रारम्भ हो गया. जेम्स प्रथम राजत्व के दैविक सिद्धान्त में विश्वास करता था और उसकी दृष्टि में राजा की आलोचना करने, उसका विरोध करने अथवा उसकी नीतियों को नियन्त्रित करने का किसी को अधिकार नहीं था. प्रतिनिधि सभाओं की उपयोगिता पर उसका कोई विश्वास नहीं था. जेम्स प्रथम के शासनकाल में इंग्लैण्ड के राष्ट्रीय चर्च का स्वरूप प्रोटैस्टैन्ट हो गया था जिससे एक ओर जहां इंग्लैण्ड में अल्पसंख्यक रोमन कैथोलिक कुपित थे वहीं दूसरी ओर प्रोटैस्टैन्टों का एक वर्ग (प्यूरिटन्स) इसलिए कुपित था कि चर्च का स्वरूप पूरी तरह प्रोटैस्टैन्ट क्यों नहीं हुआ था. जेम्स प्रथम ने प्यूरिटन्स को आंग्ल–चर्च विरोधी घोषित कर राज्य की ओर से उन्हें दी जाने वाली सुविधाएं समाप्त कर दीं. पार्लियामेन्ट में प्रोटैस्टैन्ट्स का बहुमत था जिन्होंने जेम्स के इस निर्णय का विरोध किया. 1618 में यूरोप में 30 वर्षीय युद्ध प्रारम्भ हुआ जिसको कि रोमन कैथोलिकों व प्रोटैस्टों (लूथरवादी तथा काल्विनवादी) के मध्य धार्मिक संघर्ष की पराकाष्ठा के रूप में देख सकते हैं. इस युद्ध के दौरान जेम्स प्रथम आर्थिक लाभ की सम्भावना देखकर अपने बेटे चार्ल्स का विवाह स्पेन की रोमन कैथालिक मतावलम्बी राजकुमारी मारिया अन्ना से करना चाहता था जिसका कि बहुसख्यंक प्रोटैस्टैन्ट सदस्यीय ब्रिटिश पार्लियामेन्ट ने खुलकर विरोध किया. इसके जवाब में जेम्स ने फ़रवरी, 1622 में पार्लियामेन्ट को भंग कर दिया. विवाह की आकांक्षा हेतु राजकुमार चार्ल्स की स्पेन यात्रा के बावजूद यह विवाह नहीं हो सका. इस समाचार को पार्लियामेन्ट ने अपनी जीत माना. 1624 में जेम्स प्रथम को वित्तीय समस्याओं के समाधान हेतु फिर पार्लियामेन्ट की बैठक बुलानी पड़ी. अपने शासनकाल (1603–1625) के दौरान जेम्स प्रथम को लगातार पार्लियामेन्ट की आलोचना अथवा उसके विरोध का सामना करना पड़ा. 1625 में जब जेम्स प्रथम की मृत्यु हुई तो उसने अपने उत्तराधिकारी चार्ल्स प्रथम के लिए विरासत में शासक और पार्लियामेन्ट के मध्य शाश्वत संघर्ष और पारस्परिक अविश्वास छोड़ा था.

8.3.5.2 चार्ल्स प्रथम का शासनकाल

चार्ल्स प्रथम (1625 से 1649 तक शासनकाल) भी अपने पिता जेम्स प्रथम की भांति राजत्व के दैविक सिद्धान्त में विश्वास रखता था और उसकी दृष्टि में शासक की इच्छा के विरुद्ध पार्लियामेन्ट की आलोचना अथवा उसका विरोध कोई महत्व नहीं रखता था. उसने अपने पिता की प्यूरिटन्स तथा पार्लियामेन्ट के दमन की नीति को जारी रखा. पार्लियामेन्ट के विरोध के बावजूद चार्ल्स प्रथम ने फ्रांस की रोमन कैथोलिक मतावलम्बी राजकुमारी के साथ अपना विवाह रचा लिया. यद्यपि चार्ल्स प्रथम प्रोटैस्टैन्ट विरोधी नहीं था किन्तु रोमन कैथोलिकों के प्रति उसकी उदारता को पार्लियामेन्ट ने सहन नहीं किया और राज्य की नीतियों को प्रोटैस्टैन्ट मतावलम्बियों के पक्ष में करने के लिए उस पर दबाव डाला. 1628 में चार्ल्स प्रथम द्वारा अपनी शक्ति के निरंकुश प्रयोग से सशंकित हाउस ऑफ़ कॉमन्स ने 'पेटीशन ऑफ़ राइट' प्रस्तुत की. इसकी प्रथम धारा में घोषित किया गया था कि दृ

1. संसद के अनुमोदन के बिन लगाए जाने वाले कर अवैधानिक थे.
2. किसी भी व्यक्ति पर बिना मुक़द्दमा चलाए और उसका अपराध सिद्ध हुए बिना उसे कारावास में नहीं डाला जा सकता था.
3. निजी घरों को सैनिकों के उपयोग के लिए नहीं लिया जा सकता था.
4. शांति–काल में सैनिक कानून लागू नहीं किया जा सकता था.

इसमें यह चेतावनी भी दी गई थी कि सम्राट द्वारा उनकी मांग को स्वीकार न किए जाने की स्थिति में पार्लियामेन्ट किसी भी मामले में उसके साथ सहयोग नहीं करेगी. सम्राट को इस याचिका को स्वीकार करना

पड़ा. पार्लियामेन्ट की याचिका को स्वीकार किए जाने को हम चार्ल्स प्रथम–पार्लियामेन्ट विवाद में पार्लियामेन्ट की पहली जीत के रूप में देख सकते हैं. परन्तु इसके बाद भी चार्ल्स व पार्लियामेन्ट के मध्य अपने–अपने अधिकारों को लेकर संघर्ष जारी रहा. पार्लियामेन्ट ने चार्ल्स को चुंगी कर (टनेज एण्ड पाउण्ड्स) वसूल करने का आजीवन अधिकार देने से इंकार कर दिया. कुपित चार्ल्स प्रथम ने मार्च, 1629 में पार्लियामेन्ट को भंग कर दिया और अगले 11 वर्ष तक पार्लियामेन्ट के भंग रहते हुए ही उसने शासन किया. 11 वर्ष तक पार्लियामेन्ट के भंग रहते हुए भी चार्ल्स प्रथम को कोई राहत नहीं मिली. नौ–सेना को अधिक शक्तिशाली बनाने के उद्देश्य से चार्ल्स प्रथम द्वारा पार्लियामेन्ट की स्वीकृति के बिना लगाए गए 'शिपमनी टैक्स' का आम जनता ने खुलकर विरोध किया. 'स्काटिश बिशप्स वार' (1639–40) की वित्तीय आपदा के कारण उसे नए कर लगाने के लिए पार्लियामेन्ट को दुबारा बुलाना पड़ा. इस सत्र में पार्लियामेन्ट ने चार्ल्स प्रथम के साथ किसी भी प्रकार का सहयोग नहीं किया और उसकी वित्तीय एवं विदेश नीति की कटु आलोचना की. पार्लियामेन्ट के असहयोग से कुपित होकर एक महीने से भी कम समय में उसने उसे फिर भंग कर दिया। इस लघु–अवधि की पार्लियामेन्ट को 'शार्ट पार्लियामेन्ट' कहा गया। 3 नवम्बर, 1640 को उसने फिर पार्लियामेन्ट बुलवाई जो उसके शेष शासनकाल तथा उसके बाद 1660 तक कार्यरत रही. इसे लौंग पार्लियामेन्ट कहा गया. 'लौंग पार्लियामेन्ट' ने सर्वप्रथम चार्ल्स प्रथम के दोनों सलाहकारों – लाड तथा बेंडबर्थ को प्राणदण्ड दिलवाया. इसके पश्चात सम्राट से पार्लियामेन्ट को भंग करने का अधिकार छीन लिया गया. सम्राट और पार्लियामेन्ट में खटास आ जाने के बाद पार्लियामेन्ट समर्थक 'राउण्डहैड्स' के द्वारा अक्टूबर, 1642 में ओलिवर क्रामवेल के नेतृत्व में 'बैटिल ऑफ़ एजहिल' से 'इंग्लिश सिविल वार' प्रारम्भ हुई. पार्लियामेन्ट के समर्थन में मध्यम वर्ग तथा पूंजीपति वर्ग खड़ा था जब कि सम्राट के पक्ष में सामन्ती वर्ग था. क्रामवेल के नेतृत्व में 'आइरन साइड्स' कही जाने वाली सेना ने मान्सटनमूर में 1644 में तथा नेजबी में 1645 में चार्ल्स प्रथम की सेना को करारी हार दी. पराजित चार्ल्स प्रथम ने स्काटलैण्ड में आत्मसमर्पण कर दिया. एक समझौते के अन्तर्गत स्काटलैण्ड के निवासियों ने चार्ल्स प्रथम को ब्रिटिश पार्लियामेन्ट को सौंप दिया. 'आइरनसाइड्स' के दबाव में पार्लियामेन्ट ने एक न्यायालय गठित किया जिसने चार्ल्स प्रथम को प्राणदण्ड सुनाया. यह उल्लेखनीय है कि पार्लियामेन्ट के निर्वाचित सदस्यों का बहुमत चार्ल्स प्रथम को प्राणदण्ड दिए जाने के पक्ष में नहीं था. क्रामवेल ने 'न्यू माडल आर्मी' द्वारा अपने विरोधियों का दमन किया। इसको 'प्राइड पर्ज' (दल–शोधन) का नाम दिया जाता है. 30 जनवरी, 1649 को चार्ल्स प्रथम को प्राणदण्ड दे दिया गया. शताब्दियों से इंग्लिश पार्लियामेन्ट शनैः–शनैः जिस प्रकार इंग्लिश राजतन्त्र की शक्तियों को सीमित करने का जो प्रयास कर रही थी वह अन्ततः अपने निष्कर्ष तक 'सिविल वार' तथा चार्ल्स प्रथम के मृत्यु दण्ड के रूप में दृष्टिगोचर हुआ.

8.4 गणतन्त्र युग (1649–1660)

आयरलैण्ड व स्काटलैण्ड में चार्ल्स द्वितीय को चार्ल्स प्रथम का उत्तराधिकारी घोषित किया गया परन्तु क्रामवेल के कुशल सैन्य–नेतृत्व में राजतन्त्र के समर्थकों की पराजय के बाद उसे अपनी जान बचाने के लिए इंग्लैण्ड छोड़कर यूरोप के अन्य देशों में दर–दर भटकना पड़ा. पार्लियामेन्ट से अपने विरोधियों को हटाकर 1649 से 1653 तक क्रामवेल ने इस 'रम्प पार्लियामेन्ट' शासन का दायित्व 'काउन्सिल ऑफ़ स्टेट' को सौंपा जिसके सदस्य के रूप में उसने पार्लियामेन्ट का नेतृत्व किया. अब इंग्लैण्ड को कामनवेल्थ (इंग्लैण्ड, स्काटलैण्ड तथा आयरलैण्ड) बना दिया गया. 'रम्प पार्लियामेन्ट' के युग में ही सदस्यों को 'मेम्बर ऑफ़ पार्लियामेन्ट' कहा जाने लगा था. पार्लियामेन्ट के सदस्य चार्ल्स प्रथम के पतन को अपनी सफलता मानकर अनुशासनहीनता व उद्दण्डता की सीमा लांघने लगे थे जो कि क्रामवेल को स्वीकार्य नहीं था. 20 अप्रैल, 1653 को उसने पार्लियामेन्ट पर सैनिक आक्रमण करके अपने विरोधियों को वहां से निकाल बाहर किया और 'रम्प पार्लियामेन्ट' को भंग कर दिया. अब क्रामवेल ने मनोनीत सदस्यों की अल्पजीवी, एक सदनीय 'बेयरबोन्स पार्लियामेन्ट' का गठन किया. बाद में 16 दिसम्बर, 1653 को उसके सहयोगी नेताओं ने उसे 'लार्ड प्रोटैक्टर ऑफ़ कामनवेल्थ ऑफ़ इंग्लैण्ड, स्काटलैण्ड एण्ड आयरलैण्ड' के रूप में शासन करने के लिए आमन्त्रित किया.

क्रामवेल ने 1653 से लेकर मृत्यु पर्यन्त (3 सितम्बर, 1658) तक 'लार्ड प्रोटैक्टर ऑफ़ कामनवेल्थ ऑफ़ इंग्लैण्ड, स्काटलैण्ड एण्ड आयरलैण्ड' के रूप में शासन किया. यद्यपि गणतन्त्र युग (1649–1660) को हम सैनिक तानाशाही का युग मानते हैं पर इसी अवधि में पार्लियामेन्ट के भविष्य का निर्धारण भी हुआ था. निम्न सदन अर्थात् 'हाउस ऑफ़ कॉमन्स' में निर्वाचित सदस्य होते थे जब कि उच्च सदन अर्थात् 'हाउस ऑफ़ लॉर्ड्स के सदस्य – 'लार्ड्स स्प्रिचुअल' तथा लार्ड्स टैम्पोरल' (अधिकांश पीयर्स) होते थे जिनकी कि नियुक्ति प्रधान मन्त्री की अथवा 'हाउस ऑफ़ लॉर्ड्स अपाइन्टमेन्ट कमीशन' की सलाह पर शासक द्वारा की जाती थी. 3 सितम्बर, 1658 को ओलिवर क्रामवेल की मृत्यु के बाद सम्पूर्ण व्यवस्था चरमरा गई. उसकी मृत्यु के बाद उसके पुत्र रिचर्ड क्रामवेल ने लगभग आठ महीने तक 'लार्ड प्रोटैक्टर ऑफ़ कामनवेल्थ ऑफ़ इंग्लैण्ड, स्काटलैण्ड एण्ड आयरलैण्ड' के रूप में शासन का संचालन किया परन्तु मई, 1659 को उसे अपने पद से त्यागपत्र देना पड़ा और इसके साथ ही 'लार्ड प्रोटैक्टर' का पद भी समाप्त हो गया. इसके बाद जॉर्ज मौंक ने 'लौंग पार्लियामेन्ट' को पुनर्जीवित किया और उसकी देखरेख में 1660 में नवीन संसद में वह आवश्यक संवैधानिक परिवर्तन किए गए जिससे कि राजतन्त्र को पुनर्स्थापित किया जा सके और निर्वासित चार्ल्स द्वितीय को सिंहासनारूढ़ किया जा सके. 1660 में चार्ल्स द्वितीय के सिंहासनारूढ़ होने के बाद इस परम्परागत सिद्धान्त को पुनः स्वीकार किया गया कि सरकार को राजा, हाउस ऑफ़ लॉर्ड्स तथा हाउस ऑफ़ कॉमन्स, इन तीनों के द्वारा संचालित किया जाना चाहिए.

8.4.1 चार्ल्स द्वितीय का शासनकाल

चार्ल्स द्वितीय का शासनकाल (1660–85) एक ओर जहां अराजकता का काल था वहीं इस काल में राजा की शक्ति को निरंकुश बनाने में नवीन पार्लियामेन्ट (कैवेलियर पार्लियामेन्ट) में उसके समर्थक सदस्यों ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई. क्लैरेंडन कोड के समर्थकों को छोड़कर शेष सभी प्रोटैस्टैन्ट मतावलम्बियों (डिसेन्टर्स) के विरुद्ध कठोर नीति अपनाई गई. 'डिसेन्टर्स' के कट्टर विरोधी 'टोरी' (अनुदार दलीय) कहलाए और जो धार्मिक सहिष्णुता के समर्थक थे वह 'व्हिग' (उदार दलीय) कहलाए. चार्ल्स द्वितीय ने छुपकर रोमन कैथोलिक मत अपना लिया था और साथ ही उसने फ्रांस के शासक लुई चतुर्दश का अंधानुकरण करना प्रारम्भ कर दिया.

8.5 गौरवपूर्ण क्रान्ति

8.5.1 जेम्स द्वितीय का शासन काल

जेम्स द्वितीय एक पीड़ादायक, कष्ट–प्रदायक शासक था. इंलैंड जैसे प्रोटोस्टेंट मतावलंबियों के देश में उस जैसे रोमन कैथोलिक को जनता संदेह और संशय की दृष्टि से देखती थी. जनता को आशंका थी कि रोमन कैथोलिक चर्च और पोप इंग्लैंड के सम्राट ही नहीं अपितु पूरे इंग्लैंड पर अपना नियंत्रण स्थापित कर लेंगे. चिंता की बात यह थी कि जेम्स द्वितीय ने जनता की आशंकाओं को निर्मूल करने का कोई प्रयास नहीं किया. इसके विपरीत उसने ऐसे–ऐसे कार्य किये कि जनता की आशंकाएं और भी उभर कर सामने आ गईं. यद्यपि सम्राट ने इस बात का आश्वासन दिया था कि वह धार्मिक क्षेत्र में यथास्थिति बनाए रक्खेगा किन्तु उसके कार्य तथा निर्णय इसके विपरीत थे. इंग्लैंड में किचित नियम बनाए गए थे जिनके कारण रोमन कैथोलिक न तो लोक–पद पर नियुक्त हो सकते थे और न ही उन्हें अपना धर्म पालन करने की खुली छूट थी किन्तु जेम्स द्वितीय ने इन नियमों को शिथिल करने एवं उन्हें तोड़ने की प्रक्रिया प्रारंभ कर दी. अपनी वैधानिक शक्ति का दुरूपयोग कर उसने अपने अनेक रोमन कैथोलिक समर्थकों को उच्च सैनिक एवं सरकारी पदों पर नियुक्त किया और उन्हें निजी स्तर पर अपना धर्म–पालन करने स्वतंत्रता भी प्रदान कर दी. इस से पार्लियामेंट तथा अंग्लिकन बिशप बहुत घबड़ा गए और फिर उन्होंने अपने कैथोलिक सम्राट को ही अपदस्थ करने का निश्चय कर लिया.

8.5.2 गौरवपूर्ण क्रान्ति (1688) के कारण

1. 1685 में चार्ल्स द्वितीय की मृत्यु के उपरान्त उसका भाई जेम्स द्वितीय सिंहासनारूढ़ हुआ. जेम्स द्वितीय कैथोलिक था और वह वह अपने मत के प्रचार–प्रसार हेतु कटिबद्ध था. उसका राजत्व के दैविक सिद्धान्त में अटूट विश्वास था. यह बातें पार्लियामेन्ट को स्वीकार्य नहीं थीं. इंग्लैण्ड में उभरता हुआ और समाज में एक सीमा तक अपना प्रभाव स्थापित कर चुका शिक्षित मध्यम वर्ग शासक की निरंकुशता सहन करने को तैयार नहीं था.

2. 'व्हिग' दल जेम्स द्वितीय का विरोधी था. इसी दल ने जेम्स द्वितीय के अवैध पुत्र मन्मथ को विद्रोह करने के लिए प्रेरित किया. मन्मथ ने विद्रोह करके स्वयं को इंग्लैण्ड के सिंहासन का उत्तराधिकारी घोषित कर दिया. जेम्स द्वितीय ने मन्मथ के विद्रोह को कुचल दिया और न्यायालय ने उसे प्राणदण्ड दिया. जनता ने इस न्यायालय को 'ब्लडी कोट्र्स' (खूनी न्यायालय) कहा. इस प्रसंग के कारण जेम्स द्वितीय इंग्लैण्ड, स्काटलैण्ड व आयरलैण्ड की जनता और पार्लियामेन्ट की घृणा का पात्र बन गया.

3. चार्ल्स द्वितीय के काल में पारित 'टेस्ट अधिनियम' के अन्तर्गत केवल एंग्लिकन चर्च के अनुयायी ही सरकारी पदों पर नियुक्त किए जा सकते थे किन्तु जेम्स द्वितीय ने इस अधिनियम को स्थगित कर मन्त्रिमण्डल, न्यायालय, नगर निगम और सेना के अनेक उच्च पदों पर कैथोलिकों की पार्लियामेन्ट ने इस कृत्य को संविधान का अपमान बताया किन्तु जेम्स द्वितीय ने इस आलोचना की कोई परवाह नहीं की.

4. जेम्स द्वितीय शिक्षा के क्षेत्र में भी कैथोलिक आधिपत्य स्थापित करना चाहता था और इसीलिए उसने अपनी नीतियों के विरोधी कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय के कुलपति को अपदस्थ कर दिया और परिणामतः जनता में उसके प्रति आक्रोश में और वृद्धि हुई.

5. जेम्स द्वितीय की विदेश नीति, विशेषकर उसका फ्रांस के शासक लुई चौदहवें की विदेश नीति का अन्धानुकरण करने की प्रवृत्ति.

6. जेम्स द्वितीय की एंग्लिकन चर्च के विरुद्ध नीतियों का कैण्टरबरी के आर्कबिशप तथा अन्य 6 पादरियों ने खुलकर विरोध किया. जेम्स ने उन सभी को राजद्रोह के आरोप में टावर ऑफ़ लन्दन में कैद कर लिया. जनता के दबाव में न्यायधीशों ने उन सभी को आरोप–मुक्त कर दिया.

7. जेम्स द्वितीय की पुत्री को, जिसका कि विवाह हालैण्ड के शासक प्रोटैस्टैन्ट मतावलम्बी विलियम से हुआ था, सभी लोग उसका उत्तराधिकारी मानते थे किन्तु 10 जून, 1688 को जेम्स द्वितीय को अपनी दूसरी रानी मैडोना से एक पुत्र हुआ और अब यह निश्चित हो गया कि उसका यह पुत्र ही उसका उत्तराधिकारी होगा जिसका कि लालन–पालन एक कैथोलिक की भांति होगा, पार्लियामेन्ट को यह स्वीकार्य नहीं था कि भविष्य में भी इंग्लैण्ड का शासक कैथोलिक ही हो. इन परिस्थितियों में शासक और पार्लियामेन्ट के मध्य संघर्ष हुआ और यही गौरवपूर्ण क्रान्ति का तात्कालिक कारण बना.

8.5.3 गौरवपूर्ण क्रान्ति

इंग्लैण्ड के सिंहासन पर फिर से कैथोलिक शासक के आरूझ होने की सम्भावना समाप्त करने के उद्देश्य से पादरी वर्ग, टोरी तथा व्हिग दल ने जेम्स द्वितीय को अपदस्थ कर उसके स्थान पर उसकी बड़ी बेटी मैरी के पति, प्रोटैस्टैन्ट मतावलम्बी विलियम ऑफ़ ऑरेंज (हालैण्ड का शासक) को इंग्लैण्ड के सिंहासन पर अपना अधिकार करने के लिए आमन्त्रित किया. विलियम ऑफ़ औरेन्ज ने इस निमन्त्रण स्वीकार करते हुए इंग्लैण्ड की ओर कूच किया. जेम्स द्वितीय के सैन्य अधिकारी व उसकी अपनी छोटी पुत्री एन भी विद्रोहियों के साथ हो गए. युद्ध से पूर्व ही अपनी सैनिक असमर्थता देखकर जेम्स द्वितीय 23 दिसम्बर, 1688 को इंग्लैण्ड छोड़कर फ्रांस भाग गया और बिना रक्त की एक बूंद बहे इंग्लैण्ड में सत्ता परिवर्तन (विलियम ऑफ़ ऑरेंज के सिंहासनारूढ़ होने से) हो गया जिसको हम गौरवपूर्ण क्रान्ति के नाम से जानते हैं.

'बिल ऑफ़ राइट्स अथवा डिक्लेरेशन ऑफ़ राइट्स (दिसम्बर, 1689)

मैरी तथा विलियम ऑफ़ ऑरेंज द्वारा संयुक्त रूप से इंग्लैण्ड की सत्ता सम्भाले जाने से यह स्पष्ट हो गया कि पार्लियामेन्ट के निर्णयों की अवज्ञा करके कोई भी शासक अपने पद पर बना नहीं रह सकता है. इसके

साथ ही राजत्व के दैविक सिद्धान्त की अवधारणा, इंग्लैण्ड के सन्दर्भ में अर्थहीन हो गई. इंग्लैंड के इतिहास में संवैधानिक राजतन्त्र का युग प्रारंभ हुआ जो कि आज भी जारी है. ब्रिटिश संवैधानिक राजतन्त्र में सम्राट/साम्राज्ञी की शक्तियां मुख्य रूप से अलंकारिक होती हैं. यूं तो वह प्रधानमंत्री की नियुक्ति करता/करती है और ब्रिटिश सेना का/की कमांडर–इन–चीफ़ भी होता/होती है किन्तु शासन की वास्तविक शक्ति ब्रिटिश पार्लियामेंट में ही निहित होती है.

8.5.3.1 गौरवपूर्ण क्रांति के परिणाम

अब इंग्लैण्ड में संवैधानिक राजतन्त्र की स्थापना हो गई. इंग्लैण्ड का शासक अब केवल प्रोटैस्टैन्ट ही हो सकता था. शासक की शक्तियों पर, राज्य के खर्च पर और शासक के निजी खर्च पर पार्लियामेन्ट का नियन्त्रण स्थापित हो गया. प्रति वर्ष पार्लियामेन्ट का अधिवेशन होना अनिवार्य हो गया. अब शासन में शासक के स्थान पर पार्लियामेन्ट की सर्वाच्चता स्थापित हो गई. अब राज–परिवार में होने वाले विवाहों के लिए भी पार्लियामेन्ट का अनुमोदन आवश्यक हो गया. अब इंग्लैण्ड उदार एवं संवैधानिक राजतन्त्र का मुख्य केन्द्र बन गया. गौरवपूर्ण क्रान्ति के उदार विचारों ने प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से अमेरिकी और फ्रांसीसी क्रान्ति को प्रभावित किया और आगे चल कर समस्त विश्व में लोकतान्त्रिक व्यवस्था की स्थापना हेतु आन्दोलनों की पृष्ठभूमि तैयार की.

8.6 ब्रिटिश संसदीय संस्था के आधारभूत स्तम्भ

8.6.1 हाउस ऑफ़ कॉमन्स

दि हाउस ऑफ़ कॉमन्स ऑफ़ दि यूनाइटेड किंगडम ब्रिटिश पार्लियामेंट का निम्न सदन होता है. हाउस ऑफ़ लॉर्ड्स की ही भांति इसकी बैठक भी पैलेस ऑफ़ वैस्ट मिनिस्टर में होती है. इस सदन में निर्वाचित सदस्य होते हैं (कुल 650) जिन्हें कि मेम्बर ऑफ़ पार्लियामेंट कहा जाता है. 13 वीं तथा 14 वीं शताब्दी में हाउस ऑफ़ कॉमन्स ऑफ़ इंग्लैंड का विकास हुआ जो कि 1707 में इंग्लैंड में स्कॉटलैंड मिलाए जाने के बाद से हाउस ऑफ़ कॉमन्स ऑफ़ ग्रेट ब्रिटेन कहा जाने लगा और अंततः 19 वीं शताब्दी में इंग्लैंड में आयरलैंड भी मिलाए जाने के बाद दि हाउस ऑफ़ कॉमन्स ऑफ़ ग्रेट ब्रिटेन एंड आयरलैंड कहा जाने लगा. 1922 में आयरिश फ्री स्टेट की स्थापना के बाद से इसे दि हाउस ऑफ़ कॉमन्स ऑफ़ ग्रेट ब्रिटेन एंड नॉर्दर्न आयरलैंड कहा जा रहा है.

यद्यपि हाउस ऑफ़ कॉमन्स प्रधानमंत्री का चुनाव नहीं करता है (प्रधानमंत्री की नियुक्ति तो शासक ही करता है) किन्तु प्रधानमंत्री हाउस ऑफ़ कॉमन्स के प्रति जवाबदेह होता है और बिना उसके समर्थन के सरकार नहीं चला सकता है. सामान्यतः हाउस ऑफ़ कॉमन्स में सबसे बड़े दल का नेता ही प्रधानमंत्री चुना जाता है और सदन में दूसरे स्थान के दल का नेता सदन में नेता प्रति–पक्ष बनाया जाता है. सामान्यतः हाउस ऑफ़ कॉमन्स का कार्य–काल 5 वर्ष का होता है.

8.6.2 हाउस ऑफ़ लॉर्ड्स

हाउस ऑफ़ लॉर्ड्स ऑफ़ दि यूनाइटेड किंगडम, ब्रिटिश पार्लियामेंट का उच्च सदन होता है. इसे हाउस ऑफ़ पीअर्स (जिनमें लॉर्ड्स स्प्रिचुअल तथा लॉर्ड्स टेम्पोरल होते हैं.) भी कहा जाता है. हाउस ऑफ़ कॉमन्स की ही भांति इसकी बैठक पैलेस ऑफ़ वैस्ट मिनिस्टर में ही होती हैं.

हाउस ऑफ़ लॉर्ड्स में हाउस ऑफ़ कॉमन्स द्वारा अनुमोदित बिलों की समीक्षा की जाती है. पहले हाउस ऑफ़ लॉर्ड्स में हाउस ऑफ़ कॉमन्स द्वारा पारित बिलों को क़ानून बनाए जाने से रोका जा सकता था किन्तु 1911 के पार्लियामेंट एक्ट के बाद से इसे उन्हें रोकने का अधिकार नहीं है, केवल उन्हें देर तक रोके रहने का तथा उनमें संशोधन करने का अधिकार है. हाउस ऑफ़ कॉमन्स की ही भांति हाउस ऑफ़ लॉर्ड्स में भी बिल पेश किये जा सकते हैं. हाउस ऑफ़ लॉर्ड्स के सदस्य भी मंत्रिमंडल में शामिल हो सकते हैं.

8.6.3 मताधिकार

उन्नीसवीं शताब्दी तक अनेक पाश्चात्य देशों में मताधिकार के लिए न्यूनतम आय अथवा संपत्ति की सीमाएं थीं.. उन्नीसवीं शताब्दी के अंत में ही संपत्ति विषयक शर्तों को मताधिकार से विलग किया गया.

प्रारंभ में सभी नागरिकों को मताधिकार प्राप्त नहीं था. इसमें धर्म और संपत्ति विषयक अनेक प्रतिबन्ध थे. 1728 से लेकर 1793 तक रोमन कैथेलिकों को वोट देने का और 1829 तक मेम्बर ऑफ़ पार्लियामेंट का चुनाव लड़ने का अधिकार नहीं था. यहूदियों के मताधिकार पर भी प्रतिबन्ध था. आज भी एक निश्चित पता न होने के कारण गृह–हीनों के लिए मतदाता सूची में अपना नाम दर्ज करा पाना कठिन है.

महिलाओं को मताधिकार के लिए सदियों तक संघर्ष करना पड़ा था. व्यावहारिक दृष्टि से उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में जाकर ही महिला–मताधिकार के लिए आंदोलनों का दौर प्रारंभ हुआ. अमेरिका और ब्रिटेन में महिला–मताधिकार को लेकर व्यापक आन्दोलन हुए. 1888 में 'इंटरनेशनल काउंसिल ऑफ़ वीमेन' का गठन हुआ और 1904 में ब्रिटेन की मिलिसेंट फासेट, अमेरिका की केरी चौपमन काट तथा अन्य महिलाओं ने 'इंटरनेशनल वुमन सफ़रेज एलाइन्स' का गठन किया. नवम्बर, 1918 के ब्रिटिश पार्लियामेंट के 'एलिजिबिलिटी ऑफ़ वीमेन एक्ट द्वारा महिलाओं को चुनाव में खड़े मेम्बर ऑफ़ पार्लियामेंट के चुनाव में खड़े होने का और 1928 के 'दि रिप्रेजेन्टेशन ऑफ़ दि पीपुल एक्ट' द्वारा उन्हें मताधिकार प्राप्त हो गया. 1928 में स्त्रियों के लिए भी मताधिकार की न्यूनतम आयु 30 साल से घटाकर 21 साल कर दी गयी और 1969 में पुरुषों और स्त्रियों, दोनों के लिए ही, मताधिकार की न्यूनतम आयु घटाकर 18 वर्ष कर दी गयी.

स्वमूल्यांकित प्रश्नों पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए

1. मैग्नाकार्टा 2. हाउस ऑफ़ लॉर्ड्स तथा हाउस ऑफ़ कॉमन्स 3. जेम्स प्रथम का शासनकाल
4. क्रामवेल

8.7 सारांश

विश्व इतिहास में इंग्लैण्ड को संसदीय संस्थाओं की जन्म भूमि कहा जाता है. इंग्लैण्ड में सन् 1066 में विलियम ऑफ़ नौर्मंडी ने एक सामन्ती व्यवस्था का प्रचलन किया था जिसमें उसने 'टैनेन्ट–इन–चीफ़' (भू–स्वामी) तथा चर्च के प्रतिनिधियों की एक समिति गठित कर कानून बनाने से पहले उसकी सलाह लेने की व्यवस्था की थी. सन् 1100 में हेनरी प्रथम ने 'चार्टर ऑफ़ लिबर्टीज़' के द्वारा विशिष्ट क्षेत्रों में अपनी शक्तियों को सीमित कर दिया था. 15 जून, 1215 की 'मैग्ना कार्टा' के अनुसार शासक को कर लगाने और कर एकत्र करने से पहले अपनी रॉयल काउन्सिल की सहमति लेना आवश्यक हो गया. इसी रॉयल काउन्सिल ने बाद में विकसित होते–होते पार्लियामेन्ट का रूप धारण कर लिया. 'मैग्ना कार्टा' ने लोकतन्त्र, शासक की सीमित शक्ति और समानता के अधिकार के सिद्धान्तों को विकसित करने में महत्वपूर्ण योगदान दिया है. इंग्लैण्ड, वेल्स तथा स्काटलैण्ड के एकीकरण के उद्देश्य से एडवर्ड प्रथम (शासन काल 1272–1307) ने प्रभावशाली वर्ग का सहयोग प्राप्त करने के लिए और विद्रोहों की सम्भावना को समाप्त करने के लिए पार्लियामेन्ट को एक संस्था के रूप में विकसित होने का अवसर प्रदान किया. वित्तीय मामलों में अब शासक के लिए पार्लियामेन्ट का अनुमोदन लिया जाना आवश्यक हो गया. एडवर्ड तृतीय के शासनकाल में पार्लियामेन्ट की शक्ति में वृद्धि हुई. 1430 में लोअर चौम्बर के लिए सम्पत्ति विषयक न्यूतम योग्यता के आधार पर सदस्यों के चुनाव हेतु नागरिकों को मताधिकार (सीमित मताधिकार) प्रदान किया गया. 1544 के बाद पार्लियामेन्ट के दोनों सदनों को क्रमशः हाउस ऑफ़ लॉर्ड्स तथा हाउस ऑफ़ कॉमन्स कहा जाने लगा. ट्यूडर काल में पार्लियामेन्ट ने शासक की सर्वोच्चता को स्वीकार करने में संकोच नहीं किया था किन्तु महारानी एलिज़ाबेथ प्रथम की मृत्यु के बाद जेम्स प्रथम तथा चार्ल्स प्रथम के शासनकाल में संसद तथा शासक के मध्य सर्वोच्चता के लिए संघर्ष प्रारम्भ हो गया.

चार्ल्स प्रथम और पार्लियामेन्ट में खटास आ जाने के बाद पार्लियामेन्ट समर्थक 'राउण्डहैड्स' के द्वारा अक्टूबर, 1642 में ओलिवर क्रामवेल के नेतृत्व में 'बैटिल ऑफ़ एजहिल' से 'इंग्लिश सिविल वार' प्रारम्भ हुई और अन्ततः 1649 में चार्ल्स प्रथम का पतन हुआ और इंग्लैण्ड में अगले 11 वर्षों तक गणतन्त्र स्थापित रहा. 1660 में राजतन्त्र की पुनर्स्थापना से लेकर 1688 तक पार्लियामेन्ट और शासक के मध्य सर्वोच्चता हेतु संघर्ष

जारी रहा. इस संघर्ष में कैथोलिक चार्ल्स द्वितीय व जेम्स द्वितीय और प्रोटैस्टैन्ट समर्थक पार्लियामेन्ट के मध्य धार्मिक विवाद भी ज़ोर पकड़ता गया. 1688 में उत्तराधिकार के प्रश्न को लेकर उठे विवाद ने क्रान्ति का रूप ले लिया जिसके फलस्वरूप जेम्स द्वितीय का पतन हुआ. 1689 के 'बिल ऑफ़ राइट्स' द्वारा शासक पर पार्लियामेन्ट की सर्वोच्चता स्थापित हुई और इंग्लैण्ड में संवैधानिक राजतन्त्र की स्थापना हुई. गौरवपूर्ण क्रान्ति के उदार विचारों ने प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से अमेरिकी और फ्रांसीसी क्रान्ति को प्रभावित किया और आगे चल कर समस्त विश्व में लोकतान्त्रिक व्यवस्था की स्थापना हेतु आन्दोलनों की पृष्ठभूमि तैयार की.

8.8 पारिभाषिक शब्दावली

मैग्ना कार्टा – अधिकार पत्र

अपर चौम्बर – इसके सदस्य आभिजात्य वर्ग तथा पादरी वर्ग से नियुक्त किए जाते थे.

लोअर चौम्बर – इसके सदस्य नाइट्स तथा बर्जेज़ वर्ग से नियुक्त किए जाते थे.

सीमित मताधिकार – इसके अंतर्गत आय और संपत्ति की न्यूनतम शर्तों को पूरा करने वाले वयस्क पुरुषों को मत देने का अधिकार प्राप्त था.

राजत्व का दैविक सिद्धांत – इस सिद्धांत के अंतर्गत शासक, पृथ्वी पर, ईश्वर का प्रतिनिधि होता है और उसका हर आदेश, ईश्वरीय आदेश होता है.

कमांडर–इन–चीफ़– सेनाध्यक्ष

रम्प पार्लियामेंट – बिना दुम वाली (शक्ति हीन) संसद

8.9 स्वमूल्यांकित लघु प्रश्नों के उत्तर

1. देखिए 8. 3. 2
2. देखिए 8.4.2 तथा 8. 7. 1 व 8. 7. 2
3. देखिए 8. 5. 1
4. देखिए 8. 5. 3

8.10 संदर्भ ग्रंथ सूची

एल्टन, जी. आर. दृ इंग्लैंड अन्दर दि ट्यूडर्स, लन्दन, 1977

प्रमोद कुमार दृ आधुनिक यूरोप का इतिहास (1450–1789), दिल्ली, 2016

फ्रेज़र, लेडी एन्तानिया दृ ओलिवर क्रामवेल, लन्दन, 1973

फ्लोरेंस, एल., बोमैन दृ ब्रिटेन इन दि मिडिल एजेज़, लन्दन, 1920

मैरीमैन, जॉन, एम0 – 'हिस्ट्री ऑफ़ मॉडर्न यूरोप' (बुक 1), न्यूयॉर्क, 2009

मुखर्जी, एल0 – 'ए स्टडी ऑफ़ यूरोपियन हिस्ट्री' , कोलकाता, 2000

बट, आर0 – 'ए हिस्ट्री ऑफ़ पार्लियामेन्ट इन दि मिडिल एजेज़' लन्दन, 1989

रसेल, कोनराड दृ दि क्राइसिस ऑफ़ पार्लियामेंट्स; इंग्लिश हिस्ट्री, 1509–1660, न्यूयॉर्क, 1971

सेल्स, जी0 ओ0 – 'दि किंग्स पार्लियामेन्ट ऑफ़ इंग्लैण्ड', लन्दन, 1981

8.11 उपयोगी पाठ्य सामग्री

जेनकिन्स, सिमोन – 'ए शार्ट हिस्ट्री ऑफ़ इंग्लैण्ड', लन्दन, 2012

जोंस, जे. आर. दृ ब्रिटेन एंड यूरोप इन दि सेवेंतींथ सेंचुरी, न्यूयॉर्क, 1961

मैकाले, टी0 बी0 – 'दि हिस्ट्री ऑफ़ इंग्लैण्ड फ्रॉम दि एक्सेशन ऑफ़ जेम्स सेकेन्ड, न्यूयॉर्क , 2009

8.12 निबंधात्मक प्रश्न

1. 1688 की गौरवपूर्ण क्रान्ति के कारणों पर प्रकाश डालिए.

इकाई नौः प्रबोधन का युग

9.1 प्रस्तावना

9.2 उद्देश्य

9.3 प्रबोधन का युग

9.4 प्रबोधन से संबंधित विचार

9.5 कुछ प्रमुख विचारक

9.5.1 पियरे बेयल

9.5.2 मॉण्टेस्क्यू

9.5.3 वॉल्टेयर

9.5.4 जीन जैकस रूसो

9.5.5 दिदरो

9.5.6 क्वेसने

9.6 प्रबोधन का प्रभाव

9.7 सारांश

9.8 स्वमूल्यांकित प्रश्नों के उत्तर

9.9 शब्दावली

9.10 संदर्भ ग्रंथ सूची

9.11 निबंधात्मक प्रश्न

9.1 प्रस्तावना

18वीं सदी के वैविध्य और परस्पर विरोधी प्रकृति वाला प्रबोधन जो सामान्यः तर्क के युग के नाम से जाना जाता है, वस्तुतः पिछली सदी की बौद्धिक उत्तेजना का ऋणी है। 17वीं सदी की वैज्ञानिक क्रान्ति ने ऐसे प्रारूप प्रस्तुत किये जिनके द्वारा समस्या का समाधान तार्किक विचारों और प्रयोगों के द्वारा संभव हो सका। वास्तव में फ्रांसिसी दार्शनिक, गणितज्ञ और वैज्ञानिक रेने देकार्ट ने मानव की तार्किक क्षमता को उसके अस्तित्व का प्रमुख प्रमाण माना। वैज्ञानिक क्रान्ति तो वास्तव में 16वीं सदी के मध्य में ही प्रारंभ हो चुकी थी जब कॉपरनिकस ने प्राचीन काल से मान्य टॉलेमी के विचार कि पृथ्वी ही ब्रह्माण्ड का केन्द्र है का खण्डन कर यह बताया कि वास्तव में सूर्य, ब्रह्माण्ड का केन्द्र है। इस वैज्ञानिक क्रान्ति ने 1687 में सर आइजैक न्यूटन की प्रिसंपिया के प्रकाशन के साथ चरमोत्कर्ष प्राप्त किया, प्रिंसपिया में यान्त्रिक ब्रह्माण्ड को सार्वजनीन गति के नियमों द्वारा सविस्तार समझाया गया। प्रिंसपिया से उद्भूत विचारों ने उस युग में मौलिक बौद्धिक परिवर्तन

प्रारंभ कर दिये। 18वीं सदी के प्रारंभिक दौर से ही अनुमान का केन्द्र धार्मिकता से हटकर धर्मनिरपेक्ष होने लगा था, यह नया दृष्टिकोण इस बात से समझा जा सकता है कि फ्रांस का शासक लुई XIV एक ठेठ 17वीं सदी का शासक था जो शासक के रूप में राज्य का प्राथमिक कर्तव्य धार्मिक नेतृत्व को मानता था, उसके द्वारा 1685 में नॉट के अभिलेखों का खण्डन किया गया जिससे हजारों प्रोटेस्टेण्टों को फ्रांस से भागना पड़ा, यह उदाहरण उसके राज्य की धार्मिक एकता के प्रति उसकी सोच को बतलाता है, जबकि दूसरी ओर 18वीं सदी में प्रशा का शासक फ्रेडरिक महान् मूलतः एक धर्मनिरपेक्ष शासक था। वह स्वयं को राज्य का प्रथम सेवक मानता था, उसके अनुसार उसकी प्रजा का धर्म उनका व्यक्तिगत मामला है और राज्य का इससे कुछ लेना–देना नहीं है। उसकी मुख्य रूचि अपनी सैन्य क्षमता का विकास, जनता की समृद्धि और सुरक्षा में थी।

अब विज्ञान और बौद्धिक जांच–पड़ताल लोगों को एकबद्ध करने के सार्वजनिक आधार बन गये जो पहले कैथोलिक और प्रोटेस्टेण्ट में विभाजित थे। अब आनन्द की खोज इस जगत में की जाने लगी। तर्क ने एकीकरण का सिद्धान्त प्रस्तुत किया और साथ ही मानव को आनन्द वृद्धि की कुंजी के साथ वह स्थान प्राप्त किया जो पहले धर्म को प्राप्त था। यह माना जाने लगा कि तर्क के सही प्रयोग से समाज की समस्याओं का निदान किया जा सकता है और सभी मनुष्य समृद्धता और खुशहाली से जी सकते हैं। इस आशावाद ने बढ़ते हुए आर्थिक अवसरों की अनुभूति उत्पन्न की। 18वीं सदी का यूरोप अब तक का सबसे सम्पन्न और जनसंख्या वाला यूरोप बन गया। बढ़ती हुई आर्थिक संवृद्धि ने यह भावना विकसित की कि वैज्ञानिक तरीके न केवल भौतिक जगत की कुंजी है वरन् यह धर्मशास्त्र, इतिहास, राजनीति और सामाजिक समस्याओं का हल भी प्रदान कर सकती है। तर्कपूर्ण वैज्ञानिक अन्वेषण के फलस्वरूप उत्पन्न उन्नति से किसानों ने कृषि में सुधार किया और उद्यमियों ने उत्पादों और नयी तकनीकों के साथ प्रयोग करने प्रारंभ कर दिये।

9.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई प्रबोधन से संबंधित है इसको पढ़ने के बाद आप अग्रांकित जानकारियां प्राप्त कर सकेंगे–

- प्रबोधन काल के विचार
- प्रबोधन युग के प्रमुख विचारक
- प्रबोधन का प्रभाव

9.3 प्रबोधन का युग

वैज्ञानिक सोच का प्रभाव 18 वीं सदी के चिंतन में स्पष्ट रूप से दिखाई देने लगता है। इस सदी के दृष्टिकोण में एक नवीन विकास यह दिखता है कि धर्म निरपेक्ष और विवके सम्मत पूछताछ को बढ़ावा दिया गया, इसे ही प्रबोधन कहा गया है। इस सोच या प्रबोधन का प्रभाव यह पड़ा कि इस काल के लेखकों एवं विद्वानों ने सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक आदि क्षेत्रों में समाज में फैली बुराइयों को उद्घाटित करना प्रारंभ कर दिया।ये लेखक तर्क, सहिष्णुता और मानवता को सर्वाधिक महत्व देते थे। विश्लेषणात्मक शैली में लिखी गयी इस काल की रचनाओं में विचारों, संस्थाओं एवं पद्धतियों का अत्यधिक गहन परीक्षण किया गया है।प्राचीन परंपराओं के विरूद्ध कठोर आलोचनाओं से युक्त इस काल के साहित्य में समाज को सुधारने के लिए नये ढांचे

पर भी विचार किया गया मिलता है। फ्रांसीसी इतिहासकार परम्परागत रूप से प्रबोधन के काल को 1715 ई0 जब लुई XIV की मृत्यु हुई थी और 1789 ई0 जब फ्रांस की क्रांति की शुरूआत हुई थी, के मध्य रखते हैं, जबकि कुछ आधुनिक इतिहासकार 1620 के दसक से प्रबोधन के युग का प्रारंभ मानते हैं जब वैज्ञानिक क्रान्ति का प्रारंभ हुआ था। प्रबोधन के कुछ प्रमुख व्यक्तियों में जिन लोगों के नाम शामिल हैं उनमें महत्वपूर्ण हैं, फ्रांस के मॉण्टेस्क्यू (1689–1755); वॉल्टेयर (1694–1778); दिदरो (1713–1784); रूसो (1712–1778); कांडिलैक (1714–1780) और काण्डोर्सेट (1743–1794); ब्रिटेन के डेविड ह्यूम (1711–76) और एडम स्मिथ (1723–1790); जर्मनी के लेसिंग (1729–1781), और काण्ट (1724–1804); इटली के गैम्बटिस्टा विको (1668–1744); बेकारिया (1734–1794) और पगानो (1748–1799)।

प्रबोधन का युग अपने पूर्वगामी वैज्ञानिक क्रान्ति से अत्यन्त निकटता से संबंधित था। कुछ पूर्व के दार्शनिकों जिन्होंने प्रबोधन को प्रभावित किया उनमें बेकन (1562–1626), देकार्ट (1596–1650), जॉन लॉक (1632–1704); स्पीनोजा (1632–1677); पियरे बेयल (1647–1706) और सर आइजक न्यूटन (1642–1727) शामिल हैं।

प्रबोधन के युग का सबसे महत्वूर्ण प्रकाशन 'इनसाइक्लोपीडिया' था, जिसे दिदरो, डि एलम्बर्ट तथा 150 वैज्ञानिकों एवं दार्शनिकों के एक दल द्वारा संकलित किया गया था, यह 1751 और 1772 के बीच 35 खण्डों में प्रकाशित किया गया था। इसके द्वारा प्रबोधन के विचार सम्पूर्ण यूरोप और उसके बाहर भी प्रसारित हुए। अपने विश्वकोश में उसने एकतंत्रात्मक सत्ता, धार्मिक असहिष्णुता, दास प्रथा तथा सामतंवादी पद्धति जैसे विषयों पर सविस्तार प्रकाश डाला। उसने समाज में फैली असमानता, चर्च के भ्रष्टाचार और शासन की बंराइयों पर भी चर्चा की। उसने वैज्ञानिक एवं औद्योगिक बातों पर भी विचार विमर्श किया। इस विश्वकोश द्वारा उसने विभिन्न बुराइयों को जनता के समक्ष रखा और विश्वकोश का जनता पर व्यापक प्रभाव भी पड़ा।इनसाइक्लोपीडिया के अलावा जो अन्य महत्वपूर्ण पुस्तकें थीं उनमें वाल्टेयर द्वारा लिखित 'लेटर्स ऑन इंग्लिश', रूसो द्वारा लिखित 'डिस्कोर्स ऑन इक्वैलिटी', तथा 'सोशल काण्ट्रेक्ट', मॉण्टेस्क्यू की 'स्पिरिट ऑफ लॉ' शामिल थी।

9.4 प्रबोधन से संबंधित विचार

प्रबोधन युग के दार्शनिकों ने सर्वाधिक महत्व स्वतन्त्रता, विकास, तर्क, सहिष्णुता और चर्च तथा राज्य की बुराइयों को समाप्त करने में दिया। हांलाकि इन उददेश्यों को प्राप्त करने के साधनों में उनके विचारों में वैभिन्य मिलता है। वैज्ञानिक दृष्टिकोण से उत्पन्न चिंतन ने इस युग के विचारों को परिवर्तित कर दिया था, अब धर्मनिरपेक्ष चिंतन और विवेकपूर्ण पूछताछ को बढ़ावा दिया जाने लगा। इस काल के लेखक सामाजिक बुराइयों को उद्घाटित करने लगे। उन्होंने तर्क, सहिष्णुता और मानवता को सबसे आगे रखा। प्रबोधन युग में आम जनता के विचारों और दृष्टिकोण में विज्ञान तथा तर्क को बढ़ावा देने के कारण इतना अधिक परिवर्तन आ गया कि अनेकों लोग इसे बौद्धिक क्रान्ति भी कहने लगे। इस युग में चिंतन का केन्द्र मनुष्य था और मानव कल्याण को परम लक्ष्य माना गया। यह माना गया कि राज्य, चर्च तथा अन्य संस्थाओं को निरंतर मानव

कल्याण के लिए प्रयत्नशील रहना चाहिए। अब मानव गरिमा, मानवीय अधिकार तथा मानवीय आदर्शों को स्थापित किया जाने लगा, इन्होंने मध्यकालीन परंपराओं, सामंतवादी समाज, रूढ़िवादी धर्म और निरंकुश राजतन्त्र सभी का तिरस्कार करना प्रारंभ किया।

इस युग का यह सामान्य विचार था कि विश्व एक विशाल मशीन की भांति है जो कुछ प्राकृतिक नियमों के अनुसार संचालित होती है, ये नियम शाश्वत एवं अपरिवर्तनीय हैं। मनुष्य को चाहिए कि वह इन प्राकृतिक नियमों का पता लगाये, अपने क्रियाकलापों को इन नियमों के अनुसार संचालित करे और इन नियमों का अतिक्रमण करने का प्रयत्न न करे। बुद्धि और तर्क द्वारा इन प्राकृतिक नियमों का ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है, जो नियम तर्क एवं बुद्धि की कसौटी में खरे उतरते हैं, वे ही सही है और मनुष्यों के लिए श्रेयस्कर हैं, लेकिन जो तर्क, बोधगम्य न होकर केवल प्राचीन मान्यताओं, विश्वासों और परम्पराओं पर आधारित हैं वे मनुष्य के लिए हितकारी नहीं हो सकते हैं। मनुष्य एक बुद्धिवान प्राणी है जिसके द्वारा वह प्राकृतिक नियमों का ज्ञान प्राप्त कर सकता है। सभी मुनष्य एक समान उत्पन्न होते हैं, उनमें जो अन्तर मिलता है वह केवल शिक्षा और उन्नति के समान अवसर न मिल पाने की वजह से है। समाज में सभी मनुष्यों का समान स्थान और महत्व होता है।

9.5 कुछ प्रमुख विचारक

प्रबोधन का युग बौद्धिक क्रियाकलाप का युग है, इस युग में अनेकों दार्शनिकों, लेखकों, वैज्ञानिकों ,विचारकों एवं चिंतकों ने जनसामान्य के मध्य ज्ञान, बुद्धि, तर्क के प्रति जागृति उत्पन्न करने का कार्य किया था। कुछ प्रमुख विचारकों के विषय में आपको यहां पर जानकारी दी जा रही है–

9.5.1 पियरे बेयल

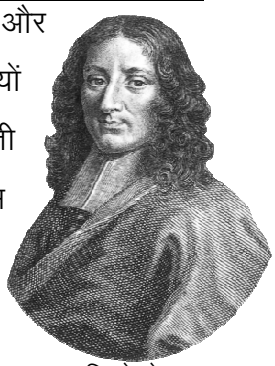
पियरे बेयल

फ्रांस का पियरे बेयल, लुई XIV का समकालीन था। वह सत्य का पक्षपाती था और वैज्ञानिक चिंतन पर विश्वास रखता था। उसका मानना था कि किसी भी धर्म के अनुयायियों को अपने विरोधियों के साथ शक्ति का प्रयोग नहीं करना चाहिए, क्योंकि इसमें प्रतिक्रिया होती है जिसका कोई अंत नहीं होता। अपनी पुस्तक 'व्हॉट होली कैथोलिक फ्रांस अण्डर दी रिजीम ऑफ लुई फोरटीन्थ रियली इज?' में उसने लुई XIV द्वारा नॉट की घोषणा की आलोचना की है। उसकी, 'हिस्टोरिकल एण्ड क्रिटिकल डिक्शनरी' में उसने वैज्ञानिकों, इतिहासकारों, धर्मशास्त्रियों और दार्शनिकों के जीवन तथा उनकी कृतियों एवं विचारों का सूक्ष्म विवेचन किया है।

9.5.2 मॉण्टेस्क्यू

मॉण्टेस्क्यू भी फ्रांस का एक प्रसिद्ध विचारक था।उसका जन्म 1689 ई. में फ्रांस के एक कुलीन घराने में हुआ था।वह उच्च कोटि का वकील और बोर्दो की संसद में न्यायाधीष था।फ्रांस की तत्कालीन शासन पद्यति से वह असंतुष्ट था, 1729 ई. में अपने इंग्लैण्ड भ्रमण के दौरान उसे इंग्लैण्ड की शासन व्यवस्था को नजदीक से जानने का अवसर मिला और उसे प्रतीत हुआ कि इंग्लैण्ड की शासन व्यवस्था फ्रांस से काफी अच्छी है। उसकी सर्वाधिक प्रसिद्ध रचना,

'स्पिरिट ऑफ लॉज' में उसने अपने विचारों को व्यक्त किया है।वह इस बात को नहीं मानता था कि इसमें सामाजिक, भौगोलिक, राजनीतिक तथा आर्थिक शक्तियों के संबंधों पर चर्चा की गयी है। साथ ही दासता, धार्मिक अत्याचार और निरंकुशतावाद पर आक्रमण किया गया है। उसने राजा के दैवी अधिकारों की निंदा की है और संवैधानिक राजतन्त्र का समर्थन किया है। इस पुस्तक में उसने 'शक्ति पार्थक्य' के सिद्धान्त को भी प्रतिपादित किया है। **स्पिरिट ऑफ लॉज** की गणना विश्व के महानतम् ग्रन्थों में की जाती है। 'पर्शियन लेटर्स' नामक उसकी पुस्तक फ्रांस के तत्कालीन धर्म, रीति–रिवाजों, परम्पराओं तथा निरंकुश शासन पर व्यंग करती है और फ्रांस के तत्कालीन पतनोन्मुख राजतंत्रपर भी गहनता से विचार करती है।

अठारहवीं सदी में माण्टेस्क्यू का प्रथक्करण का सिद्धान्त जनता में अत्यधिक लोकप्रिय हुआ और इस सिद्धान्त को राजनीतिक स्वतंत्रता का मूल मन्त्र माना जाने लगा।

9.5.3 वॉल्टेयर

वॉल्टेयर

फ्रांस का वॉल्टेयर एक महान् लेखक, कवि, दार्शनिक, पत्रकार, नाटककार, आलोचक और व्यंगकार था।उसका जन्म 1694 ई. में पेरिस के एक धनी परिवार में हुआ था। उसने अपने लेखन द्वारा राज्य और चर्च में व्याप्त भ्रष्टाचार, अभिजात्य वर्ग के विशेषाधिकार इत्यादि की घोर आलोचना की।उसकी शैली व्यंगात्मक थी, उसने फ्रांस में प्रचलित तत्कालीन कुप्रथाओं में तीखे व्यंगात्मक लेख लिखे और समाज को जागरूक किया, शीघ्र ही वह यूरोप में एक लोकप्रिय साहित्यकार के रूप में जाना जाने लगा। उसकी कुछ प्रमुख पुस्तकों में, 'लैटर्स ऑन इंग्लिश', 'एज ऑफ लुई XIV', 'ट्रिटाइज ऑन टॉलरेन्स' हैं। वॉल्टेयर को समस्त यूरोप में विवेक, प्रबुद्धता और प्रकृति के सिद्धान्त के प्रचार–प्रसार का श्रेय दिया जा सकता है। उसने निरन्तर अन्याय, कटटरता, विशेषाधिकार और धार्मिक दुराग्रह का प्रभावशाली ढंग से विरोध किया, उसके समय के लोग सम्मान से उसे 'राजा वॉल्टेयर' कहते थे।उसने अपने युग में प्रचलित अन्याय, अत्याचार, धार्मिक पक्षपात और अंधविश्वासों के विरूद्ध जमकर लिखा लेकिन वह सर्वाधिक विरोधी तत्कालीन चर्च व्यवस्था का था और उसने चर्च के विरूद्ध तीखे व्यंगात्मक बाण चलाये। इतिहासकार एच.जे. रोज ने उसे 'फ्रांसीसी विचारों का पूर्ण दर्पण' बताया है।

9.5.4 जीन जैकस रूसो

जीन जैकस रूसो को फ्रांस का सबसे प्रबुद्ध दार्शनिक माना जाता है।उसका जन्म 1712 ई. में जेनेवा में हुआ था, उसका पिता एक घड़ीसाज था। उसने अनेक निबन्ध, लेख तथा उपन्यासों के साथ–साथ स्वयं की जीवनी भी लिखी।अपने एक निबंध 'डिस्कोर्सेज ऑन साइन्स एण्ड आर्टस्' में में उसने तत्कालीन सभ्यता की जमकर आलोचना की। उसने लिखा कि भौतिक सुख होने का मतलब आर्थिक प्रगति कदापि नहीं है, वरन् आधुनिक काल की प्रगति तो मनुष्य को पतन के मार्ग में ले जा रही है। मनुष्य की वास्तविक प्रगति वस्तुतः नैतिक प्रगति है। उसका मानना था कि

आधुनिक युग के विपरीत प्राचीन काल का मनुष्य अधिक नैतिक था। आधुनिक युग में नैतिकता की जगह असमसनता, भ्रष्टाचार, क्रूरता और द्वेष का अधिक विकास हुआ है। उसकी सर्वाधिक प्रसिद्ध पुस्तक, 'सोशल काण्ट्रेक्ट' है। इसी पुस्तक कें प्रारंभ में लिखा गया है कि, *'मनुष्य स्वतन्त्र पैदा होता है परन्तु वह सर्वत्र जंजीरों में जकड़ा हुआ है*।' इस पुस्तक के अनुसार आदिम काल में मनुष्यों को स्वतन्त्रता, समानता और भ्रातृत्व प्राप्त था, लेकिन जैसे–जैसे मनुष्य सभ्य होता गया उसने एक समवेत शक्ति उत्पन्न करने के लिए समझौता किया और इस प्रकार राज्य का जन्म हुआ। रूसो के अनुसार राज्य का जन्म सत्ता तथा उन लोगों के बीच एक समझौता था, जिन्होंने उसका निर्माण किया था। अतः सत्ताधिकारी यहां तक कि स्वयं राजा भी जनता के प्रतिनिधि हैं। अतः यदि जनता के प्रतिनिधि स्वतन्त्रता, समानता और बन्धुत्व–भाव में हस्तक्षेप करते हैं तो जनता को चाहिए कि वह उन्हें बदल दे। रूसो निरंकुश राजतन्त्र का घोर विरोधी था। वह जनतन्त्र को आदर्श शासन प्रणाली मानता था। रूसो की महानता के विषय में नेपोलियन ने कहा था कि, *'रूसो का जन्म न होता तो फ्रांस की राज्य क्रांति का होना असंभव था*।

9.5.5 दिदरो

दिदरो

दिदरो भी फ्रांस का एक प्रमुख दार्शनिक था। वह '**इनसाइक्लोपीडिया**' का प्रमुख संकलनकर्ता था। सभी मध्यकालीन संस्थाओं का उसने घोर विरोध किया था, उसका मानना था कि समस्त कटुता को निरकुंश शासकों एवं पादरियों ने उत्पन्न किया था। उसकी इनसाइक्लोपीडिया में धार्मिक असहिष्णुता, अन्धविश्वास, दासों के व्यापार, पादरियों का भ्रष्ट जीवन, अवांछित करों और अभिजात वर्ग के विशेषाधिकारों को निशाना बनाया गया है। इस ग्रन्थ में विज्ञान और तर्कवाद को सर्वाधिक महत्व दिया गया है।

9.5.6 क्वेसने

क्वेसने

क्वेसने फ्रांस का एक भू–अर्थशास्त्री था, वह लुई पन्द्रहवें का राजवैद्य भी था वह और उसक अर्थशास्त्री मित्र आय–व्यय व्यापार, व्यवसाय इत्यादि विषयों में चिंतन करते थे। उनका मानना था कि उस काल में विद्यमान आर्थिक बुराइयों को दूर कर उन पर सुर करना चाहिए। उस काल में भू–अर्थशास्त्रियों का मानना था कि भूमि और कृषि ही धन के वास्तविक स्रोत होते हैं , क्योंकि व्यापार में केवल स्थान परिवर्तन के कारण वस्तु का मूल्य बढ़ता है और उसे धन का उत्पादन नहीं कहा जा सकता है।वास्तव में देखा जाय तो सभी चीजें प्रकृति की ही देन हैं,अतः धन का मूल स्रोत तो प्रकृति ही है, जहां से हमें कृषि उत्पाद, मत्स्य उत्पाद और खनिज पदार्थ प्राप्त होते हैं और वास्तव में ये ही धन उत्पन्न करते हैं अतः राज्य को चाहिए कि वह उत्पादन के इन क्षेत्रों में हस्तक्षेप न करे और उन्मुक्त व्यापार को प्रोत्साहित करे। क्वेसने का मानना था कि किसानों पर

कर्ज का बोझ कम होना चाहिए क्योंकि यदि किसान गरीब है तो राज्य के साथ–साथ राजा भी गरीब हो जायेगा। क्वेसने और उसके साथियों का प्रधान सिद्धान्त था कि आर्थिक जगत को खुला छोड़ दो

स्वमूल्यांकित प्रश्न

अग्रांकित प्रश्नों में रिक्त स्थान की पूर्ति कीजिए।

1. व्हॉट होली कैथोलिक फ्रांस अण्डर दी रिजीम ऑफ लुई फोरटीन्थ रियली इज?' के लेखक..... .हैं।
2. स्पिरिट ऑफ लॉज' के लेखक.....हैं।
3. लेटर्स ऑन इंग्लिश' के लेखक.....हैं।
4. डिस्कोर्स ऑन इक्वैलिटी' के लेखक.....हैं।
5. सोशल काण्ट्रेक्ट के लेखक.....हैं।
6. *'मनुष्य स्वतन्त्र पैदा होता है परन्तु वह सर्वत्र जंजीरों में जकड़ा हुआ है*।'यह कथन .....ने कहा है।
7. *'रूसो का जन्म न होता तो फ्रांस की राज्य क्रांति का होना असंभव था*'।यह कथन .....ने कहा है।
8. ..... 'इनसाइक्लोपीडिया' का प्रमुख संकलनकर्ता था।
9. 'एज ऑफ लुई XIV के लेखक.....हैं।
10. ट्रिटाइज ऑन टॉलरेन्स' के लेखक.....हैं।
11. 'हिस्टोरिकल एण्ड क्रिटिकल डिक्शनरी' के लेखक.....हैं।
12. 'पर्शियन लेटर्स' के लेखक.....हैं।
13. प्रिसंपिया के लेखक.....हैं।

9.6 प्रबोधन का प्रभाव

18वीं सदी बुद्धिवाद और तर्कवाद की सदी थी, जैसा कि ऊपर बताया गया है विभिन्न दार्शनिकों, विद्वानों ने अपने लेखन द्वारा इस काल में व्यापक जनजागृति उत्पन्न कर दी थी। यह स्वाभाविक है कि इस जागृति का प्रभाव यूरोप के विभिन्न शासकों में भी पड़ा। इस काल के प्रमुख शासक जिनमें इस जागृति का प्रभाव पड़ा था, उनमें रूस की साम्राज्ञी कैथरीन, ऑस्ट्रिया का सम्राट जोसेफ द्वितीय, प्रशा का राजा फ्रेडरिक द्वितीय, स्पेन का राजा चार्ल्स तृतीय, पुर्तगाल का शासक जोसेफ प्रथम, स्वीडन का राजा गुस्ताव तृतीय तथा टस्कनी का शासक चार्ल्स इमैन्युअल तृतीय प्रमुख थे। यद्यपि ये सभी शासक स्वेच्छाचारी और निरंकुश थे और अपनी इच्छा को ही कानून मानते थे पर जागृति की लहर ने इन्हें प्रबुद्ध निरंकुश बना दिया, इन्होंने अपने–अपने देशों की राजनीतिक, आर्थिक और सामाजिक अवस्था को नये विचारों के अनुसार परिवर्तित करने का प्रयास किया। सभी ने कम या अधिक मात्रा में प्रशासनिक सुधारों को क्रियान्वित किया। कानूनी कार्यप्रणाली में एकरूपता लाने का प्रयास किया, कानूनों को संहिताबद्ध किया, कर–पद्धति को न्याय संगत बनाया। जन साधारण की शिक्षा व्यवस्था, कृषि दासों के प्रति मानवीयता, साहित्य का विकास, चिकित्सालयों का निर्माण आदि कार्यों को किया जाने लगा।

धर्म एवं अध्यात्म का क्षेत्र भी दार्शनिकों की आलोचना का प्रमुख क्षेत्र था, अतः यहां भी व्यापक प्रभाव पड़ना स्वाभाविक था। इस युग के प्रारंभ में लोगों की जो धार्मिक मान्यताऐं थी वे वस्तुतः इसाई धर्मग्रन्थों में लिखी बातों पर आधारित थीं और उनका कोई वैज्ञानिक आधार नहीं था। बौद्धिक क्रान्ति ने लोगों को यह समझाया कि इन प्रमाणों का तब तक कोई मूल्य नहीं जब तक कि उनमें लिखी बातें तर्क एवं बुद्धि की कसौटी में खरी न उतरें, इन ग्रन्थों की उन बातों को छोड़ने को कहा गया जो तार्किक न हों, बातों को स्वीकार करने से पहले उनकी सत्यता परीक्षण एवं तर्क से जांचना आवश्यक हो गया।

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

सही उत्तर छांटिये–

1. मॉण्टेस्क्यू की पुस्तक का क्या नाम था–

(i) द स्पिरिट ऑफ लॉज (ii)नेपालियन कोड

(iii)सोशल कॉण्ट्रेक्ट (iv)सभी गलत हैं

2.शक्ति पृथक्करण के सिद्धान्त का प्रतिपादन किस विद्वान ने किया–

(i) वॉल्टेयर (ii)दिदरो

(iii)मॉण्टेस्क्यू (iv)रूसो

3.''मनुष्य स्वतन्त्र उत्पन्न हुआ है, किन्तु सर्वत्र जंजीरों में जकड़ा हुआ है'' यह किसने कहा था–

(i) नेपालियन बोनापार्ट (ii)रूसो

(iii)मॉण्टेस्क्यू (iv) वॉल्टेयर

4. रूसो की प्रसिद्ध पुस्तक का नाम क्या है–

(i) सोशल कॉण्ट्रेक्ट (ii) द स्पिरिट ऑफ लॉज

(iii)ऑर्गेनाइजेशन ऑफ लेबर (iv)सोशल रिकन्स्ट्रक्शन

9.7 सारांश

फ्रांसीसी इतिहासकार परम्परागत रूप से प्रबोधन के काल को 1715 ई0 जब लुई XIV की मृत्यु हुई थी और 1789 ई0 जब फ्रांस की क्रांति की शुरूआत हुई थी, के मध्य रखते हैं, जबकि कुछ आधुनिक इतिहासकार 1620 के दसक से प्रबोधन के युग का प्रारंभ मानते हैं जब वैज्ञानिक क्रान्ति का प्रारंभ हुआ था। 18वीं सदी के प्रारंभिक दौर से ही अनुमान का केन्द्र धार्मिकता से हटकर धर्मनिरपेक्ष होने लगा था। प्रबोधन युग के दार्शनिकों ने सर्वाधिक महत्व स्वतन्त्रता, विकास, तर्क, सहिष्णुता और चर्च तथा राज्य की बुराइयों को समाप्त करने में दिया। इस युग के प्रमुख विचारकों में फ्रांस के मॉण्टेस्क्यू (1689–1755); वॉल्टेयर (1694–1778); दिदरो (1713–1784); रूसो (1712–1778); कांडिलैक (1714–1780) और काण्डोर्सेट (1743–1794); ब्रिटेन के डेविड ह्यूम (1711–76) और एडम स्मिथ (1723–1790); जर्मनी के लेसिंग

(1729–1781), और काण्ट (1724–1804); इटली के गैम्बटिस्टा विको (1668–1744); बेकारिया (1734–1794) और पगानो (1748–1799) आदि शामिल थे।

9.8 स्वमूल्यांकित प्रश्नों के उत्तर

1. पियरे बेयल
2. मॉण्टेस्क्यू
3. वॉल्टेयर
4. जीन जैकस रूसो
5. जीन जैकस रूसो
6. जीन जैकस रूसो
7. नेपोलियन
8. दिदरो
9. वाल्टेयर
10. वॉल्टेयर
11. पियरे बेयल
12. मॉण्टेस्क्यू
13. न्यूटन

14. वस्तुनिष्ठ प्रश्नों के उत्तर

1 . i 2 . iii 3 . ii 4 . i

9.9शब्दावली

आशावाद : यह विचार की भविष्य अच्छा होगा

इनसाइक्लोपीडिया : विश्वकोश

बोधगम्य : बुद्धि के तर्क–वितर्क से समझ में आने योग्य

अभिजात्य वर्ग : पोप, पादरी, राजा, उच्च अधिकारी एवं धनी लोग

दैवी अधिकार : ईश्वर द्वारा दिये गये अधिकार

9.10 संदर्भ ग्रंथ सूची

1. विश्व का इतिहास 1500–1950 : जैन एवं माथुर, जैन पुस्तक मंदिर, चौड़ा रास्ता, जयपुर।
2. आधुनिक पश्चिम का उदय – पार्थसारथि गुप्ता
3. ए हिस्ट्री आफ वर्ल्ड सिविलाइजेशन – जे0ई0 स्वेन
4. द आउट लाइन आफ हिस्ट्री – एस0जी0 वेल्स
5. हेज, सी.जे.एच.–ए पोलिटिकल एण्ड कल्चरल हिस्ट्री ऑफ मार्डन यूरोप, भाग 1एवं 2

9.11 निबंधात्मक प्रश्न

1. प्रबोधन से आप क्या समझते हैं? इस युग के प्रमुख विचारकों के बारे में बताइये।

इकाई दस – अमेरिकी क्रान्ति एवं उसका महत्त्व

10.1 प्रस्तावना

10.2 उद्देश्य

10.3 अमेरिकी क्रान्ति के मौलिक कारण

10.3.1 औपनिवेशिक शासन की त्रुटिपूर्ण व्यवस्था

10.3.2 इंगलैण्ड की व्यापारिक नीति

10.3.3 अन्य आर्थिक प्रतिबन्ध

10.3.4 जहाजरानी अधिनियम

10.3.5 सप्तवर्षीय युद्ध का प्रभाव

10.3.6 अमेरिका व इंगलैण्ड के परस्पर विरोधी दृष्टिकोण

10.3.7 ग्रेनविल के अनुचित कार्य

10.4 अमेरिकी युद्ध के तात्कालिक कारण

10.4.1 स्टाम्प अधिनियम

10.4.2 आयात कर अधिनियम

10.4.3 बोस्टन टी पार्टी

10.5 स्वतंन्त्रता संग्राम का आरम्भ

10.5.1 वर्साय की संधि

10.5.2 अमेरिका का सविधान

10.5.3 अंग्रेजो की असफलता के कारण

10.5.4 क्रांति का स्वरूप

10.6 अमेरिकी क्रान्ति का महत्त्व

10.7 अमेरिका के स्वतंत्र संग्राम के परिणाम

10.7.1 जार्ज तृतीय की निरंकुश शासन का अन्त

10.7.2 इंगलैण्ड द्वारा नवीन उपनिवेशों की स्थापना

10.7.3 इंगलैण्ड की परम्परागत औनिवेशिक नीति में परिवर्तन

10.7.4 आयरलैण्ड की जनता के अधिकारों में वृद्धि

10.7.5 फ्रांस की राजनीति पर प्रभाव

10.8 सारांश

10.9 सन्दर्भ ग्रन्थ

10.10 अभ्यासार्थ प्रश्न

10.1 प्रस्तावना

अमेरिकी क्रान्ति विश्व इतिहास के युगान्तरी घटनाओं में से एक है। इसने न केवल इंगलैण्ड एवं अमेरिका को प्रभावित किया, बल्कि सम्पूर्ण विश्व की राजनीति पर अपना गहरा प्रभाव डाला। इस क्रान्ति के बाद जनतांत्रिक, राजनीतिक व्यवस्था तथा राष्ट्रवाद पर आधारित स्वतंत्र राज्यों की स्थापना ,सारे संसार के लोगों का मुख्य ध्येय हो गया। ब्रिटिश सरकार के विरूद्ध अमेरिकी उपनिवेशों की जनता ने सम्पूर्ण विश्व के सामने स्वतंत्रता एवं राष्ट्रीयता की एक प्रेरणा दायक मिसाल पेश की।

अमेरिका में स्थित ब्रिटिश उपनिवेशों की कुल संख्या तेरह थी। उनमें आर्थिक, धार्मिक और राजनीतिक दृष्टि से परस्पर भिन्नता थी। प्रत्येक उपनिवेशों में अपनी अलग–अलग व्यवस्थापिका थी। ग्रेट ब्रिटेन द्वारा अपने उपनिवेशों पर बहुत सीमित मात्रा में अधिकार रखा जाता था। प्रत्येक उपनिवेशों में ब्रिटिश सरकार द्वारा एक गर्वनर जनरल की नियुक्ति की जाती थी ,यद्यपि उपनिवेशों की रक्षा का दायित्व ग्रेट ब्रिटेन पर था, किन्तु सामान्यतः उपनिवेश अपनी रक्षा स्वंय करते थे। ग्रेट ब्रिटेन इन उपनिवेशों से कच्चा माल मंगाता था तथा निर्मित माल इन उपनिवेशों को भेजता था। इस प्रकार तुलनात्मक दृष्टि से अन्य महान शक्तियों के उपनिवेशों की अपेक्षा ब्रिटेन के उपनिवेशों की स्थिति संतोषजनक थी। इतना होने के बावजूद अमेरिकावासियों ने ब्रिटिश सरकार के विरूद्ध स्वतंत्रता संग्राम प्रारम्भ क्यों किया ? यह एक विचारनीय बिन्दू है। वास्तव में इस युद्ध के कारणों को दो वर्गों में विभाजित किया जा सकता है। (1) दूरवर्ती अथवा मौलिक कारण (2) तात्कालिक अथवा प्रत्यक्ष कारण।

10.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप जान सकेंगे कि

- अमेरिकी की क्रान्ति के मौलिक एवं तात्कालिक कारण क्या थे।
- शोषण एवं असमानता के विरूद्ध लोगों में जागृति।
- अमेरिकी क्रान्ति का प्रस्फोटन एवं संघर्ष।
- वर्साय की संधि एवं इसके प्रावधान।
- अमेरिकी क्रान्ति का महत्त्व
- अमेरिका के स्वतंत्र आन्दोलन का विश्व समुदाय पर प्रभाव।

10.3 अमेरिकी क्रान्ति के मौलिक कारण

10.3.1 औपनिवेशिक शासन की त्रुटिपूर्ण व्यवस्था

प्रत्येक उपनिवेशक के गवर्नर को शासन–कार्य में सहायता करने के लिए एक व्यवस्थापिका होती थी, जिसके सदस्यों का चुनाव जनता करती थी। गवर्नर–कार्यकारिणी के सदस्यों का मनोनयन ब्रिटिश सम्राट द्वारा किया जाता था। व्यवस्थापिका जनता के प्रति उत्तरदायी होती थी, जबकि कार्यकारिणी सम्राट के प्रति उत्तरदायी होती थी। कानून का निर्माण करना तथा कर निर्धारण करना व्यवस्थापिका का कार्य था। किन्तु सबसे बड़ी विडम्बना यह थी कि व्यवस्थापिका द्वारा कानून को स्वीकार करने अथवा उन्हें रद्द करने का पूर्ण अधिकार गवर्नर जनरल को ही था। यह दोहरी शासन–व्यवस्था उपनिवेशों की जनता के असन्तोष का कारण बनी। उपनिवेशवासी अपने आंतरिक मामलों में अधिक राजनीतिक स्वतंत्रता चाहते थे, जबकि इसके विपरीत इंगलैण्ड उपनिवेशों के आन्तरिक मामलों को अपने नियन्त्रण में रखने के उद्देश्य ये अधिकतम हस्तक्षेप करता था, जो उपनिवेशों की जनता को पसन्द नहीं था।

10.3.2 इंगलैण्ड की व्यापारिक नीति

आर्थिक मामलों में ब्रिटेन की औपनिवेशिक नीति भी उपनिवेशवासियों के असंतोष का एक मुख्य कारण था। इंगलैण्ड, उपनिवेशों के आर्थिक शोषण की नीति का पालन करता था, तथा व्यापारिक नीति का निमार्ण अपने हितों को ध्यान मे रखकर करता था, न कि उपनिवेशों के हितों को। इंगलैण्ड ने अमेरिकी उपनिवेशों को अपनी स्वंय की अर्थव्यवस्था विकसित करने के लिए कभी प्रोत्साहन नहीं दिया। उपनिवेशों में लोहे के सामान, ऊनी वस्त्र, एवं टोपी बनाने के कार्य या तो निषिद्ध थे अथवा अति परिमित थे, जिससें उनका माल इंगलैण्ड से आने वाले माल से प्रतिस्पर्धा न कर सके। इंगलैण्ड अधिक से अधिक मात्रा में कच्चा माल उपनिवेशों से लाना चाहता था, और पुनः उनसे निर्मित वस्तुओं को उपनिवेशों में ऊँचे दामों पर बेचना चाहता था। उपनिवेशों के कुछ प्रमुख फसलें जैसे–कपास और तम्बाकू केवल ब्रिटेन को ही भेजा जा सकता था। इसका परिणाम यह हुआ कि इंगलैण्ड के व्यापारी अपनी स्वेच्छा से इन फसलों का दाम लेने लगे। इंगलैण्ड के व्यापारी इन वस्तुओं को स्वदेश में ही तथा अन्य देशों में ऊँचे दामों पर बेचकर काफी धन पैदा कर रहे थे। इस प्रकार सभी तरह से उपनिवेशों के उद्योग तथा व्यापार के विकास में रोड़े अटकाए जा रहे थे, अतः संघर्ष एवं प्रतिस्पर्धा की भावना पैदा होना निश्चित सा हो गया था।

10.3.3 अन्य आर्थिक प्रतिबन्ध

उपनिवेशवासियों पर अनेक अन्य व्यापारिक प्रतिबन्ध भी लगे हुए थे। इंगलैण्ड को छोड़कर कोई अन्य देश सीधे अमेरिका के साथ व्यापार नहीं कर सकता था और न अमेरिका को ही उन देशों के साथ व्यापार करने दिया जाता था। गैर–ब्रिटिश उपनिवेशों के साथ भी उपनिवेशवासियों को व्यापार करने की स्वतंत्रता नहीं थी। ब्रिटीश सांसद ने कुछ ऐसे कानून पास किए, जिससे अमेरिकी व्यापार को धक्का लगा। 1699 ई0 में एक कानून के द्वारा संसद ने उपनिवेशों से ऊनी माल बाहर भेजने पर प्रतिबन्ध लगा दिया। 1732 ई0 के एक अन्य कानून के अनुसार अमेरिका से हैट बाहर भेजने पर प्रतिबन्ध लगा दिया। इस प्रकार अमेरिकी व्यापार की प्रगति प्रतिबन्धों के द्वारा अवरूद्ध कर दी गयी। हालत यह थी कि वे बटन तथा घोड़े के नाल भी नहीं बना सकते थे।

10.3.4 जहाजरानी अधिनियम

ब्रिटेन की सरकार ने 1651, 1660 और 1689 ई0 जहाजरानी अधिनियम पास किये। ये अधिनियम उपनिवेशों के लिए अहितकर थे, इसलिए वे अप्रसन्न हो गये। वस्तुतः कुछ सीमा तक ये अधिनियम संघर्ष के कारण बने। इनके परिणामस्वरूप उपनिवेशों का व्यापार केवल अंग्रेजी जहाजों के माध्यम से ही किया जा सकता था। इस अधिनियम के द्वारा यह भी प्रतिबन्ध लगाया गया कि उपनिवेश विदेशों से सीधा व्यापार नहीं कर सकते थे, पुनः उसके जो माल इंगलैण्ड में उतारे जाते थे, उनसे चुगीं वसूली जाती थी। इससे उपनिवेशों के व्यपारियों को काफी हानि होती थी। वे विदेशों से सीधा व्यापार करना चाहते थे। दूसरी और क्रान्ति के पूर्व इंगलैण्ड के प्रधानमंत्री ग्रेनविल ने व्यापारिक नियमों का कठोरता से पालन करना चाहा। यह भी क्रान्ति का एक महत्वपूर्ण कारण बना।

10.3.5 सप्तवर्षीय युद्ध का प्रभाव

सप्तवर्षीय युद्ध में फ्रांस की पराजय हो जाने से सम्पूर्ण उत्तरी अमेरिका पर अंग्रेजों का अधिकार हो गया , इससे रेड इंडियन का यह भय स्थायी हो गया कि अंग्रेज सारे देश में फैल जाएगें और उनका नाश कर देगें। अतः वे विद्रोह करने लगे थे। इन विद्रोहों को दबाने तथा उपनिवेशवासियों की सुरक्षा के लिए एक विशाल स्थायी सेना को रखना आवश्यक हो गया। सरकार इस सेना पर होने वाले व्यय की अदायगी उपनिवेशवासियों पर नए कर लगाकर करना चाहती थी। यह भी असंतोष का एक महत्वपूर्ण बना। सप्तवर्षीय युद्ध में इंगलैण्ड को आर्थिक समस्या का सामना करना पड़ा तथा उसका राष्ट्रीय ऋण बढ़ गया। किन्तु अमेरिका की जनता को इंगलैण्ड की समस्याओं के प्रति कोई सहानुभूति नहीं थी। उसका तत्कालीन उद्देश्य आर्थिक व सामाजिक समस्याओं का समाधान ढूढ़ना था। इस प्रकार पारस्पारिक द्वेष की अग्नि धीरे–धीरे

प्रज्ज्वलित होने लगी थी। सप्तवर्षीय युद्ध के परिणामों ने अमेरिका की जनता में स्वतंत्रता की भावना का सूत्रपात करने में महत्वपूर्ण योगदान दिया था।

10.3.6 अमेरिका व इंगलैण्ड के परस्पर विरोधी दृष्टिकोण

अमेरिका में स्थित ब्रिटिश उपनिवेशों की जनता भी अंग्रेज जाति से सम्बन्धित थे, फिर भी दोनों का राजनीतिक एवं धार्मिक दृष्टिकोण अलग–अलग थे। अमेरिका के निवासी जनतन्त्र के समर्थक थे, जबकि इंगलैण्ड की जनता कुलीन राजतंत्र की समर्थक थी ,जो अंग्रेज ब्रिटेन से अमेरिका के लिए निष्कासित किये गये थे, उनका भी राजनीतिक व धार्मिक दृष्टि से इंगलैण्ड की सरकार से मतभेद था। वे अंग्रेजों के अनुचित व्यवहार को सहन नहीं करते थे तथा अमेरिका के निवासियों में स्वतंत्रता व जनतन्त्रता की भावना विकसित करते रहते थे इसके अतिरिक्त अमेरिका प्रत्येक क्षेत्र में उन्नति और विकास करने लगा था जिसके फलस्वरूप वहाँ के निवासियों में स्वतंत्रता व जनतंत्रता की भावना के प्रति आर्कषण उत्पन्न हो गया । दूसरी तरफ इंगलैण्ड की सरकार व जनता अमेरिका के उपनिवेशों पर राजतंत्रीय सिद्धान्तों के अनुसार अपना अधिकार बनाये रखना चाहती थी। वास्वत में इंगलैण्ड के तत्कालीन समाज में राजतन्त्र के समर्थकों, दास व्यापार करने वालों, सेनानायकों तथा बड़े व्यापारियों का विशेष प्रभुत्व था। ये लोग अमेरिकावासियों की स्वतंत्रता व जनतन्त्र की भावनाओं को किसी भी स्थिति में स्वीकार नहीं कर सकते थे। इस प्रकार दोनों देशों में परस्पर विरोधी दृष्टिकोण के कारण संघर्ष अनिवार्य हो गया।

10.3.7 ग्रेनविल के अनुचित कार्य

1763 ई0 में सप्तवर्षीय युद्ध के समाप्त होने के तुरन्त पश्चात ब्रिटिश प्रधानमंत्री ग्रेनविल ने अमेरिका स्थित ब्रिटीश उपनिवेश के सम्बन्ध में चार नियम पारित किये, ये सभी नियम अमेरिका की जनता के हितों के विपरीत थे। उसने उपनिवेशों में चोर बाजारी रोकने के लिए तथा वाणिज्य प्रणाली के स्थापित नियमों का विरोध करने वालों को दण्डित करने के लिए 1763 ई0 में एडमिरेल्टी कोर्ट (Admirality Court) की स्थापना की। इसी वर्ष शोरा कानून (Molasses Act) पारित करके अमेरिका में शोरा पर आयात कर घटा दिया गया। ग्रेनविल ने अमेरिकावासियों की सुरक्षा के नाम पर अमेरिका में छोटी सेना रखने की घोषणा की तथा इस सेना के सम्पूर्ण व्यय का 1/3 भाग का भुगतान करने का आदेश अमेरिकावासियों को दिया गया। एक अन्य नियम के अनुसार मिसीसिपी के बड़े–बड़े रेड इण्डियन्स (Red- Indians) के लिए सुरक्षित कर दिये गये। ग्रेनविल के इन कार्यों से अमेरिका की जनता अत्यन्त क्रोधित हो गई, क्योंकि उसकी दृष्टि में ये नियम इतने अपमानजनक थे कि जनता ने इन नियमों के विरोध में क्रान्ति करने का निश्चय कर लिया।

10.4 अमेरिकी युद्ध के तात्कालिक कारण

उपर्युक्त घटनाओं के साथ–साथ कुछ ऐसी घटनाएँ भी घटित हुई, जिन्होंने तात्कालिक रूप में अमेरिकावासियों को स्वतंत्र संग्राम के लिए प्रेरित किया था। ऐसी ही कुछ प्रमुख घटनाएँ निम्नलिखित है :–

10.4.1 स्टाम्प अधिनियम

1765 ई0 में ब्रिटिश सरकार साम्राज्य के व्यय की पूर्ति के लिए अमेरिकी उपनिवेशों की जनता से कुछ धन वसूल करना चाहती थी, किन्तु अमेरिकावासी सरकार को किसी प्रकार की आर्थिक सहायता देने को तैयार नहीं थे। फलस्वरूप ब्रिटिश प्रधानमंत्री ग्रेनविल ने 1765 में संसद में स्टाम्प अधिनियम पारित कराया। इस अधिनियम के अनुसार अमेरिका में सभी दस्तावेजों एवं कानूनी कागजातों पर सरकार द्वारा निर्धारित शुल्क का स्टाम्प लगाना अनिवार्य कर दिया गया। सरकार ने यह कदम साम्राज्य की आय में वृद्धि करने के उद्देश्य से उठाया था, किन्तु स्टाम्प या अन्य किसी रूप में अमेरिकावासियों से धन वसूल करना सरल कार्य नहीं था। आशंका के अनुरूप अमेरिका की जनता ने एक स्वर से इस अधिनियम का विरोध किया। सभी उपनिवेशवासियों ने ब्रिटीश सरकार के इस कदम का विरोध किया। उस समय तक ब्रिटीश संसद में अमेरिकावासियों को प्रतिनिधित्व प्राप्त नहीं था अतः चारों ओर से आवाज आने लगी – 'प्रतिनिधित्व के बिना कोई कर नहीं' (No

Taxation Without Representation) अमेरिका की जनता की यह दृढ़ धारणा थी कि ब्रिटिश सरकार को उसके आतंरिक मामलों में हस्तक्षेप करने का कोई अधिकार नहीं है।

इस अधिनियम का लगभग सभी उपनिवेशों में कड़ा विरोध हुआ। स्थान–स्थान पर विद्रोह होने लगे। इस अधिनियम का सामूहिक एवं सशक्त विरोध करने के उद्देश्य से एक विशाल जनसभा का आयोजन किया गया, जिसमें भाग लेने के लिए सभी उपनिवेशों का एक विशाल जन समूह उमड़ पड़ा। ऐसा प्रतीत होने लगा कि ब्रिटिश सरकार के विरूद्ध अमेरिका की जनता क्रान्ति करने के लिए कृतसंकल्प है। परिस्थति को नियंत्रित करने के उद्देश्य से ब्रिटिश सरकार ने विवश होकर 1766 ई0 में स्टाम्प अधिनियम को समाप्त कर दिया।

10.4.2 आयात कर अधिनियम

1767 ई0 ब्रिटिश सरकार ने आयात कर अधिनियम (Import Duties Act) पारित किया जिसके द्वारा अमेरिका में कागज चाय, शीशा, रंग, आदि वस्तुओं पर आयात कर लगा दिया गया। सरकार ने यह अधिनियम भी अमेरिका वासियों के सहमति के बिना पारित किया था। अतः स्वाभाविक रूप से इस अधिनियम का भी सर्वत्र विरोध होने लगा। उपनिवेशवासियों के विचार में यह कर अधिनियम भी औपनिवेशिक स्वराज के मौलिक सिद्धान्त के विपरीत था। अधिक विरोध होने पर सन् 1970 ई0 में प्रधानमंत्री लार्ड नार्थ ने कागज तथा शीशे से आयात कर समाप्त कर दिया, किन्तु चाय पर कर पूर्ववत बना रहा। यह नार्थ की भयंकर भूल थी। उपनिवेशवासी किसी वस्तु विशेष के लिए नहीं, अपितु सभी वस्तुओं पर कर लगाने के विरूद्ध थे अतः विरोध यथावत बना रहा।

10.4.3 बोस्टन टी पार्टी

1773 ई0 में ब्रिटिश सरकार ने एक नवीन चाय अधिनियम बनाकर अमेरिका में चाय बेचने का प्रत्यक्ष अधिकार ईस्ट इण्डिया कम्पनी को प्रदान कर दिया। अमेरिका के निवासियों ने इस अधिनियम का भी विरोध किया तथा उन्हें बोस्टन के बन्दरगाह पर रूके हुये सभी अंग्रेजी जहाजों में बलात प्रवेश करके चाय के लगभग 350 डिब्बों को समुन्द्र में फेंक दिया। इस घटना से ब्रिटिश सरकार आश्चर्य में पड़ गयी। अमेरिका की जनता का यह कृत सरकार की शक्ति व अस्तित्व को चुनौती देने वाला तथा अपमानित करने वाला था। अतः सरकार ने अमेरिका में दमनात्मक कार्यवाही करने का निश्चय किया। सभी उपनिवेशों में सैनिक शासन लागू कर दिया गया। बोस्टन का बन्दरगाह सभी प्रकार के व्यापार के लिए बन्द कर दिया गया। सरकार के इस कार्यवाही के फलस्वरूप अनेक लोग बेकार हो गये। एक अन्य अधिनियम के द्वारा कनाडा की सीमा को ओहियों नदी तक बढ़ा दिया गया।

10.5 स्वतन्त्रता संग्राम का प्रारम्भ

ब्रिटिश सरकार की दमानात्मक कार्यवाही अमेरिकी जनता के अपमान का सूचक थी। अतः अमेरिका स्थित सभी उपनिवेशों की जनता की एक विशाल सभा 1774 ई0 में फिलाडेलफिया में आयोजित की गयी। इस सभा में ब्रिटिश सरकार से बात–चीत के द्वारा समस्या सुलझाने का प्रस्ताव पारित किया गया, किन्तु ब्रिटिश सम्राट जार्ज तृतीय तथा प्रधानमंत्री लार्ड नाथ की अदूरदर्शितापूर्ण नीति एवं हटधर्मी के कारण वार्ता सम्भव नहीं हो सकी। साम्राट द्वारा वार्ता के माध्यम से समस्या सुलझाने से इनकार करने तथा ब्रिटिश सेनाओं के सतर्क रहने के आदेश देने से स्थिति और गंभीर हो गयी। 1776 ई0 में सभी उपनिवेशों की एक सभा पुनः फिलाडेलफिया में आयोजित की गयी। 14 जुलाई 1776 ई0 को इस सभा ने अमेरिका की स्वतंत्रता की घोषणा कर दी तथा सभी उपनिवेशो को मिलाकर संयुक्त राज्य अमेरिका के नाम से एक नये राष्ट्र की स्थापना की भी घोषणा कर दी। इसके साथ ही जार्ज वाशिंगटन के नेतृत्व में अमेरिका वासियों का स्वतंत्रता संग्राम का श्री गणेश हो गया।

अमेरिकी स्वतंत्रता संग्राम का युद्ध निरन्तर सात वर्षों से (1776–1783) तक चला। इस युद्ध में अमेरिका की जनता ने फ्रांस से इंगलैण्ड के विरूद्ध सहायता मांगी जिसे फ्रांस ने तुरन्त स्वीकार कर लिया। 1778 ई0 में उसने अमेरिका के समर्थन में ब्रिटेन के विरूद्ध युद्ध की घोषण कर दी। इतिहासकार ट्रेवेलियन ने

इस तथ्य की पुष्टि करते हुए लिखा है कि '' फ्रांस का उद्देश्य अमेरिका की सहायता करना नहीं था उसका उद्देश्य तो ब्रिटिश सरकार के विघटन में सहायता देकर सप्तवर्षीय युद्ध में हुई पराजय का बदला लेना था'' प्रारम्भ में युद्ध के विभिन्न मोर्चों पर अमेरिकी सेना की भीषण पराजय हुई तथा प्रधान सेनापती जार्ज वाशिंगटन को देश छोड़कर भागना पड़ा, किन्तु उसके अदम्य साहस, कूटनीति, दूरदर्शिता तथा फ्रांस व स्पेंन के सक्रिय सैनिक समर्थन के बल पर अन्ततः अमेरिका की विजय हुई। यह फ्रांस के सहयोग का ही परिणाम था। 1781 में यॉर्कटाउन (York Town) के युद्ध में लार्ड कार्नवालिस के नेतृत्व में ब्रिटिश सेना की भीषण पराजय हुई और उसे आत्मसमर्पण करना पड़ा। अमेरिका के स्वतंत्रता संग्राम की समस्त घटनाओं में यह सर्वाधिक महत्वपूर्ण घटना थी। इस विजय के फलस्वरूप अमेरिका के प्रसिद्ध क्रान्तिकारी जार्ज वाशिंगटन के सम्मान में और अधिक वृद्धि हुई।

10.5.1 वर्साय की संधि (1783)

युद्ध में पराजित होने के पश्चात् विवश होकर ग्रेट ब्रिटेन ने संधि वार्ता का प्रस्ताव रखा जिसके आधार पर युद्ध बन्द कर दिया गया। दोनों पक्षों के बीच 1783 ई0 में वर्साय की संधि सम्पन्न हुई। इस संधि के अनुसार संयुक्त राज्य अमेरिका के रूप में एक नवीन राष्ट्र को मान्यता प्रदान की गयी । अमेरिका स्थित ब्रिटिश उपनिवेशों से इंग्लैण्ड का अधिपत्य समाप्त हो गया। फ्रांस को इस संधि से विशेष उल्लेंखनीय लाभ नहीं मिला, परन्तु फ्रांस को भारत में उसकी बस्तियाँ वापस मिल गयी। सप्तवर्षीय युद्ध की समाप्ती के समय ब्रिटेन और फ्रांस के मध्य जो औपनिवेशिक सन्तुलन स्थापित हो गया था, उसमें किसी प्रकार का कोई परिवर्तन नहीं किया गया। इस संधि की उपलब्धि पर प्रकाश डालते हुए फर्डिनेण्ड शेविल (Ferdemand Schevil) ने लिखा है ''पेरिस की द्वितीय संधि की मुख्य स्मरणीय विशेषता यह है कि विद्रोही उपनिवेशों को संयुक्त राज्य अमेरिका के रूप में मान्यता प्राप्त हो गयी' इस प्रकार विश्व के मंच पर एक नवीन राष्ट्र का उदय हुआ''।

इस संधि को कुछ मुख्य बिन्दुओं के द्वारा समझा जा सकता है।

(क) इंग्लैण्ड ने 13 अमेरिकी बस्तियों की स्वतत्रंता को मान्यता प्रदान कर दी। इस नये राष्ट्र संयुक्त राष्ट्र अमेरिका को अलगानी पहाड़ों और मिसिसिपी नदी के बीच के अंग्रजी क्षेत्र भी सौंप दिये गये।

(ख) फ्रांस को इंग्लैण्ड से वेस्टइंडीज में सेंट लूसिया, टोबागो, अफ्रीका में सेनीगाल व गोरी तथा भारत के कुछ क्षेत्र प्राप्त हुए।

(ग) इंग्लैण्ड व हॉलैण्ड में युद्ध पूर्व स्थिति वापस लायी गयी।

(घ) स्पेन को फ्लोरिडा तथा भू–मध्य सागर में माइनारका का टापू मिला।

(ड़) नए अमेरिकी राष्ट्र की सीमा ओहायो नदी के साथ–साथ तय की गयी।

10.5.2 अमेरिका का संविधान

पेरिस संधि के बाद अमेरिकी राज्यों में आपसी मतभेद उभरने लगे, परन्तु कुछ समय बाद इन मतभेदों को सुलझा लिया गया, जिसके फलस्वरूप अमेरिकी संविधान पर 17 सितम्बर 1787 को 55 व्यक्तियों द्वारा हस्ताक्षर किये गये और यह संविधान 21 जून 1788 से लागू किया गया। इस संविधान के तहत अमेरिका में गणतंत्र की स्थापना की गयी तथा संघ पद्धति स्वीकार की गयी जिसके अन्तर्गत शक्तियों का विभाजन संघीय और राज्य सरकारों के बीच किया गया। नए संविधान में अमेरिका के नागरिकों को अनेक अधिकार दिये गये, जिनमें प्रमुख अधिकार थे– भाषण, प्रकाशन और धर्म की स्वतंत्रता, कानून के अनुसार न्याय प्राप्त करने का अधिकार। नए संविधान में किसी भी व्यक्ति का कानूनी प्रक्रिया के अतिरिक्त जीवन, सम्पत्ति और स्वतंत्रता से वंचित न रखे जाने की गारण्टी दी गयी। संविधान के अनुसार मार्च 1789 में नयी सरकार का गठन हुआ, जिसका प्रथम राष्ट्रपति जार्ज वाशिंगटन को बनाया गया।

10.5.3 अंग्रेजों की असफलता के कारण

यद्यपि इंग्लैण्ड विशाल साम्राज्य का स्वामी था, उसके पास एक अजेय जल सेना थी, आधुनिक अस्त्र–शस्त्र, प्रशिक्षित सेना एवं अनुभवी सेनानायक थे। लगभग सभी सामरिक स्थानों पर अंग्रेज छावनियाँ थी, किन्तु इसके विपरित जार्ज वाशिंगटन की सेना बहुत छोटी थी। किसी भी समय पर जार्ज वाशिंगटन युद्ध भूमि पर चार हजार हथियारबंद सिपाहियों से अधिक नहीं जुटा पाया। अंग्रजों की असफलता के कारणों में से एक कारण यह भी माना जा सकता है कि इंग्लैण्ड की युद्ध नीति तय करने वालों ने अमेरिकी शक्ति का ठीक अनुमान नहीं लगाया। उन्हें अपनी शक्ति पर ज्यादा ही भरोसा था। जो उनकी असफलता के कारणों में से एक था जैसा एलन नेव्हिन्स एवं हैनरी स्टील कोमेगर लिखते हैं– ''देश भक्तों का सुसंगठित और टोरी या वफादार लोगों का आव्यवस्थित होना'' इंग्लैण्ड की असफलता का कारण माना जा सकता है। इंग्लैण्ड से अमेरिका तीन हजार मील की दूरी पर स्थित है यातायात के साधनों के अभाव ने इस दूरी को और अधिक बढ़ाया, जिससे सैनिक सहायता पहुँचाना बहुत मुश्किल कार्य था। स्थिति और अधिक कठिन उस समय हो गयी, जब फ्रॉस व स्पेन की नौ–सेनाओं ने अटलांटिक महासागर पर अंग्रेजी रसद पूर्ती रेखा को भंग कर दिया। स्थल पर भी अंग्रेजी सेना स्थानीय सहयोग के अभाव में काफी बड़ी कठिनाई में पड़ गयी। इसके अलावा युद्ध के केन्द्र भी लगभग एक हजार मील के घेरे में फैले हुए थे। उपनिवेशवासी अपनी धरती की भौगौलिक स्थिति से पूर्ण रूप से परिचित थे, इसलिए युद्ध के दौरान उन्हें किसी विशेष कठिनाई का सामना नही करना पड़ा, जबकि अंग्रेज विदेश में लड़ रहे थे। इस क्रान्ति में जार्ज तृतीय एक एसा शासक था जिसमें स्थिति की गंभीरता और दूसरों की योग्यता को परखने की शक्ति नहीं थी वह अपने पूर्वज जार्ज प्रथम व द्वितीय की भांति नाम मात्र का शासक था 1760 से लेकर उस समय तक जितने भी मंत्रिमण्डल बनें उन सबके पीछे वस्तुतः वही काम कर रहा था इसलिए सरकार की नीतियों में कोई तालमेल नही था। एक ओर ग्रेनविल की सरकार ने स्टाम्प एक्ट लागू किया तो दूसरी ओर राकिंघम की सरकार ने उसे वापस ले लिया। डिक्लेमेटरी ऐक्ट 1766 बनाकर जहाँ एक ओर यह घोषणा की गयी थी कि इंग्लैण्ड की संसद को अमेरिकी लोगों पर कर लगाने का अधिकार है वहाँ दूसरी ओर यह भी घोषणा की गयी की ऐसे कर लगाना अनुचित होगा। टाउनशिप ने जिन पाँच वस्तुओं पर कर लगाये वे किसी समुचित योजना के तहत नही थे। अतः उनका विरोध हुआ और कालान्तर में चाय को छोड़कर अन्य वस्तुओं पर से कर हटाने पड़े। जार्ज तृतीय ने यह मानकर भूल की कि लड़ाई जल्द ही समाप्त हो जायेगी और उन्हें विजयश्री मिलेगी। उसका अनुमान था कि फ्रांस के साधन शीघ्र ही जवाब दे जाएंगे किन्तु उसे यह मालूम नही था कि फ्रांस के आर्थिक साधनों के जवाब देने से पूर्व ही इंग्लैण्ड लड़खड़ा जायेगा। सच पूछों तो सरकार के पास न तो कोई नीति थी और न ही कोई योजना किन्तु इस सब के बावजूद क्रान्ति की सम्पूर्ण जिम्मेदारी जार्ज तृतीय पर नही डाली जा सकती क्योंकि समस्याएं उसने पैदा नही की थीं, वह पहले से ही चली आ रही थीं। अमेरिकी उपनिवेशों में रहने वाले लोगों में पिछले कई वर्षों से असंतोष चला आ रहा था जिसके एकाधिक कारण थे, जैसे तत्कालीन व्यापार प्रणाली, आर्थिक शोषण जातीय भेदभाव, शासन की दूषित एवं साम्राज्यवादी प्रवृत्ति। इंग्लैण्ड की सरकार उनकी अनदेखी करती रही। समय गुजरने पर यह एक पैचीदा समस्या बन गयी दुर्भाग्य से इस जटिल समस्या का सामना भी जार्ज तृतीय जैसे अयोग्य शासक को करना पड़ा।

10.5.4 इंग्लैण्ड के सेनानायकों व सैनिकों की अकुशलता

उपनिवेशवासियों की सफलता के कारणों में इंग्लैण्ड के अकुशल सेनानायकों तथा सैनिकों का बड़ा योगदान रहा। इसके अतिरिक्त उपनिवेशों से लड़ रही अंग्रेजी सेना व यूरोप के भाडे के सिपाहियों से कोई आशा नही की जा सकती थी। अंग्रेज सेनानायकों ने भी अनेक भूलें कीं। सेनानायक बुर्गोयन एक आरामतलब स्वभाव का व्यक्ति था, जिसने अनेक बार हाथ में आये अवसरों को खोया एवं कभी पूरी निष्ठा के साथ अपने कर्तव्यों का पालन नही किया। इसके अतिरिक्त अंग्रेज सेना छापामार युद्ध से निपटने में योग्य नही थी और अमेरिकी युद्ध मुख्यतः इस पद्धति से लड़ा गया। वास्तव में जार्ज वाशिंगटन को केवल कुछ सामरिक केन्द्रों की

सुरक्षा करनी पड़ी जबकि कार्नवालिस को एक पूरे महाद्वीप को जीतना था। लार्ड नार्थ व जार्ज तृतीय ने इस अंतर को ठीक से नही समझा जो आगे चलकर अंग्रेजी शासन की असफलता का कारण बना।

10.5.5 क्रान्ति का स्वरूप

अमेरिकनों ने अपनी क्रान्ति के स्वरूप पर लम्बा वाद–विवाद किया। इस प्रश्न पर भी विचार हुआ कि यह वास्तविक क्रान्ति थी या नहीं। कतिपय विद्वानों के अनुसार क्रान्ति इसकी मांगों के सन्दर्भ में रूढ़ीवादी एवं सुरक्षात्मक थी तथा यह मांगें अग्रेजों के दृष्टिकोण से परम्परागत उदारता की परिचायक थीं। यद्यपि अमेरिकन अंग्रेजों के विरूद्ध संगठित थे अन्यथा वे संतुष्ट लोग थे। इसके विपरित अन्य विद्वानों के मत में अमेरिकन क्रान्ति उग्र सुधारवादी थी। इसने लोगों को देशभक्त एवं वफादार दो पक्षों में बांट दिया और इस आधार पर देश को विभक्त कर दिया गया। क्रान्ति ने अपने उद्देश्यों को प्राप्त कर लिया यह उतने ही प्रगतिशील थे, जितने कुछ वर्षों बाद होने वाली फ्रॉसीसियों की महान क्रान्ति के थे। क्रान्ति के सन्दर्भ में कुछ इतिहासकारों का यह कहना है कि यह तो परिवर्तन विरोधी तथा निवारक आन्दोलन मात्र थी। जार्ज बानफ्रोफ्ट अपनी कृति हिस्ट्री ऑफ द यूनाइटेड स्टेटस में लिखते है कि ''यह तो एक ऐसी क्रान्ति थी जिसकी सफलता इतनी सुखद शान्ति के साथ प्राप्त कर ली गई कि परिवर्तन विरोधी भी इसकी निन्दा करने में हिचके'' कुछ इतिहासकार इसे लोकतन्त्र का संघर्ष ही नही मानते। उनका कहना है कि अमेरिका में तो इससे पूर्व भी प्रजातन्त्र विद्यमान था। प्रमाण में वे कहते हैं कि मेसाचूसेट्स में 95 प्रतिशत पुरूष अपना मत देने के अधिकारी थे। इसलिए जे0 एफ0 जेमसन ने इसे एक सामाजिक आन्दोलन बताया है। 1800 ई0 में फ्रेडरिक जेनटेन ने बर्लिन से प्रकाशित अपनी एक पत्रिका में यह मत प्रकट किया है कि अमेरिका का विद्रोह तो केवल अंग्रजों द्वारा उनके स्वीकृत अधिकाशों पर किये जाने वाले अतिक्रमण के विरूद्ध एक संघर्ष मात्र था। इस सबसे किसी को यह आभास नही मिल सकता है कि अमेरिका की क्रांति से अमेरिका की राजनीति में विशेष परिर्वन नहीं हुआ, किन्तु यह अमेरिका का एक वास्तविक संघर्ष थ। आर0 आर0 पामर 'द एज ऑफ द डेमोक्रेटिक रिवोल्यूशन में इस कथन का समर्थन करते हुए लिखते है कि ''यह एक दर्दनाक संघर्ष था, जिसमें बहुमतों को चोट पहुंची थी''।

जो विद्वान इसे स्वतंत्रता संग्राम नही मानते उनका कहना है कि अमेरिका की ब्रिटिश बस्तियों के लोगों ने सर्वप्रथम स्वतंत्रता की मांग नही की थी उन्होंने तो इंग्लैण्ड की संसद द्वारा आरोपित अधिनियम का ही विरोध किया था। वे कहते है कि इंग्लैण्ड की सरकार उनके व्यापारिक विषयों में हस्तक्षेप न करें तथा उन पर किसी प्रकार का कर न लगायें। बोस्टन टी पार्टी की घटना ने उपनिवेशवासियों की उत्तेजना को जरूर अभिव्यक्त किया तथा जब कुछ लोग गोली काण्ड में मारे गये तब कुछ लोगों ने अंग्रेजी सरकार को हटाने की बात सोची थी। यह सत्य है कि सेना में मध्यम श्रेणी व कृषक वर्ग के लोगों ने अपना नाम लिखवाया था पर उन सैनिकों में उत्साह नही था तथा इकरार किये गये समय की समाप्ति के उपरान्त वे युद्ध के लिए तैयार नहीं थे। इसके अलावा अमेरिका के समस्त निवासी इंग्लैण्ड की सरकार के विरूद्ध युद्ध के लिए उद्यत नहीं थे। इसका कारण उपनिवेशवासियों का इंग्लैण्ड की सरकार के समर्थक स्वामीभक्त तथा उसके विरोध देशभक्तों में बंटा होना था। लेक्सिंगटन एवं कानकार्ड की घटनाओं ने अमेरिकावासियों में अति उत्साह का संचार जरूर किया किन्तु वे देशभक्तों समान युद्ध करने को अभी भी उद्यत नही थे। यह एक तथ्य है कि 1787 ई0 में संविधान के निर्माण हेतु फिलेडेल्फिया सम्मेलन में एकत्र 45 सदस्यों में से अधिकांश सदस्य केवल सरकार की सुरक्षा, गुलामों में व्यापार व भूमि में अभिरूची रखते थे उन्हें स्वतंत्रता से विशेष प्रयोजन नही था। यह भी कहा जाता है कि अपने देशवासियों में संघर्ष के प्रति उदासीनता देखकर ही अमेरिका ने विदेशी सहायता लेने की सोची थी। यदि फ्रांस उसकी सहायता का वचन नही देता तो संभवता है कि अमेरिका इस संघर्ष के लिए तैयार नही होता और संघर्ष प्रारम्भ होने के कुछ समय बाद बीच में ही समाप्त हो जाता। अतः यह संघर्ष शुद्धता अमेरिकावासियों का नही था बल्कि इंग्लैण्ड से शत्रुता रखने वाले अन्य राष्ट्रों का भी था जो इस बहाने इंग्लैण्ड से बदला लेना चाहते थे, इसलिए कुछ इतिहासकारें ने इसे अमेरिका का स्वतंत्रता संग्राम न कहकर यूरोप की महान शक्तियों का इंग्लैण्ड के विरूद्ध युद्ध कहा है।

10.6 अमेरिकी क्रान्ति का महत्व

विश्व इतिहास में अनेक दृष्टिकोणों से अमेरिकी स्वतंत्रता संग्राम को बड़ा ही महत्वपूर्ण माना गया है। इस क्रान्ति ने विश्व समुदाय को एक नई चेतना के रूप में उर्जा प्रदान की। इसने राज्य के दैवी अधिकार के सिद्धान्त तथा कुलीन तंत्र का अंत कर दिया। इसने जनतात्रिंक शासन प्रणाली को जन्म दिया। अमेरिका विश्व का पहला देश है जहाँ आधुनिक जनतांत्रिक शासन व्यवस्था की स्थापना की गई। यह पहला देश है, जहाँ एक लिखित संविधान और संघीय शासन व्यवस्था की नींव डाली गयी। इस क्रांति के द्वारा अमेरिका जनता को एक परिवार्तित सामाजिक अवस्था प्राप्त हुई जिसमें परम्परा धन और विशेषाधिकारों का महत्व कम था और मानवीय समानता का अधिक विशेषाधिकारों का तीन प्रमुख दिशाओं में सफल अतिक्रमण करने के पश्चात जनतन्त्र को काफी प्रोत्साहन मिला– अर्थात परम्परागत साम्पत्तिक अधिकारों की समाप्ति ,टोरियों की विशाल जायदादों का विघटन और जहां कहीं भी ऐग्लिकन चर्च के केन्द्र थे, उनकी समाप्ति 1786 ई0 में वर्जीनिया में धार्मिक स्वेच्छा आधिनियम पास हुआ। इसके अनुसार किसी भी व्यक्ति को चर्च जाने के लिए बाध्य नहीं किया जा सकता था। प्रत्येक व्यक्ति को पूजा और आराधना की पूर्ण स्वतन्त्रता दी गई संघीय संविधान में भी फेडरल कर्मचारियों के लिए किसी धार्मिक योग्यता की आवश्यकता न रही परन्तु अभी भी कई राज्यों के विधानों में धार्मिक बंधन विद्यमान थे। अब से पहले अधिक शिक्षा का महत्व अमेरिकन समाज ने समझा। क्रांति के पश्चात् स्वतन्त्र सार्वजनिक स्कूलों तथा जनसाधारण की प्रशिक्षा की मांग की गयी। यह तत्काल अनुभव किया गया कि प्रजातन्त्रीय स्वराज्य में शिक्षित मतदाताओं का होना आवश्यक है। न्यूयार्क के गवर्नर जॉर्ज विलन्टन ने 1782 ई0 में कहा था कि ''जहाँ सर्वोच्च नौकरियाँ प्रत्येक स्वाधीन राज्य की सरकार का यह विशेष कर्त्तव्य है कि उस स्तर के साहित्य का विद्यालयों तथा विशेष संस्थाओं द्वारा प्रचार होना चाहिए जो जन संस्थाओं की स्थापना के लिए आवश्यक है। अमेरिका क्रांति में यदि हम धर्म–निरपेक्ष के सम्बन्ध में बात करें तो धर्म–निरपेक्ष राज्य की स्थापना भी सर्वप्रथम अमेरिका में हुई थी। सभी को धार्मिक स्वतंत्रता प्रदान की गयी थी। अमेरिका क्रांन्ति ने भविष्य में होने वाली अनेक महान क्रांन्तियों को प्रेरणा दी। इसने उपनिवेशवाद, साम्राज्यवाद और निरकुशतंत्र को एक खुली चुनौती दी। यह एक ऐसा उदाहरण था जो बहुत दिनों तक पराधीन राष्ट्रों को प्रेरित करता रहा। प्रजातांत्रिक आदर्श की स्थापना के लिए हर देश में आन्दोंलन होंने लगे। अतः यहा कहा जा सकता है कि अमेरिका का स्वतन्त्रता संग्राम संसार के इतिहास में एक महत्वपूर्ण घटना थी। इसके द्वारा संयुक्त राज्य अमेरिका अस्तित्व में आया और वह वशांनुगत कुलीनतन्त्र को समाप्त करके गणतन्त्र की स्थापना करने वाला देश बन गया। अमेरिकी क्रान्ति ने इंग्लैण्ड को 'रक्तहीन राज्य क्रान्ति' द्वारा प्रतिपादित सिद्धान्तों का और अधिक विकास हुआ। यदि इंग्लैण्ड की क्रान्ति ने प्रतिनिधि सत्तात्मक प्रथा को जन्म दिया था, तो अमेरिकी क्रान्ति ने जनतन्त्रात्मक प्रथा को जन्म दिया, जिसमें पहली बार सर्वसाधारण को मताधिकार प्राप्त हुआ। अमेरिकी क्रान्ति को आधुनिक युग में गणतन्त्र की जननी कहा जा सकता है। इसके अतिरिक्त इस क्रान्ति के प्श्चात् ही विश्व में लिखित संविधानों की परम्पराओं का प्रचलन हुआ। संघीय शासन व्यवस्था का प्रयोग किया गया। धर्मनिरपेक्ष राज्य में रू॰ में अमेरिका आधुनिक युग में विश्व का प्रथम देश बना। इस क्रान्ति ने साम्राज्यवाद को प्रथम पराजय दी तथा राष्ट्रीयता के सिद्धान्त को मानव समाज के समक्ष रखा। अमेरिका के स्वतन्त्रता संग्राम का महत्व इंग्लैण्ड के लिए चाहे जो कुछ भी क्यों न हो, परन्तु विश्व इतिहास में यह एक महत्वपूर्ण घटना थी। धर्म–निरपेक्ष राज्य की स्थापना भी सबसे पहले अमेरिका में ही हुई। सभी को धार्मिक स्वतंत्रता प्रदान की गयी। अमेरिकी क्रान्ति ने भविष्य में होने वाली अनेक महान क्रान्तियों को प्रेरणा दी। उसने उपनिवेशवाद, साम्राज्यवाद और निरंकुशतंत्र को एक खुली चुनौती दी। यह एक ऐसा उदाहरण था जो बहुत दिनों तक पराधीन राष्ट्रों को प्रेरित करता रहा। प्रजातंत्र के आदर्श की स्थापना के लिए हर देश में आन्दोलन होने लगे।

10.7 अमेरिका के स्वतंत्रता संग्राम के परिणाम

अमेरिका के स्वतंत्रता संग्राम की घटना इंगलैण्ड एवं अमेरिका के लिए ही नहीं बल्कि सम्पूर्ण विश्व के लिए महत्वपूर्ण व शिक्षाप्रद घटना थी। लम्बे संघर्ष के बाद अमेरिका एक स्वतंत्र राष्ट्र बना था। संघर्ष के इस अवधि में तथा इसके पश्चात् विश्व की राजनीति में अनेक विस्मयकारी व महत्वपूर्ण परिवर्तन हुए। इतिहासकार ग्रीन ने ठीक ही लिखा है – ''अमेरिका के स्वतंत्र संग्राम का इंगलैण्ड की राजनीति पर चाहे कुछ भी प्रभाव रहा हो वह इतिहास की एक अद्वितीय एवं महत्वपूर्ण घटना थी''।

10.7.1 जार्ज तृतीय की निरंकुश शासन का अंत

इस युद्ध में इंगलैण्ड की असफलता ने सम्राट जार्ज तृतीय की निरंकुश सत्ता को समाप्त कर दिया। इस घटना से पूर्व ब्रिटिश सम्राट, मन्त्रीमंडल व संसद को अपनी इच्छापूर्ति का साधन मात्र समझता था, किन्तु अब जार्ज तृतीय के व्यक्तिगत शासन का अंत हो गया तथा उसके स्थान पर मंत्रीमण्डलीय व्यवस्था और दलीय शासन प्रारम्भ हुआ। यह निश्चत है कि यदि अमेरिका के स्वतंत्र संग्राम का अंत इंगलैण्ड के लिए हानिकारक नहीं होता, तो जार्ज तृतीय का व्यक्तिगत व निरंकुश शासन स्थिर हो जाता और वहां पर संसदीय शासन प्रगति में अवरोध उत्पन्न हो जाता।

10.7.2 इंगलैण्ड द्वारा नवीन उपनिवेशों की स्थापना

अमेरिका के सभी 13 उपनिवेश इंगलैण्ड के अधिकार से निकल जाने के कारण इंगलैण्ड की औपनिवेशिक साम्राज्य तथा व्यापारिक प्रतिष्ठा को गहरा धक्का लगा। इस प्रतिष्ठा को पुनः अर्जित करने, विश्व की राजनीति में महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त करने तथा अपने व्यापारिक हितों की सुरक्षा करने के लिए इंग्लैण्ड में नवीन क्षेत्रों की खोज करने तथा वहां पर अपने उपनिवेश स्थापित करने का निर्णय लिया। आस्ट्रेलिया तथा अन्य में ब्रिटिश उपनिवेशों की स्थापना इसी निर्णय के परिणाम स्वरूप की गयी।

10.7.3 इंगलैण्ड की परम्परागत औपनिवेशिक नीति में परिवर्तन

अमेरिका के स्वतंत्रता संग्राम में मिली असफलता से ब्रिटिश सरकार ने शिक्षा प्राप्त की थी। उसे उपनिवेशों की प्रति अपनी त्रुटिपूर्ण नीति का अनुभव हुआ। ब्रिटेन के उपनिवेश सम्पूर्ण संसार में फैले हुये थे तथा ये उपनिवेश ब्रिटिश अर्थ व्यवस्था के आधार स्तम्भ थे। अतएव ब्रिटिश सरकार ने उपनिवेशों के संबंध में अपनी परम्परागत हटधर्मीपूर्ण व निरंकुश नीति को बदलने तथा उसके स्थान पर भ्रातृत्व भावना से युक्त सहानुभूतिपूर्ण व उदार नीति अपनाने का संकल्प लिया। अमेरिकी उपनिवेश के हाथ से निकल जाने से इंग्लैण्ड को यह शिक्षा मिली की वह अपने अन्य उपनिवेशों की जनता के अधिकारों और मांगों का सम्मान करते हुए उनके प्रति उदार व सहानुभूतिपूर्ण नीति का पालन करे। इंग्लैण्ड इस बात को भली–भांति समझता था कि उपनिवेशों की जनता इंगलैण्ड के स्वार्थों के लिए अपने हितों का बलिदान नहीं कर सकती। यदि इन उपनिवेशों को अपने साथ रखना है तो उसके साथ उदारता व सहानुभूतिपूर्ण व्यवहार करना पड़ेगा। संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि अमेरिका के स्वतंत्रता संग्राम के पश्चात् ब्रिटेन ने अपनी परम्परागत उपनिवेशिक नीति को समाप्त कर दिया जिससे यह समझा जाता था, कि उपनिवेश केवल इंगलैण्ड के स्वार्थों की पूर्ति का साधन मात्र है। फलस्वरूप उन्नीसवीं तथा बीसवीं शताब्दी में ब्रिटिश सरकार ने उपनिवेशों के प्रति अत्यन्त उदारनीति को अपनाया तथा उसके साथ सहयोग तथा स्वशासन के आधार पर ब्रिटिश राष्ट्र मंडल (British Common Wealth of Nations) की स्थापना की।

10.7.4 आयरलैण्ड की जनता के अधिकारों में वृद्धि

आयरलैण्ड की राजनीतिक, धार्मिक, संवैधानिक स्थिति पर भी अमेरिका के युद्ध का व्यापक प्रभाव पड़ा। आयरलैण्ड की जनता भी अपने अधिकारों के लिए हेनरी ग्रेट के नेतृत्व में संघर्ष कर रही थी। वहां रोमन कैथोलिकों की संख्या अधिक थी जिन्हें किसी प्रकार के राजनीतिक अधिकार प्राप्त नहीं थे। आयरलैण्ड की अलग संसद थी, किन्तु उसके ऊपर ब्रिटिश सरकार सदैव अनुचित व वैधानिक नियंत्रण रखता था। अमेरिका

की जनता द्वारा स्वाधीनता की घोषणा करने तथा मुक्ति संग्राम प्रारम्भ करने से आयरलैण्ड की जनता का उत्साह बढ़ गया। उसने भी वैधानिक अधिकारों की मांग की। 1782 में इंगलैण्ड की सरकार ने आयरलैण्ड की संसद को विधि निर्माण का अधिकार दे दिया। 1800 ई0 में यूनियन एक्ट पारित करके आयरलैण्ड की संसद को ब्रिटिश संसद में विलय कर दिया गया।

10.7.5 फ्रांस की राजनीति पर प्रभाव

इतिहासकार हेज ने लिखा है कि ''स्वतंत्रता की यह मशाल जो अमेरिका में प्रज्ज्वलित की गई थी तथा जिसके फलस्वरूप वहां पर राजतंत्र की स्थापना हुई थी, फ्रांस की सीमा में भी प्रवेश कर गयी तथा उसने फ्रांस की जनता के विचारों को प्रभावित कर उसे क्रान्ति करने की प्रेरणा प्रदान की थी' फ्रांसिसी जनता भी अमेरिका के भांति स्वतंत्र होना चाहती थी''। वास्तव में अमेरिकी स्वतंत्र संग्राम की घटना ने फ्रांस के राजनीतिक जीवन में क्रान्तिकारी परिवर्तन ला दिया था। इस युद्ध में फ्रांस ने अपने सैनिकों को इंग्लैण्ड के विरूद्ध तथा अमेरिका के स्वतंत्रता सेनानियों के समर्थन में लड़ने के लिए भेजा था। युद्ध काल में इन सैनिकों के हृदय व मस्तिष्क पर स्वतंत्रता, राष्ट्रीयता, समानता, व जनतंत्र की भावनाओं का गहरा प्रभाव पड़ा। फ्रांस की जनता ने तत्कालीन बूर्वो वंश के निरंकुश शासन को उखाड़ फेकने का मन बना लिया था। वेबस्टर के शब्दों मे ''अमेरिका की क्रान्ति विश्व के देशों, विशेषकर यूरोप के देशों की ऑखें खोलने वाली घटना थी। इसने फ्रांस की राजक्रान्ति के लिए नेता प्रदान किये'।

10.8 सारांश

संक्षेप में हम यह कह सकते हैं कि अमेरिका की क्रान्ति आधुनिक राष्ट्रीयता का जनक सिद्ध हुई। इसने उपनिवेशवाद के विरूद्ध लोगों को प्रेरित किया तथा उनमें राष्ट्रीयता एवं समानता की भावना भर दी। अमेरिकी क्रान्ति ने साम्राज्यवाद पर पहली करारी चोट की। अमेरिकी ने संघर्ष कर अपनी स्वतंत्रता प्राप्त की इससे दूसरे देश की जनता भी प्रभावित हुई। अब वह अन्य पराधीन देशों के लिए प्रेरणा का स्रोत बन गया। भविष्य में इसने निरंकुश राजतंत्र और सामन्तवाद का अन्त करने को भी प्रोत्साहन दिया। इस घटना ने नई दुनिया में एक नये युग का दिया और पुरानी दुनिया के लिए भी एक नये युग का मार्ग प्रशस्त कर दिया। अब स्वतंतत्रा एवं प्रजातांत्रिक आदर्शों की स्थापना के लिए अनेक देश व्याकुल हो उठे।

10.9 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

जैन एवं माथुर –	विश्व का इतिहास (1500–1950)
पारसार्थी गुप्ता –	विश्व का इतिहास
दीनानाथ वर्मा एवं शिव कुमार –	विश्व इतिहास का सर्वेक्षण
कैलेश्वर राय –	विश्व का इतिहास
खुराना एवं शर्मा –	विश्व का इतिहास
वी0बी0 सिन्हा –	आधुनिक विश्व का इतिहास

10.10 अभ्यासार्थ प्रश्न

- अमेरिकी क्रान्ति के कारणों एवं प्रभावों की समीक्षा कीजिये।
- अमेरिकी क्रान्ति ने विश्व समुदाय को किस प्रकार प्रभावित किया।
- अमेरिकी क्रान्ति के तात्कालिक कारणों पर प्रकाश डालिये।
- अमेरिकी स्वतंत्रता संग्राम में जार्ज वाशिंगटन की भूमिका का वर्णन कीजिये।
- अमेरिकी क्रान्ति के परिणामों का उल्लेख कीजिये।
- अमेरिकी क्रान्ति के आदर्श वाक्य क्या थे ? समीक्षा कीजिये।